रात के राही

अंतर्भारतीय पुस्तकमाला

रात के राही

करमजीत सिंह कुस्सा

अनुवादक

गुलवंत फारिग



नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

ISBN 81-237-1008-9

पहला संस्करण : 1994 (शक 1916)

Original Title : Raat De Rahi *(Punjabi)*
Hindi Translation : Raat Ke Rahi

रु. 40.00

निदेशक, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, ए-5 ग्रीन पार्क,
नयी दिल्ली - 110 016 द्वारा प्रकाशित

भूमिका

उपन्यास. आधुनिक काल में विकसित साहित्य की एक नवीन और महत्वपूर्ण विधा है। कथा-साहित्य की एक विलक्षण बानगी के तौर पर विकसित इस रूप को, आधुनिक युग का महाकाव्य भी कहा जा सकता है, क्योंकि यह समकालीन समाज तथा संस्कृति में जी रहे मनुष्य के समस्याग्रस्त अस्तित्व का जिस तरह विस्तृत विश्लेषण करता है, वह शास्त्रीय महाकाव्य की विधि से मेल खाता है। अंतर केवल इतना है कि जहां शास्त्रीय महाकाव्य किसी आदर्श या सांस्कृतिक नायक की गौरव-गाथा का बयान करता है, वहां उपन्यास साधारण मनुष्य की साधारणता में निहित मानवता के नयन-नक्श तलाशने का प्रयास करता है। कथा-विधि के आधार पर उपन्यास को पूर्व-प्रचलित कथा रूपों से सहज ही पृथक किया जा सकता है। मानव जाति के अब तक के इतिहास में कथा-वृतांत के अनेक रूप सामने आये हैं जिनका क्षेत्र आदिम कबीलों तथा प्राचीन संस्कृतियों के मौखिक या लिखित या लिखित पौराणिक विरासत से लेकर, कथा-साहित्य के आधुनिकतम रूपों तक फैला हुआ है। उपन्यास की कथा-विधि मुख्यतः अनुकरणीय होती है जो पूर्व-प्रचलित पौराणिक कथा (मिथ) और रोमांस की कथा-विधि से मौलिक रूप से भिन्न है। उपन्यास में न तो पौराणिक कथा की भांति किसी दैवी शक्ति की अलौकिक कथा कही जाती है, जिसे केवल विश्वास के स्तर पर ही ग्रहण किया जाय और न ही रोमांस कथा की तरह इसमें किसी आदर्श नायक का वृतांत प्रस्तुत किया जाता है। यह तो साधारण व्यक्तियों को सामाजिक संस्थाओं, रिश्ते-नातों और मूल्यों के वास्तविक संसार से संबद्ध करके पेश करता है।

ज्ञान विज्ञान के तीव्र विकास के कारण, औद्योगिक क्रांति का स्वरूप सामने आया।. इसी दौर में विश्व-साहित्य में उपन्यास के रूप का जन्म सबसे पहले पश्चिम मे हुआ। यह दौर सामाजिक-आर्थिक दृष्टि से जागीरदारी व्यवस्था के विघटन और पूंजीवादी व्यवस्था के उत्थान का दौर था जिसने न केवल मनुष्य के सामाजिक व्यवहार को प्रभावित किया बल्कि जीवन तथा यथार्थ के बारे में एक नयी चेतना और संवेदना को भी जन्म दिया। यथार्थ के संदर्भ में यह नयी चेतना और संवेदना मध्यकालीन विश्व -दृष्टि से मौलिक रूप में भिन्न और विलक्षण थी। जहां मध्यकालीन विश्व-दृष्टि जीवन और जगत की व्याख्या "ईश्वर" या 'दैवी सत्ता" को केंद्र में रखकर करने की ओर थी, वहां मानव-केंद्रित एक नूतन.आधुनिक विश्व-दृष्टि सामने आयी। इस विश्व-दृष्टि ने यथार्थ की वास्तविकता से सरोकार जोड़ने वाले यथार्थ-बोध को उत्साहित किया। आधुनिक साहित्य के अनेक रूपों की भांति उपन्यास भी, इसी यथार्थवादी प्रवृत्ति की उपज के रूप में स्वीकार किया जा सकता है।

पंजाबी में उपन्यास-लेखन का आरंभ अन्य आधुनिक भारतीय भाषाओं की भांति पश्चिमी साहित्य तथा संस्कृति के प्रभाव से ही हुआ। उपन्यास के सामने आने से पूर्व पंजाबी में कथा-वृतांतक रचनाएं, लोक-कथाओं, किस्सों, वीर-काव्यों आदि के रूप में मौजूद थीं जो कथा-विधि की दृष्टि से रोमांस साहित्य के अधिक निकट दिखाई देती हैं। भाई वीर सिंह रचित *सुन्दरी* **(1872)** पंजाबी भाषा में प्रकाशित प्रथम मौलिक उपन्यास है। किसी अज्ञात ईसाई मिशनरी का लिखा एक उपन्यास *ज्योतिरउध* इससे कुछ वर्ष पूर्व अवश्य प्रकाशित हुआ, परंतु इस उपन्यास के मौलिक होने पर संदेह है। पुस्तक पाठावलोकन से यह किसी बंगला उपन्यास का अनुवाद प्रतीत होता है। इस उपन्यास की कथावस्तु, बंगाल के हिन्दू समाज तथा संस्कृति में प्रचलित धार्मिक कुरीतियों, निरक्षरता, भ्रांतियों और वहमों-भ्रमों पर वयंग्य करती हुई, ईसाई धर्म और अंग्रेजी संस्कृति की उत्कृष्टता सिद्ध करने का प्रयास करती है। भाई वीर सिंह के उपन्यास *सुन्दरी, बिजय सिंह, सतवन्त कौर* आदि परोक्ष रूप से *ज्योतिरउध* के मॉडल के अनुसार ही रचे गये प्रतीत होते हैं। अंतर केवल इतना है कि इन उपन्यासों की कथा-वस्तु सिंध सभा लहर के उद्देश्यों की पूर्ति करना चाहती है। सिंध सभा लहर मूल रूप में ईसाई मिशनरियों के धर्म-प्रचार की प्रतिक्रिया के तौर पर उभरी धार्मिक पुनर्जागृति की लहर थी जिसका उद्देश्य सिक्ख धर्म की गौरवशाली ऐतिहासिक विरासत को पुनर्जीवित करना था। भाई वीर सिंह ने उपन्यास के भीतरी रचनात्मक संगठन के बजाए, केवल इसके बाहरी तत्वों के सृजन को ही आधार बनाया। उसके उपन्यास समकालीन सामाजिक समस्याओं से दो-चार होने के बजाए सिक्ख धर्म के अतीत कालीन **18** वीं शताब्दी के ऐतिहासिक गौरव को ही चित्रित करते हैं, इसलिए उन उपन्यासों को ऐतिहासिक रोमांस की संज्ञा भी दी जाती है।

भाई वीर सिंह के आरंभिक उपन्यास लेखन के साथ ही, पंजाबी उपन्यास की शुरुआत होती है। तब से लेकर अब तक पंजाबी उपन्यास अपने विकास की विभिन्न अवस्थाओं से गुजरा है। इसका प्रथम पड़ाव धार्मिक प्रेरणा और सामाजिक सुधार वाली औपन्यासिक रचनाओं का पड़ाव था जिसमें भाई मोहन सिंह वैद जैसे उपन्यासकारों के नाम लिये जा सकते हैं। इन उपन्यासकारों ने समकालीन सामाजिक तथा धार्मिक स्थिति को जोड़कर सुधारवादी स्वर वाले उपन्यासों की रचना की। उदाहरण के रूप में भाई मोहन सिंह वैद रचित उपन्यास *इक्क सुखी घराना, सुखी परिवार, दम्पत्ति प्यार* और चरण सिंह शहीद रचित *दलेर कौर, चंचल मूर्ति, दो वौहटियां।*

पंजाबी उपन्यास के विकास का दूसरा महत्वपूर्ण पड़ाव नानक सिंह से शुरू होता है। उसने बनावटी किस्म के सुधारवाद को त्याग कर समकालीन समाज के यर्थावादी मसलों के साथ सरोकार जोड़ने का प्रयत्न किया। नानक सिंह के कई उपन्यास --*चिट्टा लहू, पवित्र पापी, आदमखोर, नासूर, इक्क म्यान दो तलवारां* आदि तो पंजाबी औपन्यासिक परंपरा में नये मील पत्थर सिद्ध हुए हैं। नानक सिंह के अधिकतर उपन्यास पंजाब के शहरी मध्य वर्ग की समस्याओं को प्रस्तुत करते हैं। इन उपन्यासों के नायक पतनशील समाज में प्रमाणिक जीवन-मूल्यों की तलाश करते नजर आते हैं। कथा-सृजन की कलात्मक

विधियों का प्रयोग करने के साथ-साथ, नानक सिंह ने अपने उपन्यासों में चरित्र-चित्रण की नयी विधियों पर सफलता पूर्वक हाथ आजमाया जिसके परिणामस्वरूप पंजाबी उपन्यास को एक पक्का आधार प्राप्त हो गया।

नानक सिंह की उपन्यास-रचना का मूल स्वभाव आदर्शवादी था जिसे उसके आरंभिक समकालीन उपन्यासकारों ने भी एक रचनात्मक मॉडल के रूप में अपनाया। आदर्शवाद के विपरीत यर्थावाद की ओर मोड़ काटने वाला उपन्यासकार है सुरिन्दर सिंह नरूला, जिन्होंने *प्यो-पुत्तर* (1946) उपन्यास में, जीवन की वास्तविकता के निकट रहकर औपन्यासिक जगत की रचना की। नरूला के अन्य उपन्यास हैं *दीन दुनिया, सिल्ल अलूणी, लोक दुशमण, दिल दरिया* इत्यादि। इन उपन्यासों में नरूला ने नानक सिंह की तरह शहरी मध्यवर्ग की समस्याओं का चित्रण तो किया है परंतु उसके आदर्शवाद को त्याग कर यथार्थवादी उपन्यास की परंपरा स्थापित करने का प्रयास किया है।

जसवंत सिंह कंवल पंजाबी उपन्यास-रचना में इस लिहाज से विलक्षण स्थान रखते हैं। उनके उपन्यासों *सच्च नूं फांसी, पाली, पूर्णमाशी, रात बाकी है* इत्यादि में पंजाब के ग्रामीण जीवन का यथार्थ प्रवेश करता है। कंवल ने समाजवादी विचारधारा तथा प्रगतिवादी साहित्य-चिंतन के आदर्श को समर्पित होकर अपने उपन्यासों की रचना की, जिसमें पंजाबी उपन्यास एक नयी दिशा ग्रहण करता है। इसी दौरान कुछ और सामर्थ्यवान उपन्यासकार भी उभर कर सामने आये हैं जिन्होंने अपने-अपने अंदाज में पंजाबी उपन्यास की परंपरा को समृद्ध बनाने के प्रयत्न किये। इन उपन्यासकारों में विशेष तौर पर उल्लेखनीय हैं। कर्तार सिंह दुग्गल और नरिन्द्रपाल सिंह । दुग्गल ने शहरी मध्य वर्ग की मानसिक तथा भावात्मक समस्याओं का गहन चित्रण करने में खास दिलचस्पी दिखायी है और नरिन्द्रपाल सिंह ने ऐतिहासिक उपन्यास की विधा को विकसित करने का प्रयास किया है।

पंजाबी उपन्यास के क्षेत्र में तीसरा महत्वपूर्ण पड़ाव गुरदियाल सिंह के उपन्यास लेखन के साथ शुरू होता है। उसका 1964 में प्रकाशित *मढ़ी दा दीवा* नामक उपन्यास एक नया मील पत्थर सिद्ध हुआ। इस उपन्यास के साथ पंजाबी में आंचलिक उपन्यास की परंपरा का प्रारंभ होता है। गुरदियाल सिंह ने पारंपरिक उपन्यासों की लकीर से हट कर, आर्थिक दृष्टि से दबे-कुचले और सामाजिक अन्याय को सहन करते साधारण लोगों की अस्तित्वपरक समस्याओं के साथ अपने उपन्यासों का सरोकार जोड़ा।

गुरदियाल सिंह के उपन्यास *मढ़ी दा दीवा, अणहोए, अधचानणी रात, अन्नहे घोड़े दा दान* इत्यादि—मालवे की आंचलिकता को पृष्टभूमि में रख कर, भूमिहीन किसानों और मजदूरों के जीवन-संघर्ष को प्रस्तुत करने का सफल प्रयास करते हैं।

पंजाबी साहित्य में, स्त्री की स्थिति का विश्लेषण तो बेशक मर्द लेखकों ने भी किया है लेकिन इस समस्या को कई स्त्री उपन्यासकारों ने विशेष रूप में पेश करने का प्रयत्न किया है। दलीप कौर टिवाणा का उपन्यास *इह हमारा जीवणा* इस दिशा में पहला कदम था। इसके पश्चात टिवाणा के अन्य उपन्यास *पैडचाल, हस्ताखर, पीले पत्तियां दी दास्तान, तीली दा निशान* इत्यादि सामने आये। अमृता प्रीतम और अजीत कौर के उपन्यासों में भी

स्त्री की स्थिति तथा मनःस्थिति का भरसक विवरण दृष्टिगोचर होता है। अमृता प्रीतम के उपन्यासों में समाज के हाथों पीड़ित होने के बावजूद स्त्री पात्र पूरी तरह दया के पात्र नहीं बनती बल्कि अपने गौरव को पहचानने को उन्मुख होती है। इसी तरह अजीत कौर के कथा-जगत में भी घटित होता है।

करमजीत सिंह कुस्सा ने अपनी उपन्यास-यात्रा 1975 में *बुरके वाले लुटेरे* उपन्यास से शुरू की। उपन्यास लेखन की दृष्टि से कुस्सा गुरदियाल सिंह की परंपरा के अनुयायी हैं, क्योंकि वे भी ग्रामीण जीवन के यथार्थ को मालवे की आंचलिकता के संदर्भ में चित्रित करने की कोशिश करते हैं। करमजीत सिंह कुस्सा के अन्य उपन्यास हैं-- *रात दे राही* (1977), *रोही बीयाबान* (1983) और *अग्ग दा गीत* (1985) कुस्सा के उपन्यास भूमिहीन किसानों ग्रामीण मजदूरों और श्रमिकों और निम्न किसान-वर्ग की समस्याओं से संबद्ध है। इन उपन्यासों में आर्थिक संकट से सबंधित सामाजिक और सांस्कृतिक मसलों का भरपूर विश्लेषण उपलब्ध है। उदाहरण के तौर पर *अग्ग दा गीत* नामक उपन्यास दलित वर्ग के अमानवीय शोषण को साकार करने के साथ-साथ इस वर्ग की मानसिक तथा भावात्मक समस्याओं की भी गहराई से छान-बीन करता है। कुस्सा ने इन सारे दृश्यों को पंजाब के परंपरागत सांस्कृतिक वातावरण में रख कर निर्मित किया है, जिससे यह उपन्यास आंचलिक उपन्यास की विधि को सफलता पूर्वक अभिव्यक्त करता प्रतीत होता है। इसी प्रकार कुस्सा के अन्य उपन्यास भी निम्न वर्ग के किसानों के कटोर जीवन संघर्ष को प्रस्तुत करने का प्रयास करते हैं। इन उपन्यासों में मलवई उपभाषा और आंचलिक उपसंस्कृति को कथा-रचना का आधार बनाया गया है। इस प्रकार करमजीत सिंह कुस्सा, गुरदिगाल सिंह द्वारा स्थापित आंचलिक उपन्यास की परंपरा से संबद्ध है। कुस्सा के उपन्यास स्त्री-पुरष संबंधों की सूक्ष्म तथा बेबाक अभिव्यक्ति द्वारा, इस परंपरा को नया विस्तार भी प्रदान करते हैं।

रात के राही करमजीत सिंह कुस्सा का इसी परंपरा के अंतर्गत रचा गया एक महत्वपूर्ण उपन्यास है। यह उपन्यास आंचलिक उपन्यास के प्रतिमान को सफलतापूर्ण निभाते हुए ग्रामीण जीवन के सामाजिक तथा सांस्कृतिक यथार्थ का विश्लेषण करने का एक यत्न कहा जा सकता है। इस उपन्यास का केंद्रीय विषय-वस्तु पंजाब के निम्न किसान-वर्ग की दिन प्रतिदिन की अधोगति की ओर जा रही आर्थिक अवस्था से संबंधित विपत्ति तथा दुःख क्लेश के इर्द-गिर्द घूमी है। उपन्यास का मुख्य पात्र, केवल, आर्थिक दृष्टि से दुर्बल परिवार से संबंध रखता है। केवल का दादा, जवन्दी, अपनी ज्यादातर जमीन अफीम की आदत में उड़ा कर कंगाल हो चुका था। केवल के पिता, बचने को मजबूरन *मोल का रिश्ता* करना पड़ा था। ये दोनों बातें अब केवल के विवाह में बाधा बनी खड़ी थीं। इस प्रकार उपन्यास का मुख्य पात्र दोहरा संकट और यंत्रणा सहन करता है। कमजोर आर्थिक दशा और भावात्मक खालीपन--इसी स्थिति में केवल का संपर्क गांव की एक युवा स्त्री दीपो से हो जाता है, जो खुद बेमेल विवाह का संताप भोग रही थी। दोनों का प्यार न तो आदर्शवादी है और न ही रोमानी। यह यथार्थ की वास्तविकता से संबंध रखता है। अविवाहित केवल अपनी कामवासना समाज द्वारा अस्वीकृत रिश्तों के जरिये पूरी करता है। दीपो और केवल

एक-दूसरे के साथ विवाह के बंधन में बंध जाने के लिए तैयार हैं लेकिन गांव की सामाजिक तथा सांस्कृतिक मर्यादा इसकी आज्ञा नहीं देती। दिलेरी से उठाया गया उनका कदम भी, अंततोगत्वा असफल ही रह जाता है। दीपो एक दिन साहस कर, केवल के घर आ तो जाती है, लेकिन इससे गांव के शांत वातावरण में, जैसे एक तूफान आ जाता है। सारा गांव इस विद्रोही हरकत के खिलाफ उठ खड़ा होता है। गांव वालों का केवल या दीपो के निजी भावनात्मक संताप से कोई सरोकार नहीं है, उन्हें तो अपने पूर्वजों की मर्यादा की रक्षा की चिंता है।

इस प्रकार करमजीत सिंह कुस्सा का यह उपन्यास रात के राही वर्तमान सामाजिक यथार्थ की वास्तविकता को अप्रत्यक्ष रूप से खोजने की ओर प्रवृत्त प्रतीत होता है। ऊपरी सतह पर बेशक यह उपन्यास केवल और दीपो के अवांछित संबंधों की दुखांत कथा बयान करता है लेकिन इस वर्जित प्रेम संबंध का सामाजिक तथा सांस्कृतिक प्रसंग भी हैं। परोक्ष रूप में तो यह उपन्यास पारंपरिक मर्यादा के अप्रासंगिक और खोखले आडंबर पर व्यंग्य करता है। यह सामाजिक यथार्थ में प्रचलित दोहरे मानदंडों का परदाफाश करता है। दिखावे की नैतिकता के भीतर छिपी हकीकत तो यह है कि समाज जिन रिश्तों को अस्वीकार करता है, समाज के विशिष्ट व्यक्ति उन्हीं रिश्तों को आंतरिक तौर पर भोगते हैं। हकीकत का सामना करने का साहस करने वालों की निंदा विद्रोही कह कर की जाती है।

केवल और दीपो उपन्यास के दो ऐसे पात्र हैं, जो प्रतीकात्मक ढंग से समकालीन सामाजिक यथार्थ की वास्तविकता का विश्लेषण करते दिखाई देते हैं। दीपो पुरुष प्रधान सामाजिक व्यवस्था के हाथों पीड़ित है। सामाजिक स्तर पर उसे मिला हुआ रिश्ता उसे भावनात्मक संतुष्टि नहीं देता, लेकिन वह अपनी इच्छा से इस बेमेल विवाह के बंधन को तोड़ भी नहीं सकती। इस प्रकार यह उपन्यास स्त्री-पुरुष संबंधों का बेबाक विश्लेषण करता हुआ मानव अस्तित्व के स्थायी सरोकारों के सम्मुख हमें खड़ा करता है। उपन्यास का पूरा कथा-संसार आंचलिक उपन्यास की विधा के अनुसार, मानव-जीवन के सामाजिक तथा सांस्कृतिक आयामों का गहन अध्ययन प्रस्तुत करता है।

-जगबीर सिंह

1

दीपो ने पुराने और बारिशों से काले पड़ गये जंगले को खोलते हुए, नीचे निगाह फिरायी। चौके में बैठी बंतो चाय की पतीली के नीचे, चूल्हे में कपास की सूखी लकड़ियां डाल रही थी। वह ध्यान-मग्न, लकड़ियां तोड़-तोड़ कर चूल्हे में डाले जा रही थी। दीपो ने सेहन में चारों ओर आंखें घुमायीं। भादों के पिछले पक्ष की तपिश करवटें ले रही थी। असमंजस में पड़ी-पड़ी उसकी आंखें साथ वाले सेहन में भी घूम आयीं। वहां बिल्कुल सन्नाटा छाया हुआ था। सेहन के बीच में लगे शीशम के पेड़ के पत्ते, ठहरी हुई हवा को घूर रहे थे। पल भर के लिए वह वहीं खड़ी रही, उसके बाद उसके पैर धीरे-धीरे सीढ़ियों की ओर बढ़ गये। सीढ़ियों की ईंटें पुरानी होकर उखड़ी पड़ी थीं। चारों ओर तपती दोपहरी में चुप्पी फैली हुई थी। सहसा सीढ़ियों पर आहट सुन कर बंतो ने उधर देखा। दीपो को देख कर उसने हंसते हुए, चाव से पूछा :

"आ री सखी, क्या हाल-चाल है तेरा?"

"बस, पूछ न बहन। हाल बेहाल है।" आखिरी सीढ़ी उतरते हुए, दीपो ने हल्के से हंस कर कहा।

" क्यों ?" बंतो ने उसके चौड़े और दबंग चेहरे को गौर से देखा। उसकी बड़ी-बड़ी भूरी आंखों में शोक की झलक दिखायी दे रही थी। गेहुंए रंग पर जैसे कुछ खुदा हुआ-सा लग रहा था।

"तुमसे क्या छिपा है !"

बंतो ने भौंचक्की नजरों से उसकी ओर फिर से देखा। सहसा मन में शंका-सी उठी, शायद इसके मन में फर्क पड़ गया हो। पर वह उसका चेहरा देखकर कुछ समझ न सकी। चूल्हे के भीतर की लपट बाहर लकड़ियों तक बढ़ आयी थी। हाथ को जलने से बचाते हुए बंतो ने शीघ्र ही लकड़ियां चूल्हे में धकेलते हुए कहा, " क्यों, जाट से देह तुड़वाना रास नहीं आया?" बंतो के इन शब्दों में से कपास की लकड़ियों में लगी फफूंदी जैसी दुर्गंध आ रही थी।

"नहीं. . . . ऐसी तो कोई बात नहीं। वह निपूता तो सूखे पत्तों जैसा है, जरा से में आग-आग हो जाता है।"

"सूखे पत्तों को आग लगती काहे को है!" दीपो को गहरी नजरों से भांपते हुए बंतो ने अपनी गज भर की मैली-सफेद ओढ़नी को सिर पर ठीक किया, तो उसके रूखे, उलझे हुए बाल उसके चिलम जैसे मुंह पर आ गिरे। बालों को पीछे हटाते हुए उसने विनम्र-सी बन कर कहा, "मुझे तो बहन कसम है, यदि तेरी कोई बुरी-भली की हो।" बेशक बंतो ने यह बात कह कर दीपो पर अपना असली रूप प्रकट कर दिया। मोहल्ले में झगड़ालू कहलाने के बावजूद, उसका मन हल्दी-सा पीला हो गया था। दीपो से झगड़ा मोल लेने से, वह इसलिए घबराती थी कि केवल उससे लड़ेगा। पर उसे भीतर से ईर्ष्या थी कि उसका देवर बेगानी गली की जट्टी के साथ मजे कर रहा है।

"नहीं, तेरी तो कोई बात नहीं।" दीपो ने केवल के आंगन की ओर आंख का इशारा करते हुए मुसकरा कर पूछा, "घर में है?"

"घर में ही होगा, उसे कौन-सा हल जोतना है या रोते-बिलखते बच्चों के मुंह साफ करने हैं। . . . यहां तो उस निपूते की कबीलदारी ने बुरा हाल कर रखा है।" उबलती हुई चाय में दूध डालते हुए उसने दीपो की ओर देखकर कहा, "दीवार पर से नजर डाल कर देख ले. . . घर में ही हुआ, तो दरवाजा खुला होगा।"

परंतु दीपो असमंजस में ज्यों की त्यों खड़ी रही।

चाय नीचे उतार कर बंतो ने लोटे में डालते हुए दीपो को सलाह दी, "चाय की घूंट ले ले, जरा गरम होकर चली जाना।"

"बस बहन, इतना क्या कम है जो खींचकर नजदीक कर लेती हो — नहीं तो लोगों को तो बगैर ईंधन के आग लगती है. . . !" मुसकराते हुए दीपो ने चौके के ऊपर से लीपी-पोती दीवार की मुंडेर को पकड़ कर सेहन में लपकती हुई नजर डाली। शीशम के पेड़ पर बैठी फाख्ता 'घूं-घू' 'गुटरगूं' कर रही थी। परछाइयां मुड़ रही थीं। वह लपक कर दीवार पर चढ़ गयी। सूना आंगन भायं-भायं कर रहा था। बरामदे के सहारे उसने अपनी गरदन बढ़ा कर आहट ली, दालान का दरवाजा थोड़ा-सा खुला था। उसका चेहरा खिल उठा, पर दूसरे ही पल चेहरे पर हल्दी-सी जर्दी पुत गयी, "अगर अंदर उसका कोई यार-दोस्त हुआ. . .तो?"

"अब यूं बैठ गयी, डरी हुई बिल्ली की तरह?" बंतो ने चाय वाला लोटा और कपड़े में बंधी हुई रोटियां उठाते हुए कहा। उसका घर वाला अजायब और सारे बच्चे खेत में कपास चुन रहे थे। और वह उनके लिए तीसरे पहर की चाय ले कर चल पड़ी।

" ले, मैं तो चली खेतों को।" उसने सिर पर रोटियों वाली गठरी टिकाते हुए कहा, "नीचे उतर कर देख ले, कोई होता तो उसकी आवाज सुनाई न देती. . . ? और कोई चोरी तो है नहीं?" हल्के-से हंसती हुई बंतो बाहर का कुंडा लगा कर चली गयी। दीपो ने दुविधा की हालत में ही नीचे छलांग लगा दी। दीवार मुश्किल से आदमी के कंधे जितनी थी। सेहन में उतरते ही हवा का ठंडा झोंका शीशम के दरखत की टहनियों से छेड़छाड़ करने लगा। सारा सेहन शीशम के सूखे पत्तों से भरा पड़ा था। दालान के परनाले के नीचे अध-सूखी घास उलझी खड़ी थी। उसने दरवाजे पर रुक कर देखा, कोई अंदर चादर ताने पड़ा था। फिर मन में आया, अगर कोई और हुआ तो. . . ? पर अब मुड़ूं कैसे. . . चलो, रोज-रोज की किच-किच तो खत्म हो। पक्के मन से वह उसके सिरहाने जा खड़ी हुई। उसकी सांस धौंकनी की तरह चल रही थी। क्षण भर खड़ी कुछ सोचती रही, फिर दिल कड़ा कर के चादर खींच ली। केवल आंखें मलते हुए उठ बैठा और उसकी ओर देख कर हंस पड़ा। नींद से तुड़ा-मुचा सा उठकर वैसे ही ढीला-ढाला-सा बैठ गया। फिर अंगड़ाई लेते और अपनी गोल नाक को मसलते हुए उसने पूछा, "कैसे आना हुआ?" दीपो बोली नहीं। "क्या बात है, बैठेगी नहीं. . . ?" उसे तनी खड़ी देख कर केवल उसकी ओर हैरान-सा देखने लगा।

"इस बैठने ने ही तो सारी मुसीबत खड़ी कर रखी है।"

"बैठ जा, मैं जरा पानी पी आऊं।" उसी हालत में अंगड़ाई लेता और पैरों में जूती फंसा घसीटता हुआ वह बाहर निकल गया। लाल फूलों वाला कच्छा उसकी गोल जांघों पर खूब फब रहा था।

दीपो ने हाथ की चादर धीरे से चारपाई पर रख दी और खुद भी पैरों के बल सिरहाने बैठ गयी। एक सरसरी-सी नजर दालान के अंदर की चीजों पर डाली। वह पहले भी कई बार वहां आयी थी। पता नहीं, आज उसकी उत्सुकता हर चीज को ताड़ने के लिए बेताब क्यों हो रही थी। एक कोने में बोरियों में बंद गेहूं पड़ा था। ऊपर डब्बियों वाला पुराना खेस तना हुआ था। साथ ही लोहे की पेटी पड़ी थी। ऊपर एक रंगीन ट्रंक पड़ा था। खूंटी पर कृपाण लटक रही थी। दूसरी ओर मटमैली हो गयी लकड़ी की जालीदार अलमारी और चूड़ीदार टांगों वाली मेज पर एक लोटा और कांच का एक मैला-सा गिलास पड़ा था।

"अब बता भाई, तेरी क्या सेवा करूं? तू मेरे घर चल कर आयी है।" चारखाने के अंगोछे से मुंह पोंछता केवल बोला।

"मुझे किसी चीज की जरूरत नहीं केवला। तू बात खत्म कर, चाहे इधर हो जा चाहे उधर . . . यह रोज-रोज का टंटा मैं नहीं झेल सकती. . . रोज-रोज का कोंचना तो पशु भी नहीं सहते, वे भी किनारा कर जाते हैं. . . मुझसे यूं अपनी जान नहीं सुखायी जाती . . .बस . . . नहीं तो किसी दिन कुछ हो जायगा, यहां।"

"क्या बात है? आज फिर कुछ हुआ?" केवल ने गंभीर होते हुए पूछा।

"नहीं हुआ, तो हो जायगा . . . होने में कौन-सी देर लगती है।" वह वैसे ही जली-भुनी बैठी थी। क्षण भर चुप रह कर फिर तमक कर बोली, "छः महीनों से झींक रही हूं, भई, कोई राह निकाल। पर तुझे क्या? हो तो मेरे साथ रही है। . . . तू तो. . . और फिर इसका छुप-छुपाव कैसा? जब उसके साथ कोई लग-लगाव ही नहीं. . . तो फिर उसकी धौंस क्यों सहूं. . . जूते क्यों खाऊं?" बात करते समय उसकी रुष्ट जुबान के साथ-साथ उंगली भी उसी तरह फिर रही थी। केवल उसके तपे हुए बोल और फूली हुई सांस को गौर से देखता रहा। दीपो की सारी बात वह समझता था। पहले की तरह चलाना अब उसको भी अच्छा नहीं लगता था। उसे पता था कि दीपो उसकी है, वे एक-दूसरे के बगैर रह नहीं सकते। चाहने के बावजूद अंदर कंपकंपी भी छूटती थी।

"तू कुछ दिन और सब्र कर। बाई कामरेड को आ लेने दे. . . फिर वैसे ही कर लेंगे, जैसे कहेगी. . . क्यों?"

"वह अपने कानून छांटेगा यहां आ कर।" उसी आवाज में वह फिर बोली। "बीस बातें करेगा। इज्जत जाती है, बदनामी होती है. . . यह होता है. . . वह होता है। . . . मुझे नहीं मालूम . . . मुझे तेरे कामरेड से क्या वास्ता, बसना मैंने और तूने है या कामरेड ने? उसकी टांग क्यों बीच में अड़ती है?"

केवल ने उत्तर नहीं दिया। वह अपने भीतर की सोचों में उलझा बैठा था, यह आ जाय, तो मेरा घर बस जायगा. . .रौनक हो जायगी, अभी तो मजौरों[1] की मां की तरह अकेला

---

1. मजारों की रखवाली करने वाला।

पड़ा रहता हूं. . . फिर चूल्हे में आग भी दहकेगी. . . दीया भी जलेगा. . . अब तो साधुओं का डेरा बना पड़ा है. . . दूसरे, इसके साथ इतने अरसे से यारी है। मेरे कांटा चुभने पर भी यह मर-मर जाती है. . . बच्चों का क्या है. . . नाम के बेशक कैलू के हैं, पर हैं तो मेरे ही. . . । भीतरी खुशी से उसका चेहरा खिल उठा। मगर दूसरे ही पल उसका शरीर गीली मिट्टी की तरह बैठने लगा, लोग क्या कहेंगे? गांव की बहू छड़े ने अपने घर बसा ली . . . बहन-भाई सारी उम्र बोलने से जायेंगे. . . नाते-रिश्तेदार बेशक कुछ न कहें . . . पर छोटी-छोटी बात पर ताने कसेंगे. . . सारी उम्र का बैर-विरोध अलग . . । कैलू तो बेशक कुछ न कहें . . .पर ये ससुरे कब सहने वाले हैं. . .

"क्या बात है? अब तूने मुंह क्यों सी लिया?. . . तुझे बताऊं केवल।" उसे कंधों से पकड़ कर अपनी ओर करते हुए वह बोली, "अगर बंदा ऐसे ही सोच में पड़ा रहे, तब तो फिर भीतर पड़ा-पड़ा ही मर जाय। लोगों की ओर न देख। सभी चार दिन जबान चलायेंगे। खुद ही भौंक कर चुप हो जायेंगे। और फिर यह कोई नयी बात है क्या? देख, बरमपुर की लड़की गांव के बंदे के घर ही तो बसी है।. . . ज्यादा हुआ तो मिलना-जुलना छोड़ देंगे। . . . लोग हमें घर से निकालने से तो रहे।"

"अच्छा . . . दस-बारह दिन ठहर फिर. . . "

"यह बात गलत है. . . तुझे दो दिन देती हूं. . . जिससे पूछना है, पूछ ले. . . पर तुझे बताऊं . . . जितनी ढील करेगा उतना ही खाना खराब होगा।" इधर-उधर की दो-चार और बातें करके दीपो चली गयी। केवल उसे जाते हुए असीम खुशी से देखता रहा। खुशी के नशे में उठ कर यूं ही पेटी की तरफ चला गया। सोचते-सोचते मन में हौसला बढ़ गया . . . लोगों का क्या है. . . कंजरों का. . . मैं उन सालों की धौंस क्यों मानूं?. . . मुझे कौन-सा खाने को देते हैं।

उसके शरीर में कोई ऐसी दैवी हवा प्रवेश कर गयी कि उसके अंदर जोर करवटें लेने लगा। उसने बाहें फैला कर चेहरे पर मुसकराहट लाते हुए पट्टे फड़फड़ाये। वैसे ही आंगन में आकर नलके के नजदीक खड़ा हो गया। नलका चलाकर पानी का घूंट मुंह को लगाया पर आधा घूंट पी कर ही बाकी का पानी सेहन में फेंक दिया। दरवाजे में से गली वाली दीवार का साया बीच तक चढ़ आया था। फिर उसे गली के अगले छोर पर किसी चौड़े-चकले और भारी-भरकम आदमी की पीठ दिखायी दी। उसे कुछ समय तो पता ही न लगा कि वह कौन था? 'हूं' कहते हुए और सिर हिलाते हुए उसकी छाती भारी हो गयी। जैलदार को देख कर उसका मन खंगूरा[1] मारने को हुआ, पर तब तक जैलदार गली का अगला मोड़ मुड़ गया था। फिर घर आ कर उसने चूल्हे पर ढल आये साये को देखा। अंदर से पतीली लाकर चाय चढ़ा दी। चाय पत्ती और चीनी डाल कर उसने लकड़ियों को तीली घिस कर आग लगायी और ऊंची उठती लपटों की ओर देखता रहा। वह फिर दीपो के बारे में सोचने लगा। सोच आगे बढ़ती गयी— दीपो से कैसे गहरी दोस्ती हुई? उसे यह भी गम था कि सुंदर छैला जवान होने के बावजूद उसका विवाह नहीं हो सका था, उसके बड़े भाई अजायब

---

1. किसी को ललकारने अथवा अपने आने की सूचना देने के लिए गले से विशेष ध्वनि निकालना

का विवाह भी उन्होंने पैसे दे कर किया था। केवल का घर नहीं बसा था, जबकि उसके पास चार किल्ले जमीन के भी थे। सोच आगे बढ़ती-बढ़ती केवल के दादा जवंद सिंह के पास जा खड़ी हुई।

जवंद सिंह जवान हो गया था। समय पाकर उसके अंग तप उठे। विवाह की सही उम्र देखकर माता-पिता ने जवंदी का विवाह तय कर दिया। विवाह भी हो गया। गौने की रात, जंवदी को परों के बगैर ही उड़ाये फिरती थी। एक तो यार-दोस्तों की शह, दूसरे मुंह-जोर जवानी का सांड़ जैसा जोश और तीसरे, पहले तोड़ की बोतल। उस पागलपन और पशु-आवेश के चलते संभाल कर रखी जवानी, नरम-नाजुक बरसीम[1] की भांति, मुंह-जोर अक्खड़ आदिम ओलों के आगे टूट फूट गयी। दूसरी सुबह यार-दोस्तों के पूछने पर, जवंदी ने मिर्च-मसाला लगा कर बातें बनाकर अपना रौब गांटा; यार दोस्तों ने उसे शाबाशी देते हुए कहा—

"वाह रे, शेर के बच्चे। यह हुई न मर्दानगी। वह मेरे साले की बीमारी, मिंदू ने बातों ही बातों में काम चलाया और ससुराल में जाकर वह बदनामी करवायी कि वहां जा कर मुंह दिखाने के लायक ही न रहा।"

"मैंने तो यार सारे अंजर-पंजर ढीले कर दिये।"

ये अंजर-पंजर ऐसे ढीले हुए कि दो-ढाई साल बीत जाने पर भी नंद कौर की कोख हरी न हुई। पहली रात के खिलवाड़ से उसके भीतर कोई भारी नुक्स बैठ गया था। बहुतेरे साधु-संतों से टोने-टोटके करवाये। भीतर का रोग ऐसा रोग था जो उनकी समझ में ही नहीं आ रहा था। मां बहू के अगले-पिछलों को बुरा-भला कहती। नंदो का शरीर जैसे तख्ता हो गया। काफी समय बीत जाने के बाद लोग जवंदी को 'जनाना' समझने लगे। खूब खुराक खाने पर भी वह अपना कुसूर स्वीकार करने लगा था। भीतरी और लोक-दंत-कथाओं से बचने के लिए, उसने नशे पर और अधिक जोर देना शुरू कर दिया। काम रुक गया, जमीन रेहन पड़ने लगी। मां दूसरी शादी के लिए कहती, तो जवंदी इनकार कर देता। घर की मंदी हालत का अहसास उसे था, इसलिए अब और रिश्ते की ख्वाहिश उसे नहीं रही थी। घर की गरीबी और बाल-बच्चों के बिना सूना आंगन देखकर मां नंदो को कोसती, "कहां से आ गयी, यह कलूखत जायेखानी[2]. . . यही घर था जहां कव्वे-कुत्ते भी पेट भर-भर खा जाते थे. . . अब यही घर है. . . यहां राख के बगूले उड़ते हैं. . . हमने क्या बच्चे नहीं जने? अगर औरत का इरादा हो तो बच्चा जाता कैसे रहेगा?"

"क्यों बेबे उसे तंग करती हो? उसका क्या दोष? अपने भाग्य में ही नहीं है। ईश्वर की मर्जी के बगैर कैसे हो जायगा. . . अगर परमात्मा की नजर सीधी होती तो. . . अब तक आंगन भरा होता।"

बेबे बच्चे की खातिर साधु-संतों के डेरों पर भागी फिरती थी। मलेरकोटले वाले पीर ने नंदो को कुएं में रोटियां पकाने के लिए कहा। वह यह भी मान गयी। सास की बोलियां— "कर ले नी पापने ! " उसका लहू सुखा देतीं। उस गांव के नरक जैसे कुएं में उतर कर

---

1. नरम चारा

2. अपनी संतान को खाने वाली एक गाली

उसने रोटियां पकायीं। बेशक चारपाई के चारों पावों से रस्से बांधकर, ऊपर मुंडेर के पास गाड़े गये कीलों के साथ कसकर बांधे हुए थे। पर उसका 'रब्ब' फिर भी मेहरबान न हुआ। नंदो के माता-पिता अलग से उपलों की तरह दहक रहे थे। दवाइयां खाने का तो कोई हिसाब ही न रहा। नंदो की मां ने सयानी दाइयों को उसका पेट दिखलाया, जांच-पड़ताल करवायी। एक दाई ने 'नाल' उल्टी पड़ी बतायी। लगातार महीना भर पेट की मालिश करवायी गयी। कई वर्ष बीत जाने के बाद परमात्मा ने उनकी सुन ली। नंदो को काम से रोक दिया गया। ज्यों-ज्यों प्रसव का समय निकट आ रहा था, नंदो के शरीर में सूजन बढ़नी शुरू हो गयी। जचगी के दिन सबका बुरा हाल था। इतने वर्ष बीतने पर उसकी हड्डियां पक गयी थीं। बच्चा जन्म नहीं ले पा रहा था। गांव की सभी 'सयानी, स्त्रियां' प्रयत्न करके थक गयीं। आखिर लडके को जन्म देकर, दुख-दर्द से मसली-लिताड़ी नंदो अपनी बिखर रही हड्डियों को संभाल न सकी। जवंदी का भी बुरा हाल था। लोगों ने उन्हें दिलासा दिया, ढांढ़स बंधायी।

"ईश्वर की यही इच्छा थी भाई। उसकी लिखी को कौन टाल सकता है? खैर, उसके बिना अंधेरा तो रहेगा ही, पर तुम्हारे पास रोशनी जरूर है. . . फिर उसके आगे कोई जोर भी तो नहीं! रो कर कौन-सा उसे लौटा लाओगे. . . चलो ! तुम्हारे दिन बच्चे के सहारे कट जायेंगे।"

कितने दिन और रोते रहते? दिलासा देने वाले अपने-अपने काम धंधों में लग गये। लोगों की ओर देख कर वे भी दुनियादारी में लग गये। मां गिरती-पड़ती घर का काम करती। जवंदी नशे से, खेतों में मिट्टी से मिल कर मिट्टी हुआ रहता। बचन वर्षों को पीछे छोड़ता हुआ जवानी की ओर बढ़ता गया। इस दौरान जवंदी की मां सदा के लिए आंखें बंद कर गयी। अंदर से टीस तो बहुतेरी उठती, पर 'परमात्मा के कहर' को अब वह 'उसकी करनी' मानने लगा। मिट्टी से मिट्टी हुआ, वह बचन के 'विवाह' के बारे में सोचता रहता। उसने लड़के को काम पर न लगाया। खुराक पर इतना जोर दिया कि लड़का थोड़े समय में ही सेब की भांति लाल सुर्ख हो गया। जवंदी को अपने घर की वीरानी काट खाने को आती थी। वह बरसों 'घर की रौनक' के लिए तरसता रहा था। जब कभी वह लोगों से बचन के 'विवाह' की बात करता, वे रास्ता बदल लेते, क्योंकि जवंदी जमीन खा-पी चुका था। छड़ों का घर स्त्री के बगैर वैसे भी 'शमसान'सा होता है। लोग घर की बुरी हालत के बारे में जवंदी की पीठ पीछे बातें करते।

"रूप को चाटना है क्या! यहां आकर लड़की खायेगी क्या? घर की गिरती हुई मिट्टी जमीन तो सारी इन्होंने अफीम के राह खा ली. . . और जिस जाट के बेटे ने काम ही न किया, वह करेगा क्या? लड़की को यहां फांसी दे दीजिये ताकि आते-जातों को संताप दे।"

बचन के हमउम्र साथी, कभी के 'ब्याहे' गये। लोगों के घरों में रौनक देख कर जवंदी मन-ही-मन जलता। जितनी मेहनत उसने बेटे को जवान करने में लगायी थी, वह सारी व्यर्थ जाती प्रतीत हुई। जवंदी को और लोगों के घरों में अपने घर के मुकाबले जिंदगी

दिखायी देती। बुजुर्ग, फूलों जैसे बच्चों को खिलाते, पौ फटते ही 'मथानियां' खड़कतीं। सालों और महीनों को रहट की टिंडों की तरह घूमते देख कर जवंदी को अपनी उम्र तथा अपने लड़के की ढलती जवानी के बारे में जान-जलाने वाला संशय रहने लगा। इस तरह की खींचातानी में वह यूं भी सोचने लगा : यूं तो लड़का बूढ़ा हो जायगा—प्रतीक्षा करते-करते, कहीं उम्र ही न बीत जाय। मंहगी सस्ती, कोई ले ही आय ,मोल की क्या काट खाती है?

इस मामले में वह गांव के लोगों का विश्वास नहीं करता था। वे सारे उसे धतूरे से भी कड़वे लगते थे, जिन्होंने मिलकर उसका बना-बनाया खेल बिगाड़ दिया था। साथ वाले गांवों में उसने ध्यान रखा। उसके 'आंडलू' वाले यार, सागर ने उसे 'छन्नों' वाले छागर के पास पूरबनों का पता दिया। जवंदी उसी समय उसके साथ 'छन्नों' को चल दिया। छागर के पास आयी स्त्रियों में से जवंदी ने एक सामान्य सी दिखने वाली औरत के मोल की बात की तो छन्नों वाले ने पांच सौ रुपये मांगे। जवंदी की सांस ऊपर चढ़ गयी।

"लेन-देन वाली बात कर, टालने वाली न कर।"

"लेन-देन वाली ही तो है, औरत आजकल ढूंढ़े से नहीं मिलती. . . सोच लो, मेरे पास तो ग्राहक बहुतेरे हैं. . . तुम्हें पता ही है, ये रुकेंगी तो नहीं, पांच या सात दिन की बात है सारी।"

बात बिगड़ती देख कर जवंदी ने उसकी बात मान ली। इधर बचना और जवंदी खुशी से फूले नहीं समा रहे थे, उधर लोग चौपाल में इनकी हंसी उड़ा रहे थे, "सुना है भई, जंवदी का बचना बहू लाया है?"

" हां, लाया है रे ! बहै- रै -कोट की चूहड़ी ला कर सालों ने पूरे गांव पर दाग लगा दिया?"

"चल यार, चूहड़ी हो या चमारी, बाप-बेटे का वक्त गुजर जायगा।" लोग पीठ पीछे मखौल करते और उनके मुंह पर प्रशंसा—"बढ़िया है, बहुत बढ़िया है. . . रोटी पकाने वाली तो मिली।" लोग बाहर 'किच-किच' करते रहे, पर बचना और जवंदी अपने 'घर की रौनक' बढ़ाने में जुट गये। बचने की मोल लायी हुई बहू ,पंजाब कौर धीरे-धीरे अपनी संस्कृति छोड़ कर बचने की संस्कृति को अपनाने लगी। बचना स्वयं घर के छोटे-मोटे कामों में उसकी मदद करता। समय के साथ पंजाब कौर अपने 'काटे-बाटे' को छोड़कर पंजाबी बोलने लगी। घर में बच्चों की रौनक बढ़ती गयी। इस लंबे समय में पंजाब कौर ने चार लड़कों और दो लड़कियों को जन्म देकर खाली आंगन को भाग लगा दिये। लड़के-लड़कियां बचने पर थे और सारे ही सुंदर थे। अजायब और नायब ने शीध्र ही हल की हत्थी पकड़ ली। केवल और लीखा भी उडार गबरू-जवान हो गये थे। लड़कों ने उडार होते ही, कमर कस कर काम करना शुरू कर दिया। गांव में परिवार की प्रतिष्ठा बन गयी। लेकिन उस समय जवान लड़के मिट्टी हो जाते जब लोग पीठ पीछे कहते, "अरे पुत्र तो चूहड़ी के ही हैं, कमाई करते हैं तो क्या हुआ. . . जात तो नहीं छुप सकती।" जवान लड़के मरने-मारने पर उतारू हो जाते। चौपाल में सीना तानकर बात करना उनके लिए कठिन था। रिश्ते के वक्त बात आगे बढ़ती-बढ़ती लड़कों की मां पर आकर रुक जाती। रिश्ता करने वाले सुंदर-जवान

और काम करने वाले लड़के देख कर प्रसन्न हो जाते, पर जब 'ननिहाल' की बात छिड़ती तो 'सोचेंगे' कह कर चले जाते। बचने को अपनी जवानी के दिन याद आते, तो मन खराब हो जाता। फिर भी अजायब का ब्याह करने के लिए भाग-दौड़ जारी रही। बचने को पहली उम्र के अभाव सताते। तब तो चलो तंगी थी, अब अंदर-बाहर भरा पड़ा था। अजायब और नायब के हम-उम्र कभी के ब्याहे जा चुके थे। लोगों के 'दीन-हीन' भी ब्याहे गये थे। बचना सोचता, जमीन भी चार किल्ले हैं, लड़के भी लट्ठ जैसे जवान हैं। मां का पीछा नहीं तो क्या कहर आ गया? पर कोई भी जाट अपनी बेटी का हाथ न दे सका। फिर भी बचने ने 'झोरड़ो' के नशेड़ी को पैसे का लालच दे कर फंसा लिया। उसके घर अकेली बेटी थी, पर बचने को बाद में पता चला कि बेटी वह ऐसी स्त्री की थी जो गांव में ही निकल कर दूसरे घर बस गयी थी। बचने ने 'कोई बात नहीं' कह कर सारी बात अंदर ही अंदर दबा ली। युगों के बाद घर में उन्होंने लोगों जैसी खुशी देखी। उतना चाव अजायब को नहीं था, जितना केवल को था। विवाह वाले दिन ही केवल ने शराब पी कर एक गलत बात कर डाली। भाभी की गोद में बैठने वाली रस्म का उसने अपने-आपको हकदार समझा। बहू बंतो के पास कामरेड सुखदेव की बेबे, बचने की शरीके[1] में बनायी 'धर्म की बहन' बैठी थी। केवल अंदर दो-तीन चक्कर मार गया था। जब उसने बुआ को अपनी समस्या बतायी, तो बुआ ने उसे कहा, "धत् तेरे की, तेरा क्या हक !"

"क्यों, क्या मैं जेठ लगता हूं?"

"यह बात गलत है, तू चलता बन।" जब वह नहीं हिला तो बुआ ने रीति के रुपये देते हुए उसे वहां से भेजना चाहा, पर वह हाथ मारता हुआ पीछे हट गया। वह समझता था भाभी के पास बैठने का उसे अधिकार है। बीच में फच्चर फसाने वालों का क्या काम? इस रस्म के लिए ही तो दो महीनों से प्रतीक्षा कर रहा था। उसके दिमाग में यह बात भी थी कि घर आयी बहू सबकी साझी होती है।

"तुझे और क्या चाहिए?" बुआ ने हैरान होते हुए पूछा।

"मैं तो गोद में बैठूंगा और बैठे बगैर जाऊंगा नहीं।"

उसने यह बात की तो बुआ ने गुस्सा होकर उसे धक्के दे कर सेहन में कर दिया।

"अरे धत्! पागल कहीं का. . . ?" वह लड़कियों और बूढ़ियों की ओर हैरानी से देखती हुई बोली, "लो, इसे कोई अक्ल देने वाला ही नहीं। . . . भई मोटी मत वाले! वह तो रीत है। अरे फूहड़, कहां जायेखाने पागल इकट्ठे हुए हैं।"

केवल खिसियाना-सा होकर परे चला गया। बहुतों ने उसकी अवमानना महसूस की। सुखदेव उसे इसके बारे में समझाता हुआ पीने वालों की टोली में ले गया। एक युवक ने बोतल और गिलास पकड़ा दिये। केवल ने धीरे से बोतल पकड़ कर एक बड़ा-सा जाम ढाल लिया। फिर एक और ऊपर तक भर कर पी लिया। आंखों में लाल डोरे उभर आये। फिर उसने बोतल को ही मुंह लगा लिया। शराब पी कर उसने वह तूफान खड़ा किया, वह तमाशा किया, कि सभी के हाथों से बर्तन छुड़ा दिये। सुखदेव ने तंग आ कर उसे एक थप्पड़

---

1. चच्चा ताऊ के परिवार के सदस्य पट्टीदार

भी टिका दिया। सुबह होने पर जब सुखदेव ने फिर उसकी लानत-मलामत की तो वह नजरें नीची किये बैठा रहा, जैसे शर्म महसूस कर रहा हो। वह स्वयं हैरान हो रहा था कि रात उसे क्या हो गया था. . . दिन बीतते गये। बंतो कमसिन होने के कारण ज्यादा सोच-विचार नहीं सकती थी। केवल मचलने लगा। वह और बंतो इतना हंसते, इतना हंसते कि नायब को यह बात कुछ अधिक ही बुरी लगती। वह तो खेतों में ही बनायी झुग्गी में रहता था। थोड़े ही समय में केवल और बंतो की आस-पड़ोस में सरेआम बातें होने लगीं। अजायब तो यूं कह कर बात टाल जाता, "देवर-भाभी का बना ही हुआ है, कभी हंस-खेल लिया।" उसकी करतूत नायब के अलावा परिवार के और किसी भी आदमी पर जरा भी असर नहीं करती थी। पर नायब अंदर ही अंदर कुढ़ता-जलता रहा।

दिन दौड़ने लगे। अगली सर्दियों में उन्होने छोटी लड़की का बोझ सिर से उतार दिया। लड़की के विदा हो जाने के बाद केवल और उसके यार-दोस्त पीने बैठे। वैसे तो सारे ही बुरा मान रहे थे, बेटी को विदा कर के खुशी काहे की? पुण्य करके अब पाप भी करने लगे हैं। पर नायब अपने धार्मिक संस्कारों के चलते खौलते पानी की तरह उबल रहा था। बाहर से आये-गये को खाना खिलाते समय केवल ने नायब से अपने यार-दोस्तों के लिए भी खाना लाने को कहा, तो नायब के सब्र का प्याला टूट गया। क्षण भर पहले वह बंतो को भी डांट कर आया था। बंतो ने खाना पकड़ाने में देर कर दी थी। जब नायब ने जरा गर्म हो कर कहा तो बंतो ने मखौल से कहा, "इतनी जल्दी पारा चढ़ता है" तो नायब ने आंखें निकालते हुए कहा "दिखाऊं तुझे पारा चढ़ने का मजा ? . . . मुझे सारा पता है. . . . सारे परिवार पर ही लाठी फिरने वाली है. . . " और अब जब कि केवल ने भी उसे हुक्म सुनाया, तो वह भड़क उठा।

"तूने चूड़ियां पहनी हुई हैं. . . साले हर वक्त नवाब बने रहते हैं?"

"गुस्सा क्यों कर रहा है. . . न पकड़ा तू यार!" केवल शर्मिंदा-सा होकर रह गया।

नायब अंदर से दाल-भाजी वाली डोलची लेकर वापस आया तो बड़बड़ाता रहा, "साले खुश हो होकर, रौब जमा रहे हैं. . . बहन को ब्याह कर इन्हें खुशी चढ़ी हुई है, सालो, जो बाहर राख उड़ रही है. . . ?"

केवल उसकी ओर भटूरे जैसा मुंह करके ताकता रहा, हिचकियां उसके गले में अटक गयीं। फिर उसका रोना और भी ऊंचा हो गया। सारे लोग उसे ढ़ांढ़स देने लगे, समझाने लगे। उसे ऊपर ही ऊपर चढ़ते देखकर नायब ने उसके मुंह पर एक थप्पड़ दे मारा। केवल उस पर बरस पड़ा और गुस्से में उसके साथ चिमट गया। इतना झगड़ा हुआ कि केवल और नायब के कपड़े फट गये। केवल अभी तक गालियां दे रहा था। सयानों ने समझाते हुए नायब को झिड़का, "तू सयाना-बयाना हो कर तमाशा करता है; वह तो बच्चा कहलायगा।"

विवाह में आये हर किसी ने उसे सयाना बनाते हुए, यह जाहिर किया कि जैसे नायब ने 'घोर अनर्थ' कर दिया था। गुस्से से नायब ने किसी को भी कोई उत्तर न दिया। यहां तक कि छोटों ने भी उसे समझाया।

अगले दिन नायब बगैर बताये ही कहीं चला गया। सारे परिवार पर जैसे बिजली टूट पड़ी। पंजाब कौर का बुरा हाल था। केवल नजर नीची किये बैठा था, जैसे उसके अंदर से शूं-शूं कर के सारी हवा निकल गयी हो।

'भप्प भप्प' करता ढकना पतीली पर से नीचे गिर पड़ा। केवल को ध्यान आया तो आग बाहर खींच दी। चाय आग में गिर कर सूं-सूं की आवाज पैदा कर रही थी। अंदर से दूध लाकर, उसने चाय में डाला। वह विगत के प्रभाव से अभी तक जैसे मसला पड़ा था। उसका सारा शरीर ठंडा हुआ पड़ा था. . . जो अतीत अब याद आ रहा था, क्या वह सच था।

2

सूर्यास्त के समय नौहणा खेत में से बछड़े को ले आया। जब नौहणा बछड़े को नांद पर बांध आया तो केवल का चेहरा उसे फूल की तरह खिला-खिला लगा। क्षण भर वे इधर उधर की बातें करते रहे। फिर आहिस्ता से केवल ने नौहणे के कान में कुछ कहा तो सुनते ही वह किलकारी मारते हुए केवल की पीठ थपथपाने लगा।

"जीता रह, पट्टे। ऐसा दिन तो रोज-रोज आये।" फिर उसके नजदीक होकर धीरे से पूछा, "कब?"

"कोई बात नहीं. . . बतायेंगे।" मुसकराते हुए केवल चारे वाले कमरे में से बोतल निकाल लाया। फिर वह अंदर से चाकू और बाटी ले आया और प्याज छील कर काटने लगा। नौहणा लोटे में पानी ले आया। घर से अलग होने के बाद नौहणा उसका यार बना था। नौहणे की अपनी भौजाई से बनती न थी। उसकी घरवाली को मरे कई साल हो गये थे। उसके अंदर कैंसर का फोड़ा था। इसके बाद उसका पड़ोसन गुरबंश के साथ मामला जम गया। उसका घरवाला नगिंदर फौजी था और पीछे वह, उसके सास-ससुर और एक छोटा देवर रहते थे। नौहणे की भौजाई से नहीं बनती थी, क्योंकि उसने काम कभी किया नहीं था पर खर्च उसका सारे परिवार से अधिक था। साथ ही धन्नो को यह भी जलन थी कि नौहणा गुरबंशो को घर लुटाये जा रहा था।

"ले अब. . . ।" केवल ने गिलास उसके आगे करते हुए और मुसकराते हुए कहा, "चूहड़ों की तरह न करना तू मेरे बाप।" और वे दोनों खिलखिला के हंस पड़े।

नौहणे ने नीट पैग ढालकर एक ही बार में पी लिया। फिर प्याज का एक टुकड़ा मुंह में डाल कर गले की कड़वाहट को निगलते बोला,"बला की तेज है, गले को चीरती जाती है. . .किससे लाया यार?"

"लानी किससे है," केवल ने गिलास में शराब ढाल कर और जरा टेढ़ा होकर मटमैली सी रोशनी में से झांकते हुए कहा, "उस दिन वाले घड़े की है।"

"अब तक संभाले रखी?"

"मैंने सोचा, किसी अच्छे से दिन निकालेंगे. . . यूं तो यहां ड्रमों के ड्रम डकार जाते हैं, क्यों?"

नौहणा चारपाई पर ठीक से बैठ गया। बातें करते और पीते काफी समय निकल गया। इस बीच उन्होंने दीपो से लेकर गुरबंशो तक की बातें कीं। गुरबंश का नाम सुनकर नौहणा भीगे कागज-सा हो गया। पिछले कुछ समय से नौहणे को गुरबंश के लक्षण अच्छे नहीं लग रहे थे। उसे इस बात का भी दुख था। पत्नी की मृत्यु के बाद नौहणे को और रिश्ते की आशा नहीं थी। रिश्ता तो घर की मंदी हालत के कारण पहले ही मुश्किल से हुआ था। दूसरे भाई-भौजाई उसे ब्याहना नहीं चाहते थे। उनका परिवार बढ़ गया था और नौहणे

को वे 'सवा लाख'[1] ही रखना चाहते थे। फिर जमीन भी आधी रेहन पड़ी हुई थी। क्षण भर नौहणा चुपचाप बैठा रहा। फिर मरी-मरी सी आवाज में बातें करने लगा, "यार! मोह साला. . . ! छोड़ा नहीं. . . जाता. . . ।" उसने हिचकी लेकर आंगन में थूकते हुए कहा, "पर उसके लक्षण ठीक नहीं। ससुरी किस मिट्टी की बनी है? कहीं एक तरह, कहीं दूसरी तरह. . . । ज्यादा क्या पूछता है, मैं तो उसे अभी तक समझ ही नहीं सका कि वह सांप है कि शेर है?"

"क्या बात है? ऐसा क्यों करती है? और फिर औरत हो कर?"

तभी दीवार पर से नारी स्वर सुनाई पड़ा—"इधर आना जरा. . . ।"

अलग हाने के बाद से दीपो उसकी दो वक्त की रोटी पकड़ा जाती थी। हाथ बढ़ा कर उसने रोटी वाली थाली पकड़ ली। दीपो उसी समय वापस चली गयी। मूंग की दाल में करीब आधा तो देसी घी तैर रहा था। बोतल में थोड़ी-सी शराब बची हुई थी। केवल ठीक था, लेकिन नौहणा झूम रहा था। उसकी जुबान लड़खड़ा रही थी।

"नौहणे ! उठ यार, थोड़ी-थोड़ी रोटी खा लें।" केवल ने उसे कंधे से पकड़ कर झकझोरा।

"न . . . ह. . . ीं. . . भाई। . . . घर में ही खाऊंगा. . . तेरी रोटी तो वैसे भी नहीं खाऊंगा।" सिर मारता हुआ नौहणा चारपाई से आधा नीचे लुढ़का पड़ा था। केवल को एक बार नौहणे पर बड़ा क्रोध आया। वह उसे शराब पिलाकर पछता रहा था। इस तरह तो उसकी रोटी भी खराब हो रही थी। जिस खुशी ने उसे मस्त कर दिया था, वह नौहणे के पागलपन से मिट्टी जैसी हो गयी थी। बेशक वह लोगों की बातों से डरता था, पर दीपो के आने से उसे इतनी खुशी थी, जैसे वह जीते-जागते लोगों में से हो। स्त्री की उपस्थिति से उसका घर और लोगों जैसा बन जाता था। छड़ा(जिसका जोरू न जाता अल्लाह मियां से नाता) होने के कारण घर-गृहस्थ वाले लोग उसे मुंह नहीं लगाते थे। लोग कहते, "कबीलदार आदमी को तो आंख की शर्म मारेगी. . . इसकी क्या दुम पकड़ लेंगे?" उसे यह विश्वास हो गया था कि दीपो के आने से कम से कम लोग उसका यकीन तो करने लगेंगे। पर नौहणे ने सारा मजा किरकिरा कर दिया था। आखिर ऊब कर केवल नौहणे को खींचता-घसीटता उसके घर छोड़ आया। वापस आकर रोटी खाने लगा तो खुशी एक बार फिर नगीने की तरह चमकने लगी। आधी रात तक वह इसी विषय में सोच-सोच कर खुश होता चारपाई पर करवटें बदलता रहा।

---

1. कहावत है अकेला सिख सवा लाख के बराबर होता है।

3

सुबह दिन चढ़े उठ कर केवल ने चाय पी। चाय पी कर शौच आदि जाते-करते उसने खूब धूप चढ़ा दी। फिर चारे का गट्ठा लेने चल दिया। जब बछड़े को लेकर वह अपने खेतों को जाने वाले रास्ते पर आया, तो एक हवाई-जहाज बहुत नीचे चक्कर काट रहा था। जब से आंडलू-हलवारे में हवाई अड्डा बना था, वक्त-बेवक्त शोर-शराबा होता रहता था। रास्ते के दोनों ओर सावन की फसलें— मक्की, चरी, ज्वार, कपास आदि झूम रही थीं। फसलों के बाद, जब केवल कुछ खाली पड़े खेतों के पास पहुंचा, तो मान बिरादरी वालों के खेतों के ऊपर की तरफ कैलू का हल जुता हुआ दिखायी दिया। उसके मन में कई वर्ष पहले की बात उभर आयी। तब कैलू कमसिन ही था और अब भी वह भरा-पूरा युवक नहीं लगता था।

तब नायब कहीं चला गया था और सारा घर ही उखड़ा-उखड़ा-सा घूम रहा था। एक दिन वह खेत पर चरी-गवार काट रहा था। उसका ऊंट बेरी के पेड़ से बंधा हुआ था। बाकी काम लीखा और अजायब कर लेते थे। साथ वाले खेत में कमसिन कैलू और उसके बूढ़े बाप से ऊंटनी और चालाक बछड़ा काबू में नहीं आ रहे थे। हलवाहे के अनाड़ी होने के कारण हल को दोनों पशु इधर-उधर खींचते फिर रहे थे। केवल कितनी ही देर तक उनकी ओर देखता रहा। फिर हाथ वाला चारा वहीं रखकर उठ खड़ा हुआ। जब जोत नहीं ठीक हुई तो उसने जरा ऊंची आवाज देकर कहा, "बछड़े को ऊपर कर तो यार।"

कैलू ने उसकी ओर देखा, उसका गला सूख गया था।

"यार! यह साली, कंजर की ऊंटनी नहीं काबू आ रही।" केवल दंराती वहीं फेंक कर, उनके पास आ गया।

"बछड़े को ऊपर जोड़ कर चाल तेज किये रख, ऊंटनी को शिशकारते जाना. . . बछड़े को आहिस्ता मत होने देना।"

"अरे छोड़, नयी-नयी खेती करके घुटने-उटने तो टूटेंगे ही।" कैलू के बाप गंडे ने केवल की ओर अपना कमजोर-सा मुंह उठाते हुए दबी-दबी सी हंसी में कहा।

"अभी दो साल रुक जाते। इतनी जल्दी खेती कहीं भागी जा रही थी?"

"तीन तो सारे किल्ले हैं, ले-देकर. . . फिर कब सीखेगा, कल को कोई बाल-बच्चा हो जायगा. . .फिर?"

कैलू की शादी हुए अभी साल भर ही हुआ था। गांव में चर्चा चल रही थी कि बहू उससे हट्टी-कट्टी है। डील-डौल वाली स्त्री के सामने कैलू बच्चा लगता था।

"ला पकड़ा मुझे जरा हत्थी. . . ।" केवल ने कैलू के मुश्की रंग को देखते हुए कहा।

"बता बेटा उसे जरा। मेरी तो साली हड्डियां ही जुड़ी रहती हैं।"

केवल ने 'टिटकारी' मार कर बछड़े को सांटा लगाते हुए कैलू को आंख मार कर पूछा, "तू तो वैसे ही थका-टूटा पड़ा है यार। एक तो ब्याह करवा लिया और ऊपर से खेती का

पंगा ले लिया।" छोटी उम्र के कैलू ने शर्माते हुए उसकी बात का उत्तर नहीं दिया। केवल ने जोत से एक चक्कर पूरा किया। जोड़ी ने जरा भी अड़ी न की। कैलू हल चलाते हुए केवल के साथ-साथ चलता रहा। केवल उससे गौने की बातें पूछता रहा। लड़का जवाब देता खिसियानी-सी हंसी हंसता रहा, पर केवल को जैसे इन बातों से नशा-सा चढ़ रहा था। दो-चार चक्कर लगाने के बाद बैलों को गंडे के पास रोकते हुए केवल ने जूते में से मिट्टी झाड़ते हुए कहा—

"ले भई ताऊ, पशु तो तेरे उड़ते हैं; बस, लड़का ही कच्चा है।" वह गंडे के जवाब देने से पहले ही फिर बोला, "वैसे तो ताऊ, तू हमसे कहीं सयाना है। पर तू तेज चल पड़ा। लड़का तेरा अभी बच्चा है। दोनों काम जो तूने कर दिये हैं ठीक समय पर नहीं किये।"

"तू ठीक कहता है, जवान। . . . मेरा क्या? पता नहीं कब आंखें मूंद लूं — तेरी बात भी सयानी है. . . पल्ले बांधने वाली है, पर पंद्रह वर्ष का लड़का कहीं छोटा होता है. . . वैसे ही जरा शर्माता है। . . . इसने छोटी उम्र में काम नहीं किया. . . अब जरा मुश्किल से ही. . . । कोई बात नहीं, धीरे-धीरे दिल लगा लेगा. . . ।"

केवल ने ताऊ की ओर देखते हुए मन ही मन में कहा, "बाप-बेटे से बहू संभाली नहीं जायगी। ताऊ अभी भी दिल लगा ही लेगा की बातें कर रहा है।" कैलू ने पानी वाली मटकी ला कर रखते हुए कहा, "बापू रोटी आ रही है।"

केवल ने घूम कर देखा, एक ऊंची-लंबी युवती उनकी ओर छोटे-छोटे कदम उठाती, मोर की तरह बच-बच कर पैर रखती आ रही थी। केवल ने उसकी सूरत घूंघट में से ही निहार ली। फिर केवल ने उसकी ओर देखकर शीघ्र ही कैलू की तरफ ताका। क्षण भर के लिए भौंचक्का देखता रहा। फिर अपने 'चरी गवार' की ओर चल पड़ा। ताऊ ने उसे रोटी के लिए जोर दिया तो कैलू ने उसकी बांह पकड़ ली। रोटी खाते-खाते केवल ने कनखियों से बहू को कई बार देखा और वह भी घूंघट में मोटी-मोटी आंखें घुमा रही थी। रोटी खिलाकर बहू ने बर्तन बांधते हुए कैलू से धीरे से पूछा, "चाय अभी ले आऊं?"

"चाय . . . ?" लस्सी पीते हुए कैलू ने बापू की ओर मुंह फेरा, "बापू, चाय अभी ले आये?"

"हां. . . अभी ले आना भई, जरा कड़क-सी कर के. . . ।" फिर सहसा गंडे ने कहा, जैसे कैलू को झिड़की दे रहा हो, "ससुरे, यह भी कोई पूछने वाली बात है?"

केवल ने बहू की ओर देखा और मुंह ही मुंह में घुटी-घुटी हंसी हंसा तो वह उसकी ओर देखकर एक आह-सी भरती हुई फिर कैलू की ओर ताकने लगी। जाते हुए केवल से गंडे ने निवेदन-सा किया। केवल कुछ सोचता रहा। फिर उसके भीतर बहू का बार-बार देखना, झांझरों की तरह छन-छन करने लगा। "कोई नहीं ताऊ, इसे मैं पास रह कर सिखलाया करूंगा।"

"अगर तू इतनी-सी हिम्मत करे तो इसे थोड़ा-बहुत तौर-तरीका आ जाय, फिर गाड़ी चल पड़ेगी।" और वैसे ही जब तक 'जोत' चलती रही तब तक वह कैलू के पास बना रहा। तीसरे पहर, जब चरी-गवार का गट्ठर ऊंट पर लादकर आया, तो उसका मन खिला

हुआ था। वह इतना प्रसन्न था कि गुनगुनाता हुआ दीपो के बारे में सोचता रहा। दूसरे दिन कैलू के खेत जाने का बहाना ढूंढ़ ही रहा था कि गंडा स्वयं उसे मिन्नत से ताकीद करने चला आया, क्योंकि कैलू छोटी उम्र का और गंडे जैसा ही 'सूखा' था। गंडे के पास बीस किल्ले जमीन थी। लड़कियों के बाद पैदा हुआ कैला, वैसे भी ढीला-सा था। बेटियों का लालन-पालन और विवाह आदि करते गंडा अपनी उम्र गला चुका था। पंद्रह वर्ष के कैलू का रिश्ता वह अपने जीते-जी कर जाना चाहता था। दीपो को तब जवान-जहान वर चाहिए था। पुरानी कहावत के अनुसार उन्हें बीस किल्ले जमीन जकड़े हुए थी। पर दीपो पहली रात घबराये से कैलू को देखकर अंदर ही अंदर लहू-लुहान हो कर रह गयी। अब गंडा चाहता था कि कैलू खेती का काम संभाले। पर कैलू तो अभी रोटियां ढोने योग्य भी नहीं हुआ था। जब गंडा दो बार उस काम के लिए उसके पास आया, तो केवल ने उसका आशय समझ लिया और उसका उत्साह बढाते हुए बोला —

"ताऊ, सवाल तेरा मैंने समझ लिया है। कोई बात नहीं, तू निश्चिंत रह। कैलू मेरा छोटा भाई है। दो दिन खाली न बैठा, उसे काम ही सिखा दिया तो कोई बड़ी बात नहीं है। दूसरे दिल भी लगा रहेगा।"

"हां बेटा, तू तो सयाना है। जैसे कहते हैं न, 'मैंने पूछी, तूने बूझी, आंख की कानी रहे न छुपी।" और वह बुजुर्ग 'हिच-हिच' करके हंस पड़ा। तब से केवल कैलू के पास अधिक रहने लगा था। चार पांच दिन बीत जाने पर बचना वगैरह अंदर ही अंदर उबलते रहे। वे सभी इस बात का गुस्सा दिखा रहे थे कि वह शरीकों के काम क्यों करता है। क्या घर में काम नहीं हैं या उसके लिए रोटी नहीं। ज्यादा रंज इस बात का था कि लोग उन्हें बहाने-बहाने, पूछताछ करके जलाते थे। चार-पांच दिन में ही लोगों ने 'बात का बतंगड़, और परों की डारें' बना दीं। नायब के चले जाने के बाद बचना का स्वभाव चिड़चिड़ा हो गया था। घर में, 'बदहाली' के चिह्न उभर आये थे। भाई के गुम हो जाने से अजायब पागल-सा हो गया था। उसके दिमाग को ऐसा धुआं चढ़ता कि सारे परिवार को हाथ-पांव पड़ जाते। उनके हाथों से बर्तन छूट जाते। बीज-बोआई का सारा काम सिर पर पड़ा था और केवल शरीकों का दास बना हुआ था। घरवालों ने उसे बहुतेरा समझाया, पर केवल ने सुनी-अनसुनी कर दी। एक दिन 'झोरड़ां' से आकर संदेशवाहक ने बताया कि बंतो के बेटी हुई है। सारे परिवार में 'शोक' छा गया। 'शगन' ले जाने के लिए उन्होंने केवल को भेजना चाहा। कार्तिक के महीने में और किसी के काम का हर्जा नहीं होना था। पर केवल ने रूखा-सा जवाब देते हुए घरवालों को साफ मना कर दिया।

"मेरा क्या काम?" सांझ की मटमैली-सी रोशनी में उसके चेहरे का बदलाव दिखायी नहीं दे रहा था, "बहू जैब की, बेटी उसकी. . . मैं यूं ही तीसरी जगह लोगों से भद पिटवाऊं?"

"लो, सुनो।" पंजाब कौर ने उसे जैसे झिड़की सी दी, "लोगों ने मजाक क्या करने हैं? भौजाइयों के पास देवर जाया ही करते हैं, और तूने कौन-सा वहां घर बसाना है, 'शगन' देकर वापस चले आना, और लड़की भी देख आना। किस पर है, रंग-रूप।"

"लड़की को यहीं तो आना है. . . पैदा होते बच्चे बीस रंग बदलते हैं।"

"फिर तू घर में ही काम करवा. . . मैं खुद ही छोड़ आऊंगा।" रोटी खाते-खाते बचना गुस्से में बोल उठा। वह कब से केवल की टाल-मटोल सुन रहा था।

"काम करते तो हैं. . . ।"

"और तुझे क्या गश्त के लिए छोड़ा हुआ है?" बचने की आंखें लाल-सुर्ख हो गयीं।

"सुबह, चुपचाप गागर उठा कर चलता बन। बहुतेरा समय 'लुंडरपन' कर लिया तूने। कोई ढंग-तरीका होता है।. . . बेटी-बेटे को खाने-पीने का लाड़, पहनने का लाड़,यह क्या कि टाले घूमते रहो ! घर में लट्ठ जैसे जवान बेटे हों और मैं खेतों में जुलाहे की नली की तरह उघड़ता रहूं । शर्म तो जैसे है ही नहीं. . . ।"

"शर्म काहे की? मैं कौन-से डाके मारता फिरता हूं?"

" अभी क्या, कोई कसर बाकी है. . . कहो तो उलटा सिर को आता है. . . घर से जवान बेटा चला गया. . . हम न जाने किसके सहारे चल-फिर रहे हैं. . . । तू चादरें बांध-बांध कर घूम रहा है गांव में. . . । बराबर की बांह टूट जाय और बंदा इश्क-माशूकियां करता फिरे!" और क्षण भर रुक कर फिर जले-भुने शब्दों में कहा, "देखो तो. . . शर्म-हया की ही कमी है. . . सालो. . . ।"

पर केवल चुपचाप नजरें नीची किये बैठा रहा। उसकी चुप्पी देखकर बचने को और क्रोध चढ़ गया।

"अगर ये करतूतें नहीं छोड़नीं तो. . . मेरे घर से बाहर हो जा. . . मुझे नहीं जरूरत ऐसे नालायक की।"

"हो जाऊंगा घर से बाहर. . . " केवल ये शब्द कुछ ऐसे अकड़ से कहता हुआ बाहर की तरफ हो लिया, जैसे उसे कोई दौरा पड़ा हो। पर बचना वैसे का वैसा ही भट्ठी के दानों की तरह तिड़कता रहा। सारा परिवार उसकी गरमी-सरदी सहन कर रहा था।

घर वालों का अभी केवल से मतभेद चल ही रहा था कि उधर गंडे का जैलदार के साथ एक टेढ़ा-सा झगड़ा उठ खड़ा हुआ। जैलदार बघेल सिंह ने कानून से गंडे के खेतों के बीचों-बीच से निकाल कर अपनी जमीन में एक नहर की नाली खुदवा ली। यह नाली चकबंदी के समय सभी सरकारी कागजात में लिखी गयी थी। जाटों को उसका ज्ञान नहीं था। लोगों को यह अद्भुत बात सरासर धक्का-सा लगती थी। गंडे को जैलदार ने 'कागजों में लिखी नाली' दिखा ही। वह इतना कायर आदमी था कि 'धक्काशाही' से उसके अंदर कुढ़न होती थी, फिर भी बराबर खड़ा होने की उसमें हिम्मत न थी। पर दीपो ने इस जबरदस्ती के बाद घर में तूफान खड़ा कर लिया। गंडे ने 'कानून की बात' समझा कर बहू को शांत तो कर दिया, पर दीपो चुप बैठने को बुजदिली समझती थी। केवल को भी यह जबरदस्ती सहन करना कठिन लगता था; उसे यह बात वैसे भी चुभती थी। जाट के लिए गर्दन नीची करना बिलकुल कायरता की बात थी। वह यह भी सोचता था, मुझे क्या? जमीन इनकी जाती है, अगर ये ही ध्यान नहीं करते तो मुझे क्या पड़ी है। पर जब दीपो को हंडिया की तरह उबलती देखता, तो दिल मोम हो जाता और उसका शरीर इस 'विचित्र बात' से जलने लगता। उसे दीपो का मोह-सा जागता था। घर वाले जब उसे 'शरीकों का चाकर' कह कर

बोली मारते, तो अंदर से जाटों वाला रौब उबालें खाता और वह सोचता, 'मैं क्यों खाल उतरवाऊं?' पर जब दीपो उसे मीठी-सी नजर से देखती, तो उसका अंतर हिल जाता। शरीर का ठंडा हुआ लहू खौल उठता। सारी बातों को 'कोई बात नहीं' कह कर भुला देता। नाली वाली बात जब भी चलती, तो ज्यादा बात न करता। पर जब दीपो उससे जवाब मांगती तो उसके मुंह से सच्ची बात निकल जाती— "हां, जाट की जमीन उसका पुत्र होती है, जैसे जमीन को हाथ डाला, वैसे ही पुत्र की गर्दन को।" दीपो यह बात आठों पहर चलाये रखती। उसे किसी के दिन-दहाड़े लूटने वाली बात अच्छी नहीं लगती थी। रोटी लेकर आयी दीपो ने जब फिर यह बात की तो कैलू ने अपनी छोटी-छोटी आंखों में तपिश भरते हुए कहा, "जैलदार से माथा लगाना पता है कितना कठिन है?. . . नाक घिसनी पड़ जायगी।"

"क्यों?" दीपो उसकी ओर क्रोधित हो कर ताकने लगी,"एक वही रह गया जबरदस्ती करने को. . . जब आदमी अन्याय की तरफ से आंखें मूंद ले, तो ऐसे ही अफरा-तफरी मचती है।"

"अफरा-तफरी मचाने की किस कंजर की हिम्मत है?" केवल ने रोटी के कौर को साग लगाते हुए हल्की-सी आवाज में कहा, "यहां तो बड़े-बड़ों को ठीक करके रख दें. . . यह तो है ही क्या चीज?. . . "

"नहीं भाई जी, इन्हें मैं बहुतेरा कह चुकी हूं, ये बस चुप रहना चाहते हैं। कहते हैं, हमें जायदाद की कमी है क्या!"

"यह भाई जी, भाई जी क्या लगा रखी है!" कैलू ने बात का रुख बदलने के लिए जरा संकोच से कहा, "और यह घूंघट न निकाला कर।" कैलू केवल की ओर देखकर हंस दिया, "देख तुझे अक्ल की बात बताऊं ? घूंघट बूढ़े-बुजुर्गों से निकालते हैं, यहां तो दूसरा एड़ियां उठा-उठा कर देखता है।"

"ले, यह तो. . . ।" दीपो घूंघट में ही हंस दी।

"यह तो क्या. . . उतार परे. . . ।"

"उतार दूंगी. . . कोई नहीं, अपनी तो घर की बात है।"

"यदि तुझे शर्म लगती है, तो मैं करूं हिम्मत।"

"अरे ले. . . " कहते हुए उसने घूंघट उतार दिया और केवल उसकी ओर एकटक देखने लगा। उसे अपने-आप पर कोई जादू-सा होता लगा; पर फिर जब दीपो हल्का-सा मुसकरायी तो उसकी आंखों में से चकित रह जाने का भाव लुप्त हो गया और पलकें नीची हो गयीं।

"अभी आपको थोड़ा समय शर्म आयगी. . . ।" कैलू ने छोटी-छोटी रीठे जैसी आंखें नचाते हुए छेड़ की। कैलू समझता था, इससे केवल उसके काम करता रहेगा। घूंघट से बंदा वैसे ही अपमानित-सा महसूस करता है। खेतों से आती हुई दीपो सारी राह और फिर घर में काम करती हुई केवल के बारे में सोचती रही। रोटी पकाते हुए वह 'छत्तड़े' के नीचे ईंधन लेने के बहाने गयी, तो शराब पीते उन दोनों को यूंही देखने चली गयी। पता नहीं उसके मन में क्या बात समा गयी थी; मन बहुत ही खराब हो जाता जब कैलू को केवल

के पास बैठा देखती। पीते-पीते वे इधर-उधर की हांकते, यूं हौसले वाली बातें कर रहे थे जैसे उनके सामने गांव में चिड़िया तक चूं नहीं कर सकती थी। कैलू का शरीर कमजोर होने के कारण वह शीघ्र ही चित हो गया। कैलू को मरे हुए कुत्ते की तरह पड़ा देख कर उसके अंदर जैसे पायल बज उठी। पर जब वह चारपाई से 'खंगूरा' मार कर उठा तो उसका मन उदास-सा हो गया। केवल ने रोटी-पानी वाले कमरे के पास आकर आवाज दी, "ताई?"

"हां. . . !" भीतर से नरम-नाजुक स्वर उभरा; क्षण भर बाद दीये की लाल-पीली रोशनी में दीपो आ गयी। उसका कसा हुआ शरीर केवल को एक नरम टहनी-सा लगा. . . । "ताई कहां है?"

"वह तो सोयी पड़ी है भीतर।" दीपो की आवाज में छनछनाती हुई हंसी थी। "रोटी डाल रखी है जी. . . " केवल को चुपचाप गुमसुम-सा खड़ा देख कर उसने फिर कहा, पर दुबारा 'भाई जी' वह नहीं कह सकी थी।

"उसने अब रोटी क्या खानी है। सुबह इकट्ठी ही खायगा।" केवल को कंपकपी-सी महसूस हो रही थी।

"यह तो दिखायी ही देता है।" दीपो ने जल कर कहा और फिर जल्दी से बरामदे की ओर बढ़ते हुए बोली, "मां-बाप ने भी पिछले जन्म का कोई बदला लिया है. . . ।"

"वैसे खतरे वाली तो कोई बात नहीं।"

"कोई बात नहीं. . . जी. . . तू रोटी खा. . . पीढ़ी ले ले. . . ।" यह सुनते ही केवल की शराब उतर गयी। पल भर तो वह असमंजस में पड़ा रहा। फिर न जाने मन में क्या आया कि बाहर वाले दरवाजे की ओर चल पड़ा। उसकी चादर की खड़खड़ाहट सुन कर दीपो उसके पीछे आ गयी।

"तू रोटी खा कर जाना. . . घरवाले खा-पका कर सो गये होंगे. . . दूसरे, कहां आधी रात को दरवाजा खटखटायगा।"

केवल उसकी ओर बगलों में हाथ दबाये देख रहा था। जाने को उसका जी नहीं चाहता था। उसे लालसा से देखता हुआ केवल रसोई के दरवाजे के सामने आ गया। उसने आती हुई दीपो की बारीक खनकती हुई हंसी सुनी। "बखत पर कहां खिसक चला था?"

केवल ने होंठों में हंसते और सिर हिलाते हुए 'हूं' कहा। दीपो ने दोबारा चूल्हे में आग जला कर रोटियां गर्म कीं, ठंडे हुए साग को गर्म करके उसमें और घी डाला। रोटी खिलाते-खिलाते वह छोटी-मोटी बातें करती रही; रोटी खाकर शशोपंज में पड़ा केवल, जाने लगा तो उसने उसकी बांह पकड़ ली। केवल हांड़ी के दूध की तरह खुशबू छोड़ते उसके चेहरे की ओर ताकता रहा और फिर. . . । और फिर वह जब काफी रात गये वहां से चला तो दीपो ने उसे वहीं सो जाने के लिए कहा. . . पर वह नहीं माना। बाहर वाली गली में दाखिल होते ही उसे हवा लगी तो नशा और तेज हो गया। गिरता-पड़ता, हवा में उड़ता वह चला जा रहा था। धर्मशाला के पास पहुंच कर उसे मुंह सिर लपेटे हुए किसी आदमी का आकार दिखायी दिया। जब जरा और नजदीक हुआ तो छीलो मजहबन के घरवाले की 'ढीचकूं चाल' को वह पहचान गया।

"कौन है भई?" पहचान कर उसने रौब डालते हुए पूछा।

"मैं हूं, सरदारा।"

"रुक कर मेरी बात सुन. . .हुं।" केवल ने इधर उधर झूलते हुए लड़खड़ाती आवाज में कहा, "अपनी छीलो को कहना—अगर. . . खेत में देख लिया, तो उसकी ऐसी की तैसी कर दूंगा. . .पहले वाली बात नहीं रही अब . . . । उसकी कोई जरूरत नहीं।"

मजहबी 'सतवचन' कह कर चला गया।

सर्दी का मौसम होने के कारण सारा गांव घरों के अंदर सोया पड़ा था। रात काफी गुजर चुकी थी। उसने अपने दालान के किवाड़ों को जोर-जोर से खटखटाते हुए इतनी ऊंची-ऊंची आवाजें लगायीं कि आस-पड़ोस को परेशान कर दिया। दरवाजा जल्दी न खुलने के कारण केवल 'बुरा-भला' भी बक रहा था। रात तो किसी तरह बीत गयी, पर तड़के पशुओं को चारा डालते हुए उसका बाप बिगड़ा हुआ फिर रहा था। परिवार के और लोग चाय पी कर कामकाज में लग गये थे। चाय पीता हुआ केवल बाप की कुड़-कुड़ से ऊबा बैठा था। रात वाली बात को लेकर बापू ने बेगानी स्त्री पर सारा जहर उगल दिया था। बचने को उसकी ढिठाई पर भी गुस्सा आ रहा था।

"इससे तो आदमी चुल्लू भर पानी में डूब मरे—ऐसी कुत्तेखानी से तो. . . ! बेगानी गली की स्त्री की गलें चाटता फिरता है. . . !"

"ज्यादा बोलने की जरूरत नहीं!" केवल ने बापू की ओर आंखें निकालते हुए अकड़ से कहा, "तेरे घर में मुड़कर पैर नहीं रखूंगा।"

"अभी क्या तू फेरे लेने[1] आया है?"

"तो तुम फेरे देने को कहते हो?" केवल ने आंखें चौड़ी कीं तो पंजाब कौर उसकी ओर दौड़ी-दौड़ी आयी।

"हाय वे पुत्तर ! परमात्मा के वास्ते. . . । तुझे कोई कुछ नहीं कहता. . . तेरा जहां जी करे, रह।"

"अगर तेरी दाढ़ी को हाथ पड़ना है[2] तो ब्याह कर देता। " केवल ने चादर इकट्ठी करते हुए ऊंची आवाज में कहा। उसकी गर्दन की नसें उंगलियों की भांति तनी खड़ी थीं।

"तुझे किसकी बेटी उठाकर ला दूं कंजरा।"

"तो फिर भौंकता क्यों है? तू साला नहीं लगता?" बचने को यूं लगा, जैसे उसकी आंखों में कंकर पड़ गये हों। पर फिर भी उसने कहा, "जा निकल जा यहां से, कुत्ते के पुत्तर। अगर यहां आया तो टांगें तोड़ दूंगा।"

"टांगें तोड़ देगा, यह. . . ! पहले तो कई लंगड़े किये होंगे तूने।" और फिर बेटी की गाली देकर, "मैं आऊंगा। देखूंगा कौन साला मुझे रोकता है।"

"बस वे, कल जोगिया। जा-जा, जहां मर्जी घूम, हमारी बला से।" पंजाब कौर उसे धक्के देकर बाहर निकाल रही थी।

---

1. शादी के लिए फेरे लेने होते हैं। पिता बेटे पर व्यंग्य कस रहा है।
2. इज्जत पर आंच आना

"परे हो जा।" केवल ने धक्का देकर पंजाब कौर को परे ढकेल दिया, "ऊपर चढ़ी आती है।" वह उलटकर फावड़े पर जा गिरी और लकड़ी की अनगिनत छिलतरें उसके जिस्म में धंस गयीं। वह वहीं पड़ी सूंडी की तरह बल खाती तड़पती रही. . . ।

चलते हुए केवल की रस्से वाली बांह पीछे को खिंच गयी। केवल ने झटपट पीछे मुड़कर देखा, बछड़ा जमींदारों के भूरे रंग के कुत्ते से डरा खड़ा था। बछड़े को शिशकार कर केवल जवार के खेत की ओर जाती पगडंडी पर हो लिया। उसका दिल न उदास था, न ही प्रसन्न।

4

चारे का गट्ठा बांधकर सिर पर टिका, जब वह रास्ते पर आया, आगे से बेबे उसे रोटी लिये आती दिखायी दी। बड़ी उम्र होने के कारण, उसका शरीर दिन-ब-दिन सूखता-सिकुड़ता जा रहा था, फिर भी उसके पैर इतने तेज चल रहे थे कि केवल को बेबे पर तरस आया। अलग होने के बाद घरवालों के साथ उसकी ज्यादा निकटता नहीं थी। पर बेबे उसे आते-जाते बुला लिया करती थी। "चारा काट कर लाया है पुत्तर?" पास आ कर बेबे ने जैसे मोह-प्यार से पूछा। केवल 'हां' ही कह सका। बेबे आगे बढ़ गयी। केवल उसके बारे में सोचने लगा। वैसे उसे हमेशा ही बेबे पर तरस आया था। पर जब कभी बेबे उसे 'समझाने' आती, तो उसे खीझ चढ़ती. . . पर बेबे उसे सदा 'गरीबनी' ही लगती थी। . . तब भी बेबे को धक्का देकर वह बहुत पछताया था. . . फावड़े पर गिरने से बेबे की कलाई हिल गयी थी। सारे घरवाले आंच पर चढ़े पानी की तरह खौल रहे थे। लीखा इतना गुस्सा हुआ फिरता था कि उसका इरादा केवल की टांगें तोड़ने का था। बेबे फिर भी उसे शांत करना चाहती थी, "वह तो पागल है, आप तो सयाने हो।"

"पागल सारे परिवार पर लट्ठ चलाता रहे. . . सयाने जूतियां खाते रहें. . . चुपचाप वह बहुत अच्छा सयानापन है . . . इसी सयानेपन ने तेरी कलाइयां तोड़ी हैं।" बचने ने क्रोध में आकर पंजाब कौर को आखरी बात कही,"चुप करके पड़ी रह, अगर ज्यादा ही लाड़-प्यार है, तो उसके साथ ही उजड़ जा। दोनों लड़ते रहना. . . हर रोज तेरे बाल नोचा करेगा।"

पंजाब कौर फिर नहीं बोली; बेशक केवल ने उसका दुख नहीं पूछा था, पर वह मां ही थी। केवल घर आता, मनमर्जी का खा-पी जाता। इस बात पर भी लीखा गुस्से में था। काम करने को वह और ऐश करने को केवल। पर केवल घर पर अपना अधिकार समझता था। उसे अपने हिस्से आने वाली चार किल्ले जमीन का अभिमान था। इसी तरह एक दोपहर केवल काढ़नी में से दूध लेकर पीने लगा। बंतो ने घरवालों के कहने पर रोका भी, पर केवल चुपचाप दूध पीता रहा। दीपो की बातें सुना-सुनाकर बंतो केवल का मजाक करती रही। केवल अभी दूध पी ही रहा था कि लीखा बाहर से आ गया। उसने आते ही आंखें निकाल कर कहा।

"भाई, अब तू अपना इंतजाम कर ले. . . न काम करता है न धंधा।"

"क्यों. . . तू क्या कहता है?"

"मैं ही सब कुछ कहूंगा !"

"मैं तो दूध पीऊंगा, रोके मुझे कौन रोकता है।"

" ले, अब पी फिर —!" लीखे ने कोने में पड़ी लट्ठ उठा ली।

"अरे लीखे ! तू चुप कर, कोई नहीं, पी लेने दे।" बंतो डर गयी थी। पर उसकी किसी ने न मानी। लीखे ने बंतो को हाथ से पीछे धकेलते हुए कहा, "तू परे हट जा।"

"ले, मैं लगाता हूं हाथ।" केवल ने खड़ा हो कर, डोलची उठाते हुए दूध वाली हांडी का ढकना उतारा। जैसे ही केवल ने डोलची में दूध डाला, लीखे ने लट्‌ट उसके चूतड़ों पर दे मारी। दूध वाली डोलची नीचे गिर गयी। केवल झुंझलाकर लीखे से चिमट गया। उनको एक-दूसरे को रौंदते-मसलते हुए देखकर बंतो कभी एक को पकड़ कर खींचती, कभी दूसरे को। घर में इतना कोलाहल, इतना शोर-शराबा मचा कि पड़ोसी वहां आ गये। लोगों ने दोनों को शांत किया। केवल गाली पर गाली दिये जा रहा था।

"तेरी हड्डियां-पसलियां न तोड़ीं, तो नाम नहीं।" लीखा अपने बाल बांधते हुए दांत पीस रहा था, "जो तूने हमें खज्जल ख्वार[1] किया है— बड़ी गैरत वाला है तो शरीकों के घर में गुलामी क्यों करता है, साले।"

सयानों ने लीखे को समझाते हुए कहा, "यदि उसे लाज-शर्म हो, तो वह शरीकों की गुलामी क्यों करे? हैं. . . । कुछ समझ करो। आपस में सुलह-सफाई रखो। शांति जैसी कोई चीज नहीं। दुख तो बहुत हैं. . . शहतीर जैसा जवान शरीकों के यहां क्यों रहता है? पर मुंह फाड़कर नहीं कहा जाता; कहते हैं न कि पेट कटेगा तो आंतें ही बाहर आयेंगी . . . ऐसे ही वे कंजर . . . खाऊ यार!"

"हम लोग चाची, बाहर मुंह दिखाने लायक नहीं रहे।" लीखे को इस बात का उतना गुस्सा नहीं था, जितना केवल के खाली बैठे रहने का।

"अरे पुत्तर। फिर क्या करें? न बुरा पैदा हो, न बुरा आय— मैं तो कहती हूं कि मन-दो-मन अनाज दे कर अलग कर दो। आपकी ओर से कहीं जाय, कहीं धक्के खाय . . .। है कि नहीं. . .।"

समझा-बुझा कर औरतें पंजाब कौर का दुख-सुख पूछने लगीं। बेटों को गिलहरियों की तरह लड़ते देख कर उसका दिल धौंकनी की तरह फड़क रहा था। गुरदयाल कौर ने उसे दिलासा देते हुए कहा, "पंजाब कौरे। धीरज कर। सब्र कर । आज-कल के बेटे-बेटियां नहीं किसी के. . . तेरे अकेली के साथ थोड़ी हुई है। यह तो वही बात है न, कि कोठे चढ़ कर देख ले, घर घर यही आग। अब तो न जाने अपने गांव में क्या भूत आ घुसा है, आदमी आदमी को देखकर काट खाने को आता है। 'आदम बो आदिम बो' करता फिरता है। . . . तू जी को मजबूत रख। कोई बात नहीं, सब ठीक हो जायगा—वह देख मानों के हलवाहों की क्या बदनामी हुई है? इतना बड़ा परिवार, जिसकी दूर-दूर तक ख्याति थी। कहीं कोई कहा नहीं टालता था। अब कोई टके सेर नहीं पूछता. . .भई कैसे पूछें ! बेगानी बेटियों का घर में पैर पड़ा नहीं कि घर टुकड़े-टुकड़े हुआ नहीं। कोई बात नहीं, हौसला रख। खर पतवार भी तो खेतों में ही उगती है।". . .

ये बातें सुन कर पंजाब कौर के भीतर से एक लंबी आह निकलती; उसका मन बस में न रहता। आंखों में खारा पानी उतर आता। घर में उठा झगड़ा अभी समाप्त नहीं हुआ था। लीखे ने बचने को खूब मजबूर किया , "इसे अभी अलग कर," उसने कहा। अजायब हस्तक्षेप नहीं करता था। उसका दिमाग उलटा यह सब कुछ देखकर बैरागी-सा हो जाता।

---

1. बेइज्जत

केवल कई दिन घर नहीं आया। घर के झगड़े के कारण उसका दिल बहुत ही खराब हुआ। सारा दिन उसका दिल न लगा। वह पल-पल यही सोच रहा था, 'क्यों क्लेश बढ़ाया? पर घर में मेरा कोई अधिकार नहीं? . . . मेरी भी तो जायदाद है।' फिर वह दीपो के साथ इतना रम गया कि क्लेश वाली बात भूल ही गया। गंडे के घर में नाली वाला झमेला उतना उलझा पड़ा था कि किसी को कोई राह नहीं मिल रही थी। कैलू और गंडा जैलदार के साथ सींग फंसाना नहीं चाहते थे। पर दीपो बार-बार कहती थी कि वह उन लोगों से किस बात में कम है? साथ ही वह यह भी समझती थी कि आज शरीक नाली खोद रहे हैं, तो कल को जमीन रोक सकते हैं। दीपो उठती-बैठती यही बात छेड़ती थी। केवल उससे सहानुभूति प्रगट करता था। पर पता उसे भी नहीं था कि उन्हें आखिर करना क्या है? खेत में पछेती गेहूं के लिए मुंडेरें बना रहे थे कि दीपो चाय ले कर गयी और वही बात फिर छिड़ी। कैलू दूध जैसी चाय को देखता रह गया। फिर घूंट भरते हुआ बोला, जैसे केवल को कोई दोष दे रहा हो, "यार हम बात तो बनाये जा रहे हैं, लेकिन करेंगे कैसे . . .।" नाली खोदते समय बघेला बदमाशों की कतार ला खड़ी करेगा. . .इसके बारे में किसी को कुछ पता नहीं था।

"कोई पता नहीं किया, उसे नाली कब खोदनी है?" दीपो ने दूध वाले गिलास साफ करके डोलची में डालते हुए पूछा।

"अभी तो कुछ पता नहीं। शायद साला, मुंहजला पुलिस ला बिठाये।"

"पुलिस न कुछ और . . . ?" केवल ने अकड़ कर कहा। उनमें से फिर कोई नहीं बोला, जब उन्हें इसके संबंध में पता ही कुछ नहीं था। फिर भी वे जैलदार की बातें करते रहे। उसके खानदान और उसकी "करतूतों" की मैल धोते रहे। फिर अचानक दीपो बोली, जैसे उसे कुछ स्मरण हो आया हो, "मैंने तो सुना है, इसने कत्ल भी किये हैं. . . ।"

"बहुतेरा कुछ किया है. . . कोई एक कत्ल ! तीन-चार आस-पास के में, दो अपने ही गांव में; पर यह डरपोक बंदा है। बाई कहा करता है कत्ल करने वाला डरपोक होता है। देखा नहीं, टट्टी करने भी रैफल कंधे पर लटका कर जाता है।. . . यह नहीं मालूम कि जिस दिन आ गयी, लोग अंदर से निकाल कर मार डालेंगे।"

" आग लगे ऐसी जैलदारी को ! . . . जैलदारों की तो कहते हैं शान होती है, जैसे राजे हों। जैसे लोग बताते हैं, यह तो चूहड़े-चमारों से भी गया-गुजरा है।"

"बापू बताया करता है" केवल ने घुटनों को बाहों से बांधते हुए कहा, "इस जैसा तो कोई गुस्सैल स्वभाव का आदमी नहीं होगा। पांच भाई थे; एक को तो अंदर ही मार दिया, बाहर शोर मचा दिया कि दौरा पड़ गया। एक छोटा था इससे—हरमेला, उसे मार-पीट कर वैसे ही निकाल दिया गांव से ! एक वैसे ही बाहर रहता है; उसकी जमीन भी जैलदार साहब दबाये हुए हैं. . . एक और है, पतला लंबा-सा, वह भी अफीम का मारा हुआ है।"

दीपो ने बीच में बात काट कर पूछा, "तो फिर यह जैलदार कैसे हुआ?"

"इनके पुरखों के पास जैलदारी थी। उसी की तड़ी में लोगों पर रौब डालते हैं।" बरतन मांज कर दीपो जब चलने लगी, तो कैलू ने उसे चेतावनी देते हुए कहा, "ऐसे ही बां-बां कहीं और न करने लग जाना।"

"ले ! मैं क्या आप जैसी हूं।" दीपो ने नखरे के साथ होंठ अटेरे और कैलू बगैर बोले चल पड़ा। दीपो बरतन सिर पर रख कर, हरियाली भरे खेतों में से होती हुई गांव को चल दी। गहरी-मीठी ऋतु में हलवाहे गीत-गाते बोआई का काम कर रहे थे। जैलदार के खेतों में लाल ट्रेक्टर घूम रहा था। कमजोर जाटों की तो अभी कपास उखाड़ने वाली थी। उनके खेतों में घास पगली औरत के बालों की तरह उलझी पड़ी थी। रास्ता-चलते, उसके कानों में चरवाहे लड़कों के कड़वे तल्ख बोल पड़े। कुछ लड़के भैंसों पर चढ़े "स्पीकरों" में बजते गानों के बोल तान ले कर गा. . . रहे थे। कुछेक मुंह-सिर लपेटे खेल रहे थे।

"तेरी बेबे के. . . ।" दीपो के कानों में इतनी गंदी गाली पड़ी कि दीपो भौंचक्की-सी उधर देखने लगी। "तेरी बहन को. . .।" दूसरे का जवाब सुन कर दीपो ठोकर खा कर गिरते-गिरते मुश्किल से बची। "चुप करो रे, कैले की बहू आ रही है।" किसी सयाने लड़के ने जैसे उन्हें डांटा, तो वे सारे मुंह उठा-उठा कर दीपो की ओर देखने लगे। उसका मन बहुत ही खराब हुआ। वह उसी तरह सोचती चलती गयी। तब चूहड़ियों ने तो कमाल ही कर दिया। रोटी लेकर जाती दीपो को एक दिन मजहबनों की एक टोली मिली। उनके पीछे-पीछे जाती दीपो ने उनकी बातें सुनीं। वे जाटों के शौकीन लड़कों के बारे में बातें कर रही थीं। एक़ चपटी नाकवाली मजहबन कह रही थी, "अरी तुझे एक बात बताऊं, जाटों के लड़के को काबू करना तो बहुत ही आसान है. . . परसों बहन, हम नंबरदारों के भुट्टे निकालने गयीं। उनका बड़े से छोटा लड़का है न सुंदर-सा . . . अरी. . . वह यूंही गधी के बच्चे की तरह मस्ती में उछल-कूद करता फिरे. . . मैंने आंख मारी, तो हंस पड़ा। आधी बाल्टी ज्यादा भुट्टों की लायी और चार गट्ठे चारे के दे दिये।"

"बड़ी चालाक है तू।" एक चंचल-चुलबुली-सी मजहबन ने निकट होकर पूछा।

"चालाकी काहे की, ब़हन ! यात्रियों ने रात काटनी, तेरी उठा न मसीत ले जानी—घर में बच्चे भूखे बैठे थे. . . ।"

"अरी एक और बात सुन।" एक और मजबहन ने बात को आगे चलाते हुए कहा, "देख ले. . . अब अपने भी आदमी ही हैं। बीमारी लगे इन्हें, ऊपर हो-हो कर गिरते हैं। . . . बेशक घरों में जाटनियां हैं, फूल सी।"

"वैसे ही भूंजे वालों को पागलपन उठता है।" उसी चपटी नाक वाली मजहबन ने फिर कहा, "जितने अकड़खान घर हैं . . . उन्हीं के बाल-बच्चे मारे-मारे फिरते हैं. . कम्बखत . . . जैसे आग लगी हुई है, जलते-भड़कते फिरते हैं।"

"शाम के समय, प्लेग पड़ जाने यूं घूमते-फिरते आवाजें देते हैं, जैसे बस लुटाने ही आये होते हैं।"

"देते रहें। हमारी सुने जूती। इन कुत्ते जाटों को तो. . . ।" एक गंभीर-सी मजहबन ने होंट चबाते हुए नाक चढ़ा कर कहा, "मैं तो उनको उलटी जूती भी नहीं मारती, कमबख्तों को।"

दीपो धीरे-धीरे उनके पीछे चलती गयी। अचानक एक मज़बहन ने पीछे मुड़ कर देखा, तो यूं बोल उटी, जैसे चोर सेंध लगाते हुए पकड़ा गया हो। "थू री ! . . . अरी देखो

न री . . . नासपीटियो . . .?" वे सब पीछे मुड़ कर देखने लगीं और खिसियानी-सी होकर इधर-उधर की बातें करने लगीं, पर दीपो का मुसकरा कर आगे बढ़ जाना उन्हें नश्तर की तरह बेध गया।

उन्होंने अपने मन के गुबार निकाल दिये।

"ले, ऐसी कौन-सी भलीमानस होती है!यहीं जरा हल्के-हल्के कदम रख रही है, पीछे बीस-बीस, बिलखते-बिलबिलाते छोड़कर आयी होगी।"

"चुप करो री। बोलते समय आगे-पीछे भी नहीं देखती। छंटी हुई न हो कहीं की।"

दीपो मन ही मन कुढ़ती, तेज-तेज कदमों से आगे बढ़ गयी। अभी इन्हीं सोचों में डूबी हुई थी कि रास्ते वाली पुलिया के पास पहुंचते-पहुंचते उसके कानों से खनखनाते हुए शब्द टकराये– "हाय रे मर गये यार, ठंड बड़ी है, जाड़ा कैसे कटेगा।" 'लट्ट वालों' का लड़का और उनका साझी, कपास की लकड़ियां लादते हुए दीपो की ओर भूखी निगाहों से देखने लगे। वह चुपचाप, ध्यानमग्न, तेज-तेज कदमों से आगे चलती गयी। पर तीखी और जला देने वाली आवाज उसके कानों में एक बार फिर गूंजी।

"रेशमी रजाई का मजा तो बस केवल ही लेता है।" दीपो ने पीछे मुड़कर देखा, छकड़े के पास काला मुंह, सांप की तरह चमक रहा था। ऊपर गट्ठे पकड़ रहे लड़के ने कपास की लकड़ियों की धूल जैसी बोली मारी।

"हत तेरे की. . .हे. . .हे. . . गयी रे. . ." लड़कों ने ऐसे चीखें मारीं कि राह चलते लोगों को कहीं शक न हो। दीपो मुंह में बड़बड़ाती हुई आगे चलती गयी। गांव के बाहर वाले रास्ते पर धूल के बादल उड़ रहे थे। चौपाल के पास पहुंचते ही उसने दुपट्टा खींचकर सिर पर कर लिया। चौपाल के पास से जाते-जाते उसने घिघियाई-सी आवाज सुनी।

"यह कौन है?" दीपो मन में कुढ़ती हुई आगे निकल गयी। ज्यादातर लोग चौपाल को घर से निकाले गये लोगों की कचहरी कहते थे। गांव के काम से थके-हारे और फालतू आदमी चौपाल में सारा-सारा दिन आसन जमाये रखते, कुछ शौकीन और खाली लड़के भी इनकी बातों का मजा लेते। जब दीपो वहां से गुजरी उस समय चौपाल में काली नरैणा, जागर पेंशिनिया और लंगड़ा महली जैसे लोग बैठे थे।

" बूढ़े ! यह है गंडे के कैलू की बहू. . .समझे।" जागर पेंशनिये ने बात जरा मजाक से की।

"बहू का क्या कहना. . .। ससुरी की चाल ही बताती है. . . लड़का तो ससुरा गंडे जैसा ही है, सींकिया" लंगड़े महली ने पासा बदलते हुए भौंहें चढ़ायीं और फिर जैसे चिंता से कहा, "मुझे तो डर है, यह बाप-बेटा बहू संभाल भी लेंगे?"

"न ये संभालेंगे, संभालने वाले बहुत निकल आते हैं।" इस बात पर हल्की-सी हंसी उभरी, पर सारे हीं हीं. . . कर के चुप हो गये। "बहू तो बहू. . .मैं तो कहता हूं, यह जमीन संभाल लें, वही बड़ी बात है। बघेलू जबदस्ती दबाये जा रहा है।" पिछले चबूतरे से उठकर आते हुए काली नरैणे ने यूं बात की, जैसे उसके भीतर बेशुमार कड़वाहट करवटें ले रही हो। "निहंगा! गंडे जैसे गीदड़ों ने क्या करना है? ऐसे कामों में तो शूरवीर ही सफल होते

हैं। यह तो औरतों से भी गया-गुजरा है। अगर ऐसा ही लायक था तो पहली घरवाली साले की, कोटे-दीवारें क्यों फलांगती रही . . . फिर देख ले. . . सयाने कहते हैं. . . बेटियां सबकी सांझी होती हैं. . .वह राख उड़ी, जो न उड़नी हो. . . और अब देख ले. . . लड़के को नाक पोंछने की समझ नहीं, कच्ची गरी जैसी बहू ला दी—जो राख-मिट्टी उड़ती है, उसका हम सबको पता ही है. . . ।"

जागर पेंशनिये की बात सुन कर सारे अवाक रह गये, जैसे उसका कथन जरा भी झूठ नहीं था।

"उसका क्या बना, भई?" निहंग ने नाली वाली बात फिर पूछी। "बनना क्या है अगलों ने चुपचाप नाली बना लेनी है; गंडे ने तो चूं भी नहीं करनी, अगर कर गया तो मुझे कहना।"

वह फिर नहीं बोले। वैसे पेंशनिया झूठ नहीं बोला था। रेली का चरनी गुलाबी पगड़ी बांधे फूट रही मूंछों पर यूंही हाथ फेर रहा था। अपनी बनी-संवरी आंखें मटकाते हुए उसने कहा, "भई ताऊ ! जैलदार की भी तो बहुत हिम्मत बढ़ गयी है. . . है न? पहले देख लो, पंचैत वाली जगह जबरदस्ती घेर ली. . . पंचैत वाली साझी जमीन कहते हैं, यह कई बरस बिना लगान के जोतता रहा।"

"और तो और, फौजिया। अपने गांव में "छन्नों" वालों की जमीन होती थी। अब तो वे बेच गये। इस पीर ने दस साल दबाये रखी, अगले थे जोर वाले, उन्होंने बदमाश बुला कर कब्जा ले लिया।"

"बदमाश तो उसके पास भी बहुत आते हैं।"

"यदि हाथ देखने हैं तो बराबर वाले के साथ हाथ मिलाये न ! कमजोर को तो हर कोई दबा लेता है।" फौजी अभी तक होंठ चबा रहा था।

"हां तो फिर कटड़ा-कटड़ी निकलेगा।" लंगड़े ने हल्की-सी आवाज में कहा, "फिर आयगा मजा. . .नमक-मिर्च का। . . .यह भई यूं नहीं आता लपेट में . . . बंदा बड़ा तीखा है साला. . . बड़ा चालाक है, चुपचाप रहता है, पर जो उसके हत्थे चढ़ गया, लोटन-कबूतर बना देता है . . . अरे ससुरो. . . जो अपने भाइयों का न हुआ, वह तुम्हारा कहां से हो जायगा . . . है न! अरे यह तो सांप की नसल से है. . . सांप की नसल !" लंगड़ा महली नसवार लेते हुए कुछ न कुछ बोल रहा था।

"वैसे ताऊ," चरनी ने बात छेड़ी, "बघेला पूरा सकीमर है। देख ले. . . कहीं थाने के साथ, कहीं कांग्रेसियों से. . . कहीं अकालियों से यारियां।"

"इसे टट्टू पता है. . . पर्टियों के बारे में. . . ! कमजोरों के साथ धक्का-शाही करने के बहाने ढूंढ़ता रहता है।"

"हां. . . " लंगड़े महली ने बोल को लटका कर जरा रंग में आते हुए कहा, "यह बात तो है। . . .तभी तो गंडे की जमीन के बीच में से नाली निकाली। पर. . . भई. . . ऐसे दबा लेगा यह? ऐसे होता सुना तो कहीं नहीं. . . यह तो नयी बात है।"

"हां. . . हिजड़ों की जमीन ऐसे ही दबायी जाती है।" फिर वह अपनी नरम-सी आवाज में जरा अफसोस से कहने लगा, "समय के रंग है भाई । कई घरों का तो अब काफिया तंग हुआ पड़ा है, कई तो भाई कमा गये. . . बचने को ही लो. . . जवान-जहान बेटा घर से चला गया। कोई अता-पता ही नहीं मिला. . . बड़े लड़के का दिमाग टीक नहीं रहता। न जाने कब पागलपन उठ खड़ा हो—एक और है शौकीन-सा, वह देख लो, गंडे की बहू पर जान न्यौछावर किये बैटा है।"

"ये भी किस्मत की बातें हैं।" लंगड़े महली ने ठंडी आह भरी। उसका कोई भी लड़का ब्याहा नहीं गया था।

"चल, उससे तो कुछ होगा नहीं। केवल के मजे हैं।" चरनी ने मुसकरा कर कहा, जैसे उसका मुंह मिश्री जैसा हो गया हो। फिर ऐसी ही लुच्ची बातें करते-करते इतनी हंसी मची कि पहली बात को सारे भूल ही गये। इस जोर की हंसी में धीरे से मुख्त्यारे ने एक और बात आकर जोड़ दी, वह यह थी कि गंडा और उसका बेटा केलू "ऊपर अर्जी देने गये हुए हैं।" वह तो बता कर एक तरफ हो गया और वे सारे फिर उसकी छानबीन करने लगे। और यह बात झूट भी नहीं थी। गंडे ने अंदर ही अंदर बहुत भाग-दौड़ की थी। पहले तो उन्हें कोई राह नहीं मिल रही थी। फिर करतार पटवारी ने उन्हें टीक रास्ता बनाया। उसके कहने के अनुसार उन्होंने तहसीलदार के वहां 'फरियाद की अर्जी' दी, पर बना कुछ नहीं। सौ बीसी रुपये खिलाकर गंडा घर आ बैटा क्योंकि इसकी नकल लाने के लिए उन्हें न जाने कहां-कहां की खाक छाननी थी। और रुपये भी शायद बेहिसाब लगते। जब गंडे ने घर आकर 'कोई नहीं' कह कर यह बात बतायी तो उन सभी को बिजली का झटका-सा लगा। वे सारे एक दूसरे की ओर यों ताक रहे थे जैसे लकड़ी के रंगीन खिलौने टकटकी लगाये देख रहे हों।

चलते-चलते केवल की गर्दन पीछे को खिंच गयी। केवल को अपनी गर्दन में से गर्म-गर्म भांप-सी "शं-शूं" करती निकलती महसूस हुई। बछड़ा चारे के गट्टे में मुंह गाड़े खड़ा था। जब उसने रस्सा पकड़ कर बछड़े को "हत तेरी. . . " कहते हुए पैणी मारी, तो क्षण भर पहले की बात फिर याद हो आयी। पर फिर उसे बछड़े के चारा खींचने का डर हुआ...।

5

शाम के समय जब केवल खिली कपास देखने के लिए चला तो गली पार करते समय सरदारे के घर में कुछ शोर सुनायी दिया। पल भर रुककर उसने देखा, तो पता चला कि सरदारे का बड़ा लड़का अलग होने के लिए टंटा खड़ा किये हुए था और सरदारे ने अपने साले को फैसला करने के लिए बुला रखा था। बड़े लड़के की सरदारे और छोटे लड़कों के साथ खूब 'तू-तू. . . मैं-मैं' हो रही थी। "जाटों के घरों से ये झगड़े नहीं जायेंगे।" कहता हुआ केवल खेत की ओर चल दिया। और साथ ही उसे अपने 'बंटवारे' की बात याद आती गयी। और लोगों की तरह तो बेशक बखेड़ा नहीं हुआ था, पर जो बात बाद में निपटी, उसने केवल के अंदर सदियों की खाई पैदा कर दी थी। सरदारे की तरह, उन्होंने भी निपटाने के लिए सुखदेव को बुलाया था।

तब घरवाले, केवल से इतने तंग हो चुके थे कि बचना भी उसे अलग कर देना चाहता था। पंजाब कौर की कलाई टूट जाने के बाद केवल ने घर में पैर नहीं रखा था। बापू दूसरे दिन ही सुखदेव को लेने चला गया था। सुखदेव घर में नहीं था। सुखदेव की माता, निहाली ने बचने का उड़ा हुआ चेहरा देखा तो कलेजा थाम कर बैठ गयी। सुखदेव की बहू नसीब कौर से चाय और खाना बनाने के लिए कह कर, खुद उसने 'मसले-निताड़े' की बात पूछनी चाही। बचना इतना उदास था कि उसे बात करने के लिए शब्द नहीं मिल रहे थे। क्षण भर शांति से बैठा तो उसका मन थिर हुआ। धीरे-धीरे उसने सारी बात बता दी और केवल को अलग करने वाली भी। जब निहाली ने अलग करने का कारण पूछा, तो बचना बोल उठा—

"बात कोई हो तो बताऊं। केवल ने उल्टे लच्छन पकड़े हुए हैं। महीना भर हो गया, शरीकों का काम-धंधा करते हुए। छोटे-बड़े सभी बातें बनाते हैं. . . ऐसे ही वे लोग भी हैं। काम की खातिर जवान-जहान बहू की इज्जत मिट्टी में मिला रहे हैं।"

"वाहे गुरु। डरें उस कलंगी वाले से. . . ।" निहालो ने छाती दोनों हाथों में कस कर थाम ली।

"न जाने, आजकल के लोगों को क्या हो गया है?" दोनों चूल्हे-चौके की ओर ताकने लगे। नसीब कौर गर्म आवाज में कह रही थी, "कोई आगा-पीछा भुला कर, पार्टियों में घुसा फिरता है. . . कोई शरीकों का काम-धंधा करता है।" गिलास धोकर पानी छनकाते हुए वह फिर बोली, "किसी बच्चे की फिक्र नहीं और न ही किसी सयाने की। यदि यही रंग-ढंग अपनाने थे, तो ब्याह काहे को करवाना था, छड़ा-मलंग होता तो कहीं भी घूमता-फिरता. . .।"

"अब बस भी कर न, सारा दिन रोते-पीटते रहें— भला कुछ हाथ आयगा?" बहू के मुंह से पुत्र की बुराई निहालो से सहन न हो सकी, पर इतने बड़े परिवार का काम खींचती फिरती बहू को डांट भी नहीं सकती थी।

". . . मुझे तो पहले ही उस लड़के के लच्छन अच्छे दिखायी नहीं देते थे. . . " अजैब के विवाह में भी गड़बड़ नहीं की थी. . .!" उसने बहू की टिप्पणी को नजर-अंदाज करते हुए कहा, "इन लड़कों को क्या हो गया है. . . ?" फिर बहू की ओर देख कर भाई से कहा, "तुम सयाने हो भाई । दोष इसका भी नहीं। जवान-जहान है आखिर. . .इस उम्र में खाना-पहनना ही रास नहीं आता. . .पर करें क्या ? अपना ही पेट है। किसके आगे नंगा करूं कि मेरे बेटे में यह 'बुराई' है।"

"वह सुखदेव की बराबरी कैसे करेगा? यह शराब तो नहीं पीता . . . तुम्हें लोग तो बुरा नहीं कहते?. . . और हम तो कहीं खड़े होने के लायक नहीं रहे। आने दो आने का आदमी भी उठ कर सड़ी हुई बात कह देता है।" जब प्रत्येक बात से केवल को अलग करने का अंदाजा कर लिया तो निहाली ने चुनौती देते हुए कहा, "आपस में टिक-टिका और समझौता कर लो, छड़े-अविवाहित पुत्र को अलग करोगे, लोग लूट कर खा जायेंगे और साथ में बदनामी भी होगी। उसे बिठा कर समझाओ कि भाई कबीलदारों के बेटे-बेटियां यूं करते शोभा नहीं देते।"

"बहुत समझाया है निहालो।. . . उसके खाने एक नहीं पड़ती. . . खैर. . . जैसे सुखदेव कहेगा वैसे ही कर लेंगे।"

"हां. . . सवेरे जल्दी वापस आ जायगा. . .यहां नंबरदारों से कच्चाईध मची हुई है . . . कोई बात नहीं, किसी बात का झगड़ा नहीं. . . इसे तो 'जाए खाने' जैसे खाने को आते हैं। गेजे चूहड़े के पास एक बछड़ा था, बला का सुंदर। मजहबी को पशु पालने का बेहद शौक है. . . आये साल कोई न कोई पशु बेचता है।. . . और भई।" निहालो ने ऊपर के मोटे और मैले कपड़े से नाक साफ करते हुए बात को आगे बढ़ाया, "नंबरदारों की उस पर नजर थी कि ले जाना है. . . तुम तो सयाने हो। जिसने जी-जान से पशु की सेवा की हो, वह भाई यूं मुफ्त में कहां से दे देगा?. . . नंबरदारों का लड़का है, बीरा। 'औतरे का' बकरे जैसा है। कुछ ज्यादा ही रौब दिखाता है, अगर भई आपके मोटी जायदाद है तो क्या आप लोगों को पैरों तले लिताड़ेंगे?. . . हां तो. . . गेजे का अपने सुखदेव के पास बैठना-उठना है और दूसरे यह तो गरीब-गुरबे पर वैसे भी तरस खाता है। नंबरदारों का लड़का बस दो सौ दे कर बछड़े को खोल कर ले जाना चाहता था. . . । तुम देखो . . . पूरब न पच्छिम . . . भला कभी ऐसा हुआ है. . . । मालिक अपने पशु का दाम बतायगा फिर तुम्हें ठीक लगता है तो लो, नहीं ठीक लगता तो अपना रस्ता लो। . . . बात क्या हुई . . . यह भी वहीं था। देख कर . . . शोर सुन कर सारा मोहल्ला इकट्ठा हो गया। मजहबी बछड़ा दे नहीं रहा था और भाई, दे भी क्यों. . . ? उसकी चीज है, यदि उसे ठीक लगे तो देगा. . .नहीं तो. . . ।

"मजहबी कहे, चौधरी, तुम ऐसे ही ले जाओ. . . । ऐसे ही ले जायें, साले हम कोई ब्राह्मण हैं। नंबरदार के लड़के ने कहा, अरे 'जाए खाने' के बड़ा सयाना बनता है। ठीक बात कर, जो और भी दो-चार को अच्छी लगे. . . । कहे क्या. . . कि जी बछड़ा छोड़ना भी नहीं और रुपया भी दो सौ से एक आना फालतू नहीं देना. . . । जब बात ज्यादा ही

उलझ गयी, तो सुखदेव ने भी कह दिया, कहा ही जाता है बाई। ठीक बात कहने का क्या डर है? नंबरदार! तू इससे तो दाम पूछ, फिर बात करना।

"वह छूटते ही कहने लगा, तेरा बछड़ा है?. . . तू तीसरी जगह टांग क्यों अड़ा रहा है?

"इसने कहा, बछड़ा मेरा तो नहीं, तू बछड़े वाले से ही पूछ ले।' तू मार बाई मेरे सिर जूते। इसमें बुरा क्या है? उस जाएखाने ने इसे तो कुछ न कहा, पर मजहबी को 'चूहड़ा-चड़ेत' कहने-परखने लगा। मजहबी ने हलीमी से, नम्रता से समझाया, भाई, अपने घर को जाओ। पर वह ऊपर ही ऊपर चढ़ता जाय। फिर चूहड़े भी बोल पड़े। तब तो औतरे का कोई बस न चला, पर बाद में इसे कई बार घेर लिया, एक बार तो 'फायर' भी किये। मुश्किल से जान बची। और गेजे पर झूठा केस बना कर उसे कैद करा दिया। अब, उसी झमेले में भागा फिरता है।"

खाना खाते, चाय पीते, उन्होंने और भी बातें कीं। सुखदेव मुर्गे की बांग के साथ आया, चाय का घूंट पी कर वह मामे के साथ हो लिया। मंडी तक दो मील का सफर था। खेतों में छोटी-छोटी गेहूं की पौध माहौल की हरियाली से भर रही थी। 'गुडावे' (निराई करने वाले) टोलियां बनाकर खेतों में जा रहे थे। बचना उसके साथ चलते-चलते गेहूं की बोआई के नुक्स निकाल रहा था।

"सुना फिर सुखदेव ! तेरी 'पालटी' का क्या हाल है?" मामे ने सहसा ही पूछ लिया।

"हाल मामा, पार्टी का भी लोगों जैसा ही है।"

"क्यों, लोगों जैसा क्यों?"

"बल्कि लोगों से भी बुरा।"

मामे की ओर से ध्यान हटाकर सुखदेव अपने अंदर के ख्यालों में खो गया। पार्टी के बुरे हाल ने उसकी आशाएं मिट्टी में मिला दी थीं। जिस पार्टी का लोगों से 'नंग पार्टी' नाम सुन कर गुस्सा नहीं आता था, उसे लोगों से टूटते देखकर, उसे असह्य पीड़ा होती थी।

"तो क्या कामरेडों की डींगें यूं ही गयीं, तेरे जैसों की?"

"जो असली कामरेड हैं, वे अभी भी क्रांति के पक्ष में हैं।"

"तो फिर ढील किस बात की है? वैसे तो शायद, आपके अनुसार, बिगड़ा ताना सुलझ जाय. . . इस कांग्रेसी राज में तो लोग पहले से भी दुखी हो गये. . . अब तो दिन-ब-दिन सांस घुट रही है। . . . बहुत शोर मचा रहे थे 'लोक राज' का। . . . कैसा 'लोक . . . राज' है, कमजोर जाटों के पास तो लंगोटी भी नहीं।"

"मामा, बात तुझे समझ तो आयगी नहीं; पर तू सुन ले, अब जब छेड़ ही दी है तो . . . । पार्टी का निर्माण जन-आंदोलनों में से होता है, पर जब यह पार्टी बनायी गयी, तो बनाने वाले मजदूर नहीं थे।"

"तेरा मतलब है धनवान लोग होंगे?" मामे ने पुल के पास पहुंचते, राड़े साहिब को बन रही पक्की सड़क की ओर देखते हुए पूछा।

" हां. . . ।" पुल की ढलान उतर कर मंडी वाले मार्ग पर होते हुए सुखदेव ने कहा, "उधर दक्षिण में विद्रोह हुआ था किसानों का—उसे तैलंगाना का आंदोलन कहते हैं। बटाईदारों ने सी. पी. आई. की कमान के अधीन नवाब के विरुद्ध सशस्त्र विद्रोह कर दिया। नवाब ने अपनी अलग 'स्टेट' रखी थी, वह 'हिन्दुस्तान' के साथ नहीं मिला था। नवाब के मदद मांगने पर, नेहरू ने झटपट सेना भेज कर विद्रोह को दबा दिया। . . . बात तो सारी इतनी है—पर तू इस पार्टी की करतूत भी सुन . . . केंद्रीय लीडरशिप के कारण तैलंगाना के किसानों को मुंह की खानी पड़ी। उसके बाद लीडरशिप खुल कर तो कह न सकी, सरकार के साथ 'भागीदारी' के लिए, वैसे ठीक है।"

बातें करते-करते वे मंडी आ गये। चाय का घूंट पी कर उन्होंने बस का पता किया। बस के जाने में अभी दो घंटे बाकी थे। बस के चलने से पहले वे गांव पहुंच सकते थे। जूते झाड़ कर वे फिर चल पड़े। खालसा स्कूल के निकट पहुंच कर सुखदेव को पढ़ाई के दिन याद आ गये। वह गांव से पैदल आया करता था। रास्ते में उनके गांव की मजहबनें मिलतीं तो मसखरी करतीं। उनका मतलब जाटों के लड़कों को बुरी आदत डाल कर कुछ न कुछ बटोरना होता था।

"अरी यह पढ़ाकू ! शहर में रहने वाला है। तेरी-मेरी ओर कब झांकने लगा. . . वहां बहुतेरी हैं. . . रंग-रंगीली, मूरतों जैसी, हाथ लगाने से मैली होती हों जैसे. . . तभी तो झांकता तक नहीं हमारी ओर।"

"रब से डरो, क्यों उसे भुलाये फिरती हो।" सुखदेव पर तब खालसा स्कूल का प्रभाव था।

मजहबनें खिल-खिला कर हंस पड़तीं।

"देखा। यूं फांसता है मूरत जैसियों को। तू हमें बेशक ज्ञानी बन कर दिखा, अरी . . . यह तो मखमलों पर हाथ फेरता है। तेरे खद्दर को कब पहचानता है।"

सुखदेव तब की बातें याद कर के हल्के से हंस पड़ा। अभी वह इन्हीं खयालों में खोया हुआ था कि बचना उससे पूछने लगा, "कामरेड परमात्मा से सिर क्यों फेरते हैं?"

सुखदेव धीमी-सी मिसकीन-सी हंसी हंस कर बोला, " तो इसमें झूट भी क्या है?"

"नहीं. . . !" बचने ने जोर से सिर हिलाया, "दसवें गुरु ने जो मुगलों के छक्के छुड़ाये . . . वह दैवी करिश्मे के अलावा क्या था. . . ?"

"अच्छा तो, वह दैवी करिश्मा था?" सुखदेव फिर व्यंग्यमय हंसी हंसा, " पर मामा, यदि उसने करिश्मा ही दिखाना था, तो औरंगजेब को दिल्ली में बैठे ही भस्म कर सकता था. . . कर सकता था या नहीं?"

बचना ने कहा, "नहीं, सवा लाख से एक लड़ाऊं।"

"जोर से. . . शक्ति से. . .ये करिश्मे, यह परमात्मा, यह सब कुछ गोरख धंधा है, इसे सुलझाने की कोशिश करना व्यर्थ है. . . और सच तो यह है कि परमात्मा नाम की कोई चीज नहीं है।" फिर हंस कर बोला, "जो व्यक्ति परमात्मा को मानता है, उसे बस पर चढ़ने का कोई अधिकार नहीं है।"

"क्यों?"

"क्योंकि बस मनुष्य ने बनायी है, परमात्मा ने नहीं।"

बचना खसियानी-सी हंसी हंसा, पर अभी वह अपनी जिद नहीं छोड़ रहा था, "तो सारी सृष्टि का सिरजनहार कौन हुआ फिर?"

"यह अपने आप हुआ विकास है। बाद में मनुष्य की अपनी मेहनत है।"

पर मामा अभी भी अपना तर्क दिये जा रहा था। सुखदेव ने बात हंसी में टाल दी, पर बचना अपने 'ज्ञान दान' में लगा रहा। सुखदेव ने उसकी बातों की ओर कोई ध्यान न दिया। जब सुखदेव ने बंडूंदी आ कर मामी की टूटी हुई कलाई देखी, तो मामी एक बार फिर रो पड़ी। "मेरा कोई हाल नहीं. . . एक तो कलाई टूट गयी. . . दसरे घर की बरवादी . . . हे वाहेगुरु। सुख-शांति बरतना, सच्चे पा-छा (पातशाह)। . . . लीखा तो एक ही रट लगाये जा रहा है कि अलग कर देना है। तू सयाना है। इन्हें मति दे, एक बार एक-दूसरे से अलग हुए, तो फिर जुड़ नहीं पायेंगे। पर कहे कौन. . . ?"

"कोई बात नहीं मामी,. . . तू चिंता न कर. . . ।"

केवल कैलू के यहां ही था, रात को आदमी भेज कर उसे घर बुला लिया गया। पहले तो उसने आने से इनकार कर दिया, पर जब सुखदेव के आने का पता लगा तो दिन ढले आ गया। खा-पी कर सभी बरामदे में चारपाइयों पर बैट गये। माघ महीने के दिन, टंड खूब उतरने लगी थी। सुखदेव ने बात शुरू करते हुए केवल से कहा, "घर के काम छोड़ कर शरीकों के काम करने की क्या तुक. . . ? तुम्हारे घर जमीन नहीं है या काम नहीं है. . . ?"

अंदर की बात की बेशक सुखदेव को जानकारी थी. . . "अगर बच्चे लड़ पड़ें तो दूसरा समझाते हुए भी अच्छा लगता है, तुम्हें क्या कहें?. . . चलो, मान लिया कि मामी को तूने जानबूझ कर चोट नहीं लगायी, पर दुख पूछने में क्या हर्ज था?. . . उधर वह है कि अभी भी तुझे बुरा नहीं कहती।"

केवल ने कोई उत्तर न दिया। कोई और भी न बोला।

"फिर तेरी क्या सलाह है?" सुखदेव ने मौन बैटे केवल को झकझोरा।

"माफी मांग ले पुत्तर। . . . बच्चे लड़ ही पड़ते हैं।" बीच में ही पंजाब कौर ने नम्रता से कहा।

पर केवल फाख्ताओं वाली रजाई नाखूनों से खुरचता रहा। अंदर से जैसे उबल रहा था।

"देखो मित्र। तुम्हारी तरह घरों के काम नहीं चला करते. . . यदि तुम चाहते हो कि गांव में तुम्हारा मान-सम्मान भी हो, तो दिन-रात काम भी करना पड़ेगा।"

बचने ने गला साफ करते हुए कहा, "अगर यह बंदा बन कर घर का काम करे कोई रिश्ते के लिए कह रहा था, पर यह तो काबू में ही नहीं. . . अगर इसने यही गुल खिलाने हैं, तो रिश्ता मैंने लीखे को. . . ।" बचने ने यह बात अपने आप ही बनायी थी।

"यह भाग कहां जायगा?. . . शादी इसी को करनी है. . . बाकी बेटा, तू घर में रह। काम को बेशक हाथ न लगाना . . . पता है, शरीकों के घर रहने से बदनामी कितनी होती है. . .?"

"पूछो ना सुखदेव, हम तो बाहर निकलने के लायक नहीं रहे। ससुरे जान-बूझ कर जतलाते हैं. . . भई लड़का उन्हें दे दिया. . . अच्छा है. . . भई. . .। अगलों का काम चल रहा है।"

देर रात तक वे 'स्कीमें' बनाते रहे। दूसरे दिन बचने ने उसी आदमी को रिश्ता लाने के लिए कहा। पाले की उसने मिन्नतें कीं। अंदर जा कर पांव पकड़े थे कि कहीं से रिश्ता ला कर लड़के के विवाह का प्रबंध करे। पाले ने शेखी बघारी, "रुपया तो अपने पास भी है, आप तैयारी करो।"

बचने ने सुखदेव को बडूंदी ही रख लिया ताकि वह काम पूरा कर जाय। दूसरे दिन वे शहर से सौदा-सुलफ लेने गये। पाले ने मध्यस्थता की। नाप ली और सारे परिवार के मन-मर्जी के कपड़े बनवाये। कुछ पैसा घर की कबीलदारी के लिए, 'हाथ-उधार' कह कर लिया। एक बात से तो केवल भी खुश था, पहले सगाई, फिर शादी। उसे घरवालों पर जो नाराजगी थी, वह जैसे टल गयी। कैलू और उसके घरवालों को बुलाने के लिए वह अपने घर वालों से न कह सका। उन्होंने भी खामोशी धारण कर ली। केवल कभी उदास, कभी खुश। सगाई वाले दिन मारा दिन सेहन में हंसी मची रही। स्त्रियों के ऊंचे बोल बबील के बोलों की भांति ऊंचे उभर रहे थे।

कपास के खेत के निकट पहुंचते ही केवल के कानों में बिशन की कपास में से ऊंचे तीखे शब्द पड़े। मजहबनें कपास चुनती हुई, छोटी-छोटी बात पर कपास की तरह खिल उठती थीं। उसकी अपनी खिली हुई कपास लटक रही थी। नजर घुमाते हुए उसने खेत के गिर्द एक चक्कर लगाया। चक्कर लगाते हुए वह कपास चुनने के बारे में सोच रहा था।

6

सूर्यास्त के समय केवल छीलो मजहबन को कपास चुनने के बारे में कहने गया, तो चूचे चूहड़े के कोठे पर स्पीकर के बोल, "इक्क लूण दी डली, इक्क तेल दी पली" सारे सेहन में फैले हुए थे। जब उसे चूचे चूहड़े के लड़के की सगाई का पता लगा, तो एक बार उसके मुंह से सहसा ही निकला, "सगाई।" अपनी सगाई की बात भी याद आयी। ऐसी उसके साथ जग-जहान से अलग, उस अकेले के साथ ही हुई थी। बाद में जो 'राख' उड़ी, सारे लोग ही त्राहि-त्राहि कर उठे। केवल को विवाह कराने की बहुत खुशी थी. . . पर कई रोज कैलू के घर न जाने के कारण जी फिर उदास हो गया था। सगाई में न बुलाने के कारण भी उसे झिझक थी।

कई दिनों के बाद, एक शाम सूर्यास्त होते ही, डब में बोतल लटका कर कैलू के घर की ओर चल दिया। दीपो रसोई-घर में आटा छान रही थी। चादर की खड़खड़ाहट सुन कर दीपो ने सिर उठा कर देखा, फिर नजरें नीची कर लीं। "कैलू कहां है?" धीरे-धीरे शान से चलते हुए केवल के पैर रसोई में आकर रुक गये।

"यहीं कहीं होगा।" दीपो नजरें नीची किये आटा छानती रही।

केवल बात भांप गया। उसने अपने बोस्की के चादरे और बिस्कुटी पापलीन के कुर्ते की ओर देखते हुए चारों ओर नजर घुमायीं। आंगन में सन्नाटा छाया हुआ था।

"क्या बात है, मेरे साथ कोई गुस्सा-गिला है?"'

"गुस्सा-गिला अपनों पर होता है, बेगानों से कैसा गिला?"

"तू बेगाना समझती है. . . ?" केवल ने यह बात इतनी जल्दी पूछी, जैसे उसके अंदर कुछ हिल गया हो। फिर चुप हो गया और बेगानगी-भरी नजर से दीपो के झुके हुए सिर को देखता रहा।

"और सुना भई सगाई वाले लड़के ! सगाई करा के मुंह ही नहीं दिखलाया।" कैलू ने पीछे से आकर उसके कंधे को झकझोरा। उसके बिल्ली जैसे चेहरे पर छोटी-छोटी आंखें चमक रही थीं।

"अब तेरा मुंह देखने के लिए आया हूं। तूने तो यूं सोच लिया कि अगर जाना पड़ गया, तो शायद दो-चार रुपये हर्जा ही करना पड़ेगा।"

"नजर आता है कि नहीं?" कैलू ने पीठ के पीछे दोनों हाथ कसते हुए दांत निकाले, "कोई बुलाये न, और हम ऐसे ही 'मेहमान' बने फिरें। भई, दूसरे हमारे मुंह में उंगलियां भी दें। वाह भाई तेरे सगाई वाले लड़के, क्या कहने तेरी चतुराइयों के!" कैलू छोटा-सा मुंह खोल कर जोर से हंसा। केवल उसकी ओर देखते हुए हल्की-सी, खिसियानी-सी हंसी हंसता रहा, "तू, अपने घर को सयाना तो बहुत है. . . पिलाने के डर से तू छिपा रहा न?" कैलू ने पूछा।

"चल, इधर-उधर की बाद में हांकना, पहले जरा रंग में तो हो ले।"

"न मेरे भाई ।" कैलू ने जैसे वहीं पैर जमा लिये। "मैं अब नहीं पीता, पिलाने वाले दिन तो तूने बात नहीं पूछी।"

"तू सीधा होकर चल, नहीं तो मैं अभी मुर्गा बना दूंगा।" केवल ने कैलू को मीठी-सी घुड़की देते हुए कहा, लेकिन कैलू अभी तक छोटी-छोटी आंखें चढ़ाकर उसे चिढ़ा रहा था।

"पी ले।" आवाज सुनकर केवल ने चौंक कर पीछे ताका। दीपो के गंदुमी चेहरे पर खुशी घुंघरू बांध रही थी, "अब तो बेचारा मिन्नतें कर रहा है, घर आये का मान तो रख !"

कैलू लिजलिजी-सी हंसी हंसता और केवल से बातें करता हुआ बरामदे में चारपाई बिछाने लगा।

ठंड काफी हो गयी थी। केवल ने डब्बियों वाला खेस ओढ़ रखा था। कैलू अंदर से ओढ़ने के लिए छोटी डिब्बियों वाली चादर ले आया। ताक पर रखे दीये की लौ उनके चेहरों को घूर रही थी। केवल के खूबसूरत चेहरे पर छोटी-छोटी दाढ़ी और बारीक मूंछें, होंटों का गुलाबी रंग, पीली रोशनी में सुंदर लग रहा था।

कैलू ने मूंछों पर हाथ फेरते हुए कहा, "तू यह बता, सगाई चोरी-चोरी क्यों करायी? हम क्या रुकवा रहे थे?" केवल को मौन देख कर उसने फिर कुरेद कर पूछा, "क्या बात है, अब उत्तर भी नहीं दिया जा रहा?"

"सहसा बाई आ गया, ज़ल्दी में किसी को भी न बुला सके।"

"भला बुलाना होता तो हम क्या कहीं दिल्ली-दक्खिन में थे?"

"ब्याह के लिए महीना भर पहले बुला लेंगे।" मुस्कराते हुए केवल ने नीचे पड़ी अचार की कटोरी की ओर हाथ बढ़ाया।

"जैसे अब बुला लिया, वैसे ही तब बुलायेगा?"

कैलू का हाथ ऊपर देख कर केवल चुप रहा और यूं ही कितनी देर तक मुंह में गुनगुनाता रहा, जैसे गाने का बहाना कर रहा हो। बीच-बीच में केवल एक और बात के बारे में भी सोच रहा था। पर बात चलाने की राह नहीं मिल रही थी। कल शाम को उसने उड़ती-उड़ती बात सुनी थी कि जैलदार ने नाली खोद ली थी। यह सुन कर उसका कलेजा जैसे जलने लगा था। शरीर में से आग निकलने लगी थी। अभी वह उन्हीं ख्यालों में खोया बैठा था कि कैलू सहसा ही बोल उठा, "ले भाई जवान! अगलों ने तो नाली खोद ही ली है...।"

उसने नशे से बोझिल हो रही आंखों को उसकी ओर किया, "अब सोच ले, तब तो डीगें मारता था।"

"तू बात क्या करता है यार ! यदि उसने नाली खोद ली है तो तू क्या समझता है हमने चूड़ियां पहन रखी हैं?" कहने को तो केवल यह बात डींग मार कर कह गया, पर वैसे उसे कोई राह दिखाई नहीं दे रही थी। कैलू समझता था कि केवल की डींगें ही हैं, नाली खुद गयी, बात खत्म हो गयी। केवल छोटी-छोटी, बंटी हुई मूंछें उंगली से मरोड़ता हुआ सोच रहा था। नाली वाली बात सुन कर दीपो भी उनके निकट आ गयी। यह सोच कर केवल ने कैलू के कान में कुछ कहा पर कैलू के अंदर का डर मरी-मरी सी आवाज में बोल उठा।

"मैं तो कहता हूं, चलो, जाने देते हैं। बापू जैसे कहता है, पंद्रह किल्लों में से अगर आधी-एक कनाल छिन भी जायगी तो कह देंगे भाई ब्राहमनों को दे दी।" उसने साथ ही ढोल की तरह सिर मारा, पर उसकी यह बेजान खस्सी सी बात सुन कर दीपो भभक उठी, "तू तो घूंघट निकाल ले . . . ।"

"क्यों भौंक रही है, कुत्ते की तरह?" कैलू का कमजोर-सा शरीर आग की लपटों की तरह भभक उठा, "जा, उठकर उधर चली जा। काम न काज और कानून छांटती है। तुझे क्या मालूम, शरीकों के साथ बैर मोल लेना कितना मुश्किल है, आधी कनाल के पीछे?"

"आज आधी कनाल रोकेंगे, कल घर पर ही कब्जा कर लेंगे।" दीपो कमर पर हाथ रखे, उसकी ओर कहर-भरी नजरों से देख रही थी।

"हूं. . . ।" केवल ने सिर हिलाया, "यह बात है जिसके पीछे झंझट खड़ा हो रहा है।"

"इसे क्या. . . ?" दीपो से रहा न गया, "बूढ़ा तो चार साल और है, बाद में लोग मुंह में उंगलियां किसके देंगे?. . . यह सोचा है कभी? दर-दर के टुकड़े खा कर तो कुत्ते भी जून पूरी कर लेते हैं. . . मान-सम्मान से तो गैरत वाला ही जीता है।"

"अच्छा।" कैलू ने ऊब कर कहा, "ज्यादा ऊपर ही ऊपर न चढ़ती जा।"

"देखो भई, सयाने लोगों का कहना है।" केवल ने हंसते हुए बात चलायी ताकि लड़ाई न हो जाय, "जाट मेवा तो बहुत कमाल का है, लेकिन गिरता जूते से है। यह तो एक बार गले से उतारना ही पड़ेगा। आज सहन कर के चुप रहेगा तो कल को फिर मुंह में डालेगा, फिर तो जहर चखना ही पड़ेगा।" यह बात कहते हुए उसके अंदर खेद भी पैदा हुआ, मुझे क्या पड़ी है? इन्हें जरूरत नहीं तो मेरी ओर से सारा ही उजाड़ दें। पहले उसने यह सोचा भी था, लेकिन जब दीपो उससे कहती, तो उसकी खातिर सब कुछ करने के लिए तैयार हो जाता। वैसे बाकी लोग भला उसके क्या लगते थे? जब उसने पैर पीछे खींच लेने के बारे में सोचा था तो यह बात भी सामने आ खड़ी हुई थी—यदि मैं दीपों की नजरों में गिर गया तो फिर. . . ? फिर तो शायद वह दीपो को मुंह दिखाने के लायक भी नहीं रहेगा। पर इतना बड़ा धोखा वह दीपो के साथ नहीं कर सकता था। हिम्मत नहीं होती थी। और अगर वह यारी लगा कर, 'नमक खाकर' ऐसा करेगा तो लोग तो उसे 'गोरा बैल' कहेंगे ही।

"केवल। तू कमर कस, यह नहीं करेगा, तो मैं करूंगी।" उसने जरा बात बना-संवार कर कही, "अब शरीकों को सिर पर तो नहीं चढ़ा लेना।"

"भई वाह, कुर्बान जाऊं तेरे. . . ।" शराब वाला गिलास उठाते हुए और जरा नशे में आ कर केवल बोला, "वाह री जाटनी।" और दीपो मुंह बना कर, हंसती हुई रसोई घर की ओर चली गयी।

"क्यों, फिर क्या कहता है तेरा मनी राम?" केवल ने नजर नीची किये बैठे कैलू को कोहनी मारी। उसे मौन बैठा देखकर केवल ने बात अपने सिर पर लेते हुए कहा, "तू उदास न हो, मैं यारी निभाऊंगा।"

"देख ले यार।" कैलू ने मरी-सी आवाज में कहा, "ऐसा न हो कि कहीं सारे परिवार को ही धूप में सूखना पड़े।"

"इसकी तू जरा भी चिंता न कर।" केवल ने जाटों वाली मस्ती में सिर हिलाया। क्षण भर पहले जो बात केवल ने कैलू को बतायी थी, नाली के बारे में, वह उसे ठीक नहीं लग रही थी। खा-पी कर, गयी रात केवल ने दो फावड़े मंगवाये। जब खेत की ओर रवाना हुए, तब भी कैलू मरे कुत्ते की तरह टांगें घसीट रहा था।

"नाली खोदते समय साथ में कौन था?" चांदनी रात में परछाइयां उनके साथ-साथ चल रही थीं।

"नहरी पटवारी था, बेशकल-सा।" कैलू ने खेत में मुंह लपेटे हल्की आवाज में कहा। ठंड से रास्ते की रेत ऊंघ रही थी। चौथ का चांद, चांदनी बिखेरता हुआ ऊपर उठ रहा था।

"तू यार, बोल कैसे रहा है?" केवल उसकी ओर गौर से निहारता हुआ व्यंग्यमय और तेज काट करती हुई हंसी हंसा।

"हम पंगा तो ले रहे हैं, कहीं ऐसा न हो कि सुबह बरगद के साथ उल्टा लटके हुए हों।"

केवल खिल-खिला कर हंस पड़ा। उसकी हंसी चारों ओर घंटियों की भांति बज उठी।

"हद हो गयी यार।" हंसते-हंसते उसके कंधे पर से खेस लुढ़क गया। उसने खेस को ठीक करते हुए कहा, "तू मर्द का बच्चा है। चिड़िया के बच्चे की तरह क्यों डर रहा है?" उसने गर्दन घुमा कर कैलू का चेहरा देखना चाहा, परंतु मटमैली-सी रोशनी में केवल उसकी चमकती हुई छोटी-छोटी आंखों को ही देख पाया। "तू सारी बात मुझ पर छोड़। देखा जायगा, पगले। जून तो कुत्ते-बिल्लियां भी पूरी कर लेते हैं। तेरा मतलब है, जैलू ताकतवर है! यही भ्रम दूसरों को खाये जा रहा है। जैसे तू डर रहा है, वैसे ही और लोग डर रहे हैं। लोगों की ओर न देख। मेरे दादा के कथनानुसार, "यह तो भेड़ों का झुंड होता है। जिस तरफ एक का मुंह हो गया, उसके पीछे ही आंखें मूंदे चलती चली जाती हैं. . .।" इस तरह बातें करते हुए वे नाली के निकट पहुंच गये। चारों ओर बियाबान की-सी खामोशी फैली हुई थी और सर्दियों की रात में वृक्ष भय से ठिठुरे हुए से खड़े थे। नाली, गंडे की तीन किल्ले जमीन को चीरती हुई गुजर रही थी।

"ले बोल 'वाहखरू'।" केवल ने यह कहते हुए, खेस उतार कर खेत की मुंडेर पर रख दिया और हाथों में ले कर मिट्टी इधर-उधर बिछाने-बिखेरने लगा।

"क्यों?" उसे डरा-सहमा और भौंचक्का देख कर केवल ने फावड़ा रोक लिया और सांस ठीक करते हुए कहा, "क्या बात है. . . ?"

कैलू उसी तरह चुप खड़ा रहा।

"तू क्या कहता है. . . ?" केवल ने नथुने सिकोड़ते हुए कहा, "क्यों धरती पर बोझ बन रहा है कंजरा ! अभी गांव वाले कुएं में पानी बहुत है!"

कैलू ने उसकी तरफ देखा और अनमने-से अपना खेस मुंडेर पर रख दिया। फिर वह आहिस्ता-आहिस्ता फावड़ा चलाने लगा, जैसे उसका दिल न मान रहा हो। केवल उसकी मुर्दा की तरह चल रही बांहों की ओर निहारता रहा और फिर वह जोर-जोर से फावड़ा चलाने

लगा। चुप-खामोश रात में मिट्‌टी से रगड़ खाते फावड़ों की आवाज दूर तक सुनायी दे रही थी।

सूर्योदय के साथ ही गांव में जैसे घुड़दौड़-सी शुरू हो गयी। कैलू, गंडा और चिंती डर के मारे पीले-जर्द हुए पड़े थे। कैलू बार-बार 'लाल टोपी वालों' की बात करता। डर बेशक केवल भी रहा था, लेकिन वह कैलू की तरह चिल्ला नहीं रहा था। उसने फिर भी कैलू को हिम्मत दी, "तू डर मत। हमें कोई ससुरा नहीं बुलायगा।" गंडा और चिंती अलग सिर पकड़े बैठे थे। दीपो 'उछल-उछल' कर देख रही थी। आज उनके घर आस-पड़ोस से भी कोई न आया, जैसे घोर अनर्थ हो गया था। पड़ोसी इसलिए पीठ मोड़ रहे थे कि कहीं जैलदार कहे, आपकी भी इनके साथ मिली-भगत है। बाहर से इस बात की थोड़ी भनक लगी कि जैलदार पंचायत करने वाला है। उन्होंने पंचायत को दिये जाने वाले उत्तर भी सोच लिये। दोपहर-ढले तक कुछ न हुआ। सारा दिन बीत गया। एक दिन और गुजर गया। सभी ऐसा महसूस करने लगे जैसे जैलदार ढीला पड़ गया।

इसके बाद केवल अपने घर चक्कर मारने गया तो बंतो उससे मजाक करने लगी। वह पशुओं को पानी पिला रही थी।

"झगड़ा खड़ा कर के अब कबूतर की तरह जान बचाता क्यों उड़ा-उड़ा फिर रहा है? अब किये का मजा भी चख।"

"नहीं, बिलकुल नहीं डर रहे। जमाइयों की तरह घूम-फिर रहे हैं।" केवल ने दोनों हाथों से चादर कमर के इर्द-गिर्द कस लिया, "खेत में आज क्या कर रहे हैं?"

"तुझे क्या है सरदारा. . . मौज कर . . . मजे लूट. . . ।"

"पूछ तो बेगाने भी लेते हैं।" केवल खिसियानी-सी हंसी हंसा।

"यदि सच पूछे तो. . . ।" बंतो ने भैंस को खोल कर नांद की ओर ले जाते हुए कहा, "तुझ पर पूरे खफा हैं?"

"यह तो मुझे पहले ही पता है।"

"फिर पूछ क्यों रहा है? यदि मेरी माने तो," उसने गाय खोल कर उसे पानी पिलाते हुए कहा, "अब लोगों में और बदनामी न करा।"

"तुझे क्या? बदनामी तो हमारी होती है।" यह कह कर केवल ने उसकी ओर से मुंह फेर लिया। उसे मालूम था, बंतो के साथ तो बात जितनी मर्जी बढ़ा लो। उसे यह भी पता था, घर में उसका स्थान ऐसा-वैसा ही था। लेकिन वह बार-बार यही सोच रहा था, जैलदार ढीला क्यों पड़ गया? यह बात क्या हुई? पर कुछ दिन बाद गंडे को सम्मन आ गये। एक बार तो सारे ही जैसे सन्न रह गये। गंडे और चिंती के तो जैसे होश ही उड़ गये हों। उन दोनों ने सारी उमर 'दबे-घुटे' से रह कर गुजारी थी। वे केवल और अपनी बहू के बारे में बाहर हो रही बातें सुन कर भी मौन रहते। शरीके की स्त्रियां बहाने उससे बात करतीं। चिंती कोई मूर्ख तो थी नहीं। वह अपनी उस बहू की बदनामी कैसे करती, जो घर का सारा काम-काज संभालती थी। कभी-कभी वह डील-डौल वाली अपनी बहू की तुलना मन ही मन अपने कमजोर बेटे से करती, तो उसे यौवन की मदिरा में मस्त अपनी बहू डायन सी लगती।

"बाबा जी। यूं तो कुछ नहीं बनेगा। आपने तो ऐसे मौन धारण कर लिया है जैसे कोई मर गया हो। मर्द तो लड़ा ही करते हैं।"

"नहीं भाई . . . मैं सोचता हूं कि क्या करें?" सिर पर आकर गरज रही बहू को देख कर उसका जर्जर शरीर कांपने लगा। वह दीपो का रौब भी मानने लगा था।

"कैसे क्या करें. . . ?" दीपो ने अपने ससुर की बात को दोहराया, "जो होगा, देखा जायगा. . . आप उसका संशय क्यों करते हैं? अगर ऐसे ही गीदड़ बनने लगे, तो हमें यह गंदे जाट गांव से ही निकाल देंगे. . . । उस बेगाने बेटे को क्या पड़ी है कि तीसरे लोगों की खातिर अपना सिर फुड़वाता फिरे।" अचानक पत्थर पड़ने वाली स्थिति थी। कानून के मामले में वे सारे ही अनाड़ी थे। गंडा जैलदार की पहुंच और उसके गुंडों-बदमाशों की बात कर रहा था। गंडा मन ही मन केवल को घर में घुसा कर पछता रहा था, पर अब जब वह जाट-पुत्र को बड़े आदर-सम्मान से घर में ला चुका है, तो उसे मुंह फाड़ कर कैसे कहे? अब वह डर रहा था कि न जाने क्या हो जाय? शायद कैद . . .जुर्माना ! और अपमान ऊपर से। बेशक वह चुपचाप ही क्यों न बैठा रहे, फिर भी अपमान होने का डर था। कैलू और दीपो ने पैसे दे कर अपना काम निकलवाने पर जोर दिया। गंडा उन्हें समझा-बुझा कर घर बैटाना चाहता था, लेकिन उसकी कोई सुन ही नहीं रहा था। जब उन्होंने जोर दे कर पैसे झोंकने के लिए कहा, तो उसने फिर उन्हें समझाया कि यूं ही आप लोगों की जिद है। बनना-बनाना फिर भी कुछ नहीं। खाहमखाह पैसे बर्बाद करने वाली बात है, पैर फिर भी नहीं लगेंगे।"

"चलो, देखा जायगा, हमने कौन-सा ब्याज पर ले कर देने हैं?" कैलू ने अपने अखरोट जैसे मुंह को टेढ़ा-सा कर के अपने पिता को घूरा। पर बुजुर्ग ने यह करना भी स्वीकार कर लिया। आंडलू के एक दलाल को साथ ले कर उन्होंने वकील तक रसाई की। उस दलाल और वकील ने भोले-भाले लोगों के शेखियां मार-मार कर पांव उखाड़ दिये। कचहरी में दो-तीन चक्कर मार कर सारे ही अपने-आप को 'कुछ' समझने लगे थे। लेकिन वही बात हुई जो होनी थी। मुकदमा जैलदार के पक्ष में चला गया। गंडे को 'हर्जाना' भी भरना पड़ा। गंडे को गुस्सा तो बहुत था, लेकिन जवान पुत्र और बहू को कुछ कह नहीं सकता था। शरीक के पुत्र को ऊंची-नीची कैसे कहता, जो उनकी खातिर इतनी भाग-दौड़ कर रहा था? बाहर उसकी बहू के बारे में जो दंतकथा चलती, वह कभी-कभी उसका मन खराब कर देती, पर वह झट ही अपने-आपको लानतें देताः हत तेरे की। अच्छी शाबाशी दे रहा है तू शरीक के पुत्र को! जिसे स्वयं मिन्नतें कर के लाया है अब तोहमतें भी लगाने लगा उसी पर,इससे तो मर जाना ही बेहतर है।

अपने बारे में लोगों की एक तरह से सुना कर की गयी बातें उसे धुनके की तरह धुनक रही थीं। चौपाल में से गुजरते हुए एक दिन उसके कानों में आवाज पड़ी। निहंग नरैणा कह रहा था, "अरे यार, उस हिजड़े ने क्या करना है? यह काम मर्दों के करने वाले हैं, जनानों के नहीं।" उसका मन पीछे मुड़ जाने को किया, लेकिन फिर वह यूं ही चलता गया। मोड़ मुड़ते हुए, उसके बूढ़े कानों से यह जलाने वाली बात सहन न हो सकी, "बहन देने वाले चर्खे ने,शरीक का पुत्र भी घर में रखा हुआ है । बहू की शोभा भी बना रहा

है— यह नहीं कि जाट के साथ टक्कर ले ले !" गंडे की चुंधियायी आंखों में गुस्सा ग्लानि बनकर उतर आया। दिल कमजोर हड्डियों के ढांचे में 'धक-धक' कर रहा था। जरा वह रूका रहा, फिर उसके अंदर कितनी ही देर तक उथल-पुथल होती रही। अचेत सा चलते-चलते उसे पता ही न लगा वह किस रास्ते पर पड़ गया था? टीले के निकट जा कर उसने पीछे मुड़ कर देखा, बड़ूंदी के घर-गलियां जर्जर से लग रहे थे। उसने एक आह भर कर सिर झटका, ऐसे महसूस हुआ जैसे वह जंगली बिलावों जैसे लोगों के बीच में दब कर रह गया हो। उसने देखा सामने आंडलू वाला बरगद राक्षस की तरह खड़ा था और दूर-परे भैणी के कच्चे-पक्के घर उसे घूर रहे थे। . . . और उसके बाद, उसने दखल देना छोड़ दिया।

बघेल सिंह को जब यह पता लगा कि केवल नाली को गिराने में शामिल था तो वह घंटे भर अपने आप में सांप की तरह विष घोलता रहा। पहर भर केवल को मां-बहनों की गालियां देता रहा। दो-चार और यार-दोस्तों से बात की, तो सभी ने केवल की पिटाई करने की सलाह दी। खुद उसने केवल का 'टंटा' हमेशा के लिए खत्म कर देना ही बेहतर समझा। लेकिन फिर जब जरा गंभीर हो कर सोचा तो 'टंटा' खत्म करने वाली बात बिगड़ती-बिगड़ती कुछ और ही बन गयी। पहले कत्ल कर के उसे क्या मिला? कुछ हाथ लगा? तो फिर . . . । जेल में चक्की पीसी, दुश्मनी मोल ली, और सारी उम्र की। हर समय का डर भी गले में बांध लिया। क्या मालूम, कब कोई 'चित्त' कर के चलता बने। इसीलिए तो उसे चौबीस घंटे राइफल कंधे पर लटकाये रखनी पड़ती है। वर्ना, वह यह मुफ्त का दस सेर का भार क्यों उठाये फिरे. . . इन बातों के बावजूद वह केवल पर बहुत खफा था। फिर भी सोच-सोच कर एक दिन उसने बचने से बात चलायी। वह बचने को भी किसी रास्ते पर डालना चाहता था, जिस से काम ठीक हो जाय। बचना खुद केवल पर बहुत खफा था। उस पर तो सारे घर-वाले ही खफा थे। जब जैलदार ने बचने के साथ बात की तो बचने ने अपने दूसरे लड़कों की राय बतायी, "लड़के तो कहते हैं, अलग कर दें, खुद ही हाथ जलाया करेगा, कंजर।"

"नहीं नहीं, ऐसा न करना।" जैलदार ने शीघ्र ही कहा, "तब तो वह वहीं रहने लगेगा। क्या तुम्हें पता नहीं? तेरा बेटा वहां रहता ही उस कुतिया की खातिर है। उसने तेरे बेटे पर डोरे डाल रखे हैं, बचने। . . . यूं इतनी जल्दी कैसे छोड़ देगी? देख, सगाई तो उसकी हो ही चुकी है, चुप-चाप शादी कर दे. . . फिर देखना. . . सब काम अपने-आप ही ठीक हो जायेंगे।"

यह बात बचने को अच्छी लगी। उसने केवल के विवाह की घर में बात चलायी तो पंजाब कौर के सिवा किसी ने भी 'हां' नहीं की। लीखा तो वैसे ही गुस्से में था, बोला,काम का तो कभी तिनका तक नहीं तोड़ा, घर में से पैसे खर्च कर के इसका विवाह कर दें... क्यों भई? यह कहां लिखा है?" पंजाब कौर और बचने का विचार था, इस तरह उसके सारे बल निकल जायेंगे। घर में मौन विरोध तो काफी था। कभी-कभी परिवार के सदस्यों में तकरार भी हो जाती। माता-पिता के बगैर, कोई और राह ही नहीं देता था. . . इधर अभी यह चल ही रहा था कि उधर जैलदार ने फिर से नाली खोद ली।

नाली खोद लेने के बाद आधी रात तक बघेल सिंह के घर हंसी-मजाक चलता रहा, शराब पी कर गालियां दी गयीं और फायरों के साथ शांत रात को बहरी करते रहे। पर सूर्योदय के साथ ही पहाड़ की ओर नाली का नामो-निशान भी न था। मोड़ों पर और चौपाल में बैठने वाले लोगों को दो-ढाई दिन तक बातें करने का मसाला मिल गया। जब कोई अजनबी गुजरता सारे शालीन बन कर खड़े हो जाते। लोगों की आंखें कुछ न कुछ नया घटने पर लगी थीं। तीसरे दिन सवेरे-सवेरे पुलिस ने सोये पड़े केवल को आ दबोचा। सभी को निश्चय था कि जैलदार केवल की पिटाई अवश्य करवायगा। उस दिन थाने में जैलदार ने अपने सामने केवल की वह दुर्दशा करवायी कि उसे खुद को भी कंपकपी होने लगी। थानेदार ने पिटाई का बहाना यह बनाया कि उसके पास 'अवैध' पिस्तौल है।

"मेरे पास पस्तौल !" इस नयी बात से केवल का दिल कांपने लगा।

"तो और क्या हमारे पास?" थानेदार ने उसे मौन देख कर गाली देते हुए कहा, "बहन के यार। तू इनकार कैसे करेगा? हम तेरी सारी बदमाशी निकाल देंगे।"

"तुमसे किसने कहा कि मेरे पास पिस्तौल है?"

"तूने फायर नहीं किये?" थानेदार गरजा।

जब केवल ने उत्तर न दिया तो थानेदार बेंत से उसे मारने-पीटने लगा। केवल से नाजायज मार-पीट सहन न हो सकी। वह बेंतें बर्दाश्त करता हुआ भी थानेदार की ओर जलती आंखों देखता हुआ गालियां देने लगा, "ओ. . . तेरी बहन की. . . मेरे साले. . . तेरी बेटी के खसम के पास पिस्तौल नहीं हैं. . .।"

थानेदार ने उसे मुंह के सामने बोलता देख कर, कुछ सोच कर मार-पीट बंद कर दी। लेकिन केवल अभी भी क्रोध से लाल-पीला हुआ गरज रहा था, "मनवा लिया अपने जमाई से पिस्तौल? दूसरी लड़की का रुपया रख कुतिया के पुत्र। . . . फिर दूंगा तुझे बारह बोर का, मेरे ससुर. . .।"

थानेदार ने तैश में आकर फिर बेंत ऊपर उठायी। इस बार केवल दांत पीसता हुआ उसकी गर्दन से लिपट गया और खींचा-तानी में उसकी कमीज फाड़ दी। सिपाही उसे घसीट कर ले गये और कितनी ही देर तक समझाते रहे। "तुझे यार, उसे गालियां नहीं देनी थीं . . . अब तू सजा के बगैर नहीं जा सकता यहां से। . . . तुझे बस सरदार के पांव पड़ जाना था। . . . अब न जाने क्या करेगा, साला।"

यह बातें सुन कर केवल डरा भी। पर उसे यह नयी आफत, पिस्तौल वाली बात सुन कर लगा था, जैसे बिजली गिरी हो। लेकिन फिर कुछ सोच कर उसने अपने आप को हिम्मत देते हुए कहा, "कोई बात नहीं। वैसे भी उन्होने फांसी तो लगा नहीं देनी थी। अब दो महीने ज्यादा लगवा लेंगे और क्या?" कुछ दिन बाद मुकदमा चला तो सरकार के कानून का उल्लंघन करने वाला दोष इतना जबर्दस्त था कि कैलू और केवल छह-छह महीनों के लिए अंदर कर दिये गये। ऊपर से आठ-आठ सौ हर्जाना भी भरना पड़ा। इस घटना के बारे में गांव में चार-पांच दिन तक खूब चर्चा रही। ज्यादातर लोग केवल की हिम्मत की दाद दे रहे थे। कुछ ऐसे भी थे जो इसे मूर्खता कह रहे थे। कुछ समय बाद लोग शांत

हो गये, जैसे वे थक गये हों। लेकिन केवल के घर वाले अदहन की तरह उबलते-खौलते रहते थे। घर वाले तो काठ की हंडिया की भांति, अपने किनारे जला कर चुप-शांत हो जाते, पर यहां से एक बात ऐसी उलझी और आस-पड़ोस में ऐसे भड़की कि चर्चा फिर से चल पड़ी। यह बात बंतो ने बढ़ायी। उसने दीपो का राज फाश करना शुरू कर दिया। यह मामला घर-घर फिर से भड़क उठा। दीपो इस चर्चा से गुस्सा तो बहुत हुई, लेकिन. . . । उसके मन में एक विचार आया, अगर मैं उसके साथ बांह ऊंची कर के लडूंगी तो बात बढ़ेगी, अगर उसे प्यार से समझाऊंगी. . . तो फिर . . . ?

एक दिन बाहर से हो कर आती दीपो को, गोबर-कूड़ा फेंकती बंतो मिल गयी। जैसे ही बंतो तेज-तेज कदमों से गुजरने लगी, दीपो ने उसे हंस कर बुला लिया, "मैं मदद करूं . . .अगर?"

"बस बहन। जीती रहो।" और बंतो तेज-तेज कदमों से निकल जाने लगी। दीपो उसकी आशीष सुन कर अंदर ही अंदर ऐंटने लगी। वैसे तो यह मुई, आगे-पीछे, सुबह-शाम बातें बनाती नहीं थकती। ऊपर से बोली, "क्या बात है? मेरे साथ कोई गुस्सा है?"

तेजी से आगे बढ़ती हुई बंतो ने ठिठक कर पीछे देखा और कहा, "गुस्सा काहे को करना है, हमने कोई जमीन बांटनी है?"

"तो फिर यूं भागी क्यों जा रही है?"

"बहन। तू तो खाली है।" बंतो ने मुड़ कर उसकी ओर गोबर से लथपथ हाथ हिलाये, "हमारे यहां जा कर देख ले, कितना काम पड़ा है।"

दीपो ने उसके पतले पतंग और चमड़ी-फाड़ शरीर की तरफ देखा, तो दीपो को वह ऐसे लगी, जैसे सरकंडे ने कपड़े पहन रखे हों। "बता या न बता, गुस्सा तो तुझे जरूर है।"

"नहीं तो बहन। तेरी कसम।"अंदर से दहक रही बंतो ने उसके चेहरे की ओर देखा। गुस्सा उसे जरूर था। वह उनका बंदा संभाले बैठी थी। पर वह लड़ती तो तब, जब दीपो आगे से लड़ने के लिए आयी होती। दीपो का नरम स्वभाव देख कर वह सब-कुछ भूल गयी।

"गुस्सा है, तो भी सिर-आंखों पर।" दीपो ने लंबी चादर से अपने उभरे हुए पेट को ढांपते हुए कहा, "तू पूछ क्यों? मैं तेरी चीज जो दबाये बैठी हूं। अब तो तू चाहे गुस्से रह, चाहे राजी, वह चीज तो तुझे मिलने से रही।"

दीपो की बात बीच में ही काट कर बंतो जल्दी से बोल पड़ी, "मेरा क्या है. . . मैं तो तब कहूं, जब मेरा आदमी हो। वह तो रस्सी-तुड़ाये बछड़ा है, जिसकी हिम्मत हुई उस ने पकड़ लिया। मुझे तुझ पर रंज कैसा !" क्षण भर के लिए दोनों चुपचाप चलती रहीं, फिर बंतो ने एक ओर थूकते हुए कहा,"हमें दुख किस चीज का, और बहन दुंख हो भी क्यों?"

'है तो अभी बता दे।" दीपो ने जरा प्यार से कहा, "फिर कल को कहेगी मैंने तो बसना ही उसके संग है।" बंतो एकदम उसकी ओर ताकने लगी।

"देखती क्या है? झूट नहीं कहती।"

"एक नहीं, सात बार उसके संग बस बहन। मेरा क्या जाता है?"

"चार दिनों में और भी बातें उटेंगी . . . पेट के भीतर का भी उसी का है?"

बंतो के कानों में सांय-सांय होने लगी। उसके मन में कितने ही उतार-चढ़ाव आये। बंतो ने तिरछी आंख से उसके उभरे हुए पेट को देखा, उसके दिल में ढेर-सी तलखी उठ खड़ी हुई, फिर कुछ सोच कर जाती रही। दीपो अभी भी बातें करती जा रही थी, जो बंतो ने सुनी ही नहीं। पहले वह गली-मोहल्ले में बातें जरूर करती थी, निंदा भी करती थी, लेकिन अब उसने सोचा मुझे क्या? पाप करते हैं, अपने सिर पर। मैं क्यों किसी की मैल धोती फिरूं?

दीपो अभी तक भी यूं बातें करती जा रही थी, जैसे बंतो को सुना रही हो।

"नहीं तो बहन, दुहाई राम की।" बंतो ने उसके आगे पटाख की आवाज पैदा करते हुए हाथ जोड़े, "मेरी तो जुबान जल जाय, अगर तेरी कभी बात भी की हो. . . मैं तो तुझे सगी बहन समझती हूं।"

बातें करती हुई वे बंतो के घर के पास पहुंच गयीं। बंतो ने उसे घर चलने के लिए कहा तो दीपो 'फिर कभी' कह कर चली गयी। इसके बाद, दिन एक-एक कर के बीतते गये। दीपो कभी मौका देख कर बंतो के पास आ जाती। वह बंतो का मन जीतना चाहती थी। बंतो कभी-कभी अपनी समझ के अनुसार सोचती, 'मेरा क्या उसके बगैर छकड़ा रुका हुआ है? घर आ जाती है, हंस-बोल लेती है।' एक दिन दीपो उसे मिन्नत-समाजत कर के अपने घर ले गयी। वैसे बंतो अपने सीधे स्वभाव के कारण घमंड करने में अपना रौब समझती थी, "ले। ऐसी गधी औरत से मैंने क्या लेना है? वाहखरू। अरी घर में मर्द हो, फिर भी बाहर क्यों झक मारती फिरती है। लाज-शर्म ही नहीं कोई।" परंतु दूसरी ओर बंतो स्त्रियों वाले दिल से सोचती, तो मन पिघल जाता, "अरी बहना। यदि माता-पिता अच्छा-सा वर देखते, तो यह मुई क्यों माथे पर कलंक लगाती—है न? उसे क्या जरूरत थी? जिसके पीछे लगी है, वह भी ऐसा क्या है?"

बचना और घर के अन्य सदस्य बेशक बंतो की उस मैत्री के बारे में चिड़-चिड़ करते थे, पर ज्यादा देर तक न कर सके। दीपो ने अपने कोमल स्वभाव के कारण उनके घर में अपना स्थान बना लिया। लेकिन लीखा भाभी के नाते कभी-कभी ऐसी बातें कह देता, जो दीपो को नशतर की तरह चुभ जातीं। एक दिन पशुओं को पानी पिला रहे लीखे ने बंतो के साथ बातें करती दीपो से मजाक किया, "अब क्या इसे भी कोई गुरुमंत्र देने लगी है?"

"अरे देवर! इसकी तो खैर है, तू बता। अगर तुझे जरूरत है तो. . . ?"

"नहीं, कलंगी वालो।" लीखा तिड़-तिड़ कर के मिस्कीन-सी हंसी हंसा, "मेहरबानी करो। अगला तो तर गया है।" दीपो को उसकी हंसी इतनी बुरी लगी कि उसका मुंह कड़वा-सा हो गया। "वह तो अब गुरुमंत्र ही खायगा, छह महीने।" लीखे का व्यंग्य भरा कटाक्ष था।

दीपो के चेहरे पर पसीना आ गया और उसका मन डूबने लगा। वह इस बात के बारे में सोचने लगी। लीखा अभी तक भी हंस-हंस कर बातें कर रहा था। बंतो बीच में लीखे को जवाब देने लगी। दीपो उनकी ओर देखती रही, पर तभी लीखे ने एक और सख्त बात कही, "रकार्ड नहीं सुना, यारी रन्नों की, दलाली कोयलों की।"

"तुझे भला मैं भूली हूं, जती महराज को?" दीपो भभक कर बोल पड़ी, "सारा-सारा दिन चूहड़ियों के पीछे धक्के खाता फिरता है।"

यह उल्टे हाथ का थप्पड़ इतना जबर्दस्त पड़ा कि लीखे का सारा शरीर ही ठंडा हो गया। खुद को 'बेशर्म-सा' होता प्रतीत हुआ उसे। वह यूं ही खिसियानी-सी हंसी हंसता रहा, पर उसमें जान बिलकुल नहीं थी। दीपो उसे 'ठंडा-शीत' हुआ देख कर मन ही मन हंसती रही। उधर लीखा सोच रहा था,"यह बात उसे किसने बतायी?" उसे बंतो पर शक हुआ। पर उसने बंतो को कभी कुछ बताया नहीं था।

दीपो के चले जाने के बाद भी लीखे का डरा-सहमा मन अभी ठीक नहीं हुआ था। पर उसे अपने तिल्ले की कढ़ाई वाले जूतों और बीच में उभरे गोरे पैरों की नसों और इससे भी अधिक उसे अपने गटे हुए शरीर का नशा था। . . . पर वह दीपो की कही बात के बारे में फिर से सोचने लगा। फिर अंदर से विरोध उठा तो दीपो की निंदा करने लगा, "अब यह साली क्या करती फिरती है?" काफी देर तक वह गुस्से में अनाप-शनाप बोलता रहा, पर बंतो कुछ नहीं बोली।

केवल के पीछे दो घटनाएं घटीं, जिनसे खूब दंत-कथाएं चलीं। जैलदार ने फिर नाली खोद ली। गंडे ने बिलकुल चूं-चबड़ नहीं की। दीपो अब क्या कर सकती थी! दूसरे उसके पास लड़का था। लड़के को जन्म देने से जो 'राख' उड़ी, गंडा और चिंती को इतनी बदनामी बर्दाश्त करनी पड़ी कि वे मुंह दिखाने योग्य न रहे। हर छोटे-बड़े ने यह बात 'मिर्च-मसाला' लगा-लगा कर कही। जब केवल और उसका साथी जेल से रिहा होकर आये तो नाली की बात फिर चल निकली। पर इस बार ताऊ ने रूखा-सा जवाब दे दिया, "रहने दे मेरे शेर। हम इतनी अकड़ सहन नहीं कर सकते।"

"ताऊ। यह तो बिलकुल ही बुजदिली है।"

लड़का पैदा होने के बाद उनकी गांव में बड़ी बदनामी हुई थी। हर किसी ने उन पर ताना कसा था। रेरू घीसू तक ने भी, जिनकी गांव में कोई कद्र नहीं थी, गंडे पर चोट की, "बड़ी गैरत वाले, मैं तुझे खूब जानता हूं। अगर थोड़ी-सी भी शर्म हो, तो चुल्लू भर पानी में डूब मर। तेरी बहू ने लड़का तो केवल का ही जन्मा है।" दूसरे, गंडे को बहुतों ने समझाया, "मूर्ख ! बेगाने बेटे का क्या बिगड़ेगा? कल को तेरे पोतों से कोई रिश्ता नहीं करेगा। और साथ ही अब तक जो खर्च हुआ है, वह क्या केवल के पल्ले से हुआ है? और सच, उसने यह झमेला खड़ा कर के, कौन-सी कमाई की थी। एक तो पैसों की बर्बादी। दूसरे लोगों में मुफ्त बदनामी हुई। उसके अलावा रहा सहा जीना दूभर हो रहा था।

चिंती ने केवल के कंधे पर हाथ लगाते हुए मीठी आवाज में कहा, "देख पुत्र। शाबाश तेरे, जिसने हमारी खातिर अपना खून पानी बना कर बहाया। . . . तेरा यह ऋण पता नहीं कब चुकाया जा सकेगा? पर अब तू जाने दे. . . अति अच्छी नहीं होती। समझ लेंगे कि पुन्न कर दी। तू तो सयाना है, लोग सौ-सौ बातें बनाते हैं। इनकी जीभ में कीड़े पड़ें, निपुत्रों के. . . ।" चिंती ने माथे पर हाथ मारा, "पुत्तर, लोगों की जुबान तो बंद नहीं की जा सकती. . . अब. . . तू. . .।"

केवल का चेहरा अस्त होते हुए सूर्य की तरह सिंदूरी हो गया और वह यह कहते-कहते कुढ़ता हुआ वहां से चला आया— "शाबाशी तेरे पर और लानत मुझ पर।" उसे इस बात की समझ नहीं आ रही थी। "सालो, मेरी कौन-सी जायदाद है! न जाने. . . मैं किसकी खातिर. . . । साले मुझे रौब देते हैं, जैसे मैं अपने लिए कर रहा हूं।" केवल इस बात को चारों पहर सोचता रहता, तो भी कुछ समझ में न आता। केवल को घर में ही रहते देख कर, उन्हें कोई झमेला खड़ा होता प्रतीत हुआ और झमेला भी कोई बड़ा ही लगता था। मौका देख कर बचने ने पाले को शादी का दिन तय करने के लिए जोर दिया। उसे किराया-भाड़ा भी दिया। लेकिन पाला दूसरे दिल मायूस-सा मुंह लिये वापस आ गया, "उन्हें भाई, किसी ने बता दिया है कि लड़का बेगानी स्त्री की खातिर कैद काट कर आया है।"

'हैं. . . ।" बचने का गला खुश्क हो गया।

"हां, और साथ ही यह भी कह आया कि उस स्त्री से केवल का लड़का पैदा हुआ है. . . वे कहते हैं, हमारी तरफ से कोरा जवाब है तुम्हें।"

"तुझे जोर डालना चाहिए था न, पाले. . . ये तो कोई बात न हुई।"

"मैं जोर कैसे डालूं। जब उन्होंने यह अड़चन खड़ी कर दी— अब तू ही सोच. .।"

". . . मैंने तो बहुतेरी मिन्नतें कीं. . . पर उन्होंने एक नहीं सुनी। देख ले भाई, मैंने तो अपनी ओर से कोई कसर नहीं उठा रखी। . . . लेकिन भाग्य नहीं साथ दे रहा ससुरा।"

"तो फिर, अब किसी तरह बेड़ा पार नहीं लगा सकता?" बचन्ना यह सोच रहा था कि लोगों को वह कौन-सा मुंह दिखायगा?

"यूं तो भाई साहिब, मैं भी विवश हूं, जो साले यूं ही मुंह फेर गये, उनसे क्या उम्मीद! " और पाला चलता बना।

इस बात से घर वालों पर जैसे बिजली गिर पड़ी। गांव में हर एक के मुंह पर यही बात थी। सयानों ने उन्हें उपाय सुझाया कि वे सीधा लड़की वालों से पूछें। रिश्ता करके इनकार कर देना कहां की मर्दानगी हुई? जब पंचायत लक्खे जाने के लिए तैयार हुई, तो पाले ने साथ चलने से इनकार कर दिया।

"मैं नहीं भाइयो ऐसे लोगों के मुंह लगता; जो मुकर गये, समझो मर गये।" बल्कि पाले ने उन्हें भी जाने से रोका। "आप यूं ही शोर मचा रहे हो। उन्होंने तुम्हें घर के चबूतरे पर पैर नहीं रखने देना है।"

पंचायत को पाले की बात में कोई वजन न लगा। जब वे लक्खे पहुंचे, तो बात कुछ और ही निकली। जिस आदमी का नाम लेकर पाले ने रिश्ता करवाया था, वह कह रहा था कि वह तो पाले को जानता भी नहीं। पंचायत को पाले वाली बात सच्ची होती लगी। लेकिन उस आदमी का गांव में आदर-मान था और चार भाई पूछ कर बात करते थे। इतना बड़ा खानदान। उसके बारे में ऐसी बात सोचनी वैसे ही बुरी लगती थी। सारा गांव उस आदमी के नाम की शपथ लेता था। लक्खे वाले गुरुदयाल सिंह ने कहा, "दिखाओ तो सही मुझे वह आदमी. . . ।" और पाले का गांव में ऐसा-वैसा ही स्थान था। उसके तो बच्चे अकसर भूखे रहते थे! दो जून की रोटी भी नहीं जुड़ती थी उन्हें। जब गांव वापस आ कर उन्होंने पाले को पंचायत में बुलाया तो उसने डींग मारी—

"तुम्हें कहा नहीं था, वे तो बेटी के यार हैं पक्के। मरे और मुकर गये का कोई इलाज है भला. . . ?"

बचने को पाले ने जोरदार रगड़ा लगाया था। उसने बचने से पैसे ले रखे थे। और भी कितना कुछ ले चुका था, जिसे वापस करने का प्रश्न ही पैदा नहीं होता था।

"देखो तो कैसे जुबान चला रहा है?" बिशन उसकी ओर ऐसे बढ़ा, जैसे थप्पड़ मारने चला हो। "ऐसी बातें करते शर्म नहीं आती. . . । . . . इनके बारह सौ का कबाड़ा कर दिया. . . अब तो तूने महल खड़े कर लिये होंगे। . . . गांठ बांध कर घर से पैसा पकड़ा दिया. . . अब फिर जाट के पुत्र का विवाह भी तो करवा. . . ।"

"मैं किस की लड़की उठा कर ला दूं?" पाला सच्चा साबित होने के लिए इतनी ऊंची आवाज में बोला, जैसे उन्हें डराना चाह रहा हो। और सारे ही उसकी इतनी लानत-मलामत कर रहे थे, लेकिन वह कहता जा रहा था. . ."मुझे क्या मालूम. . .मेरा क्या दोष है... ?"

"मुझे क्या पता है. . . किसने ताला तोड़ा है? मैं तो अपने घर में था. . . ।" केवल ने खयालों से बाहर निकल कर, सिर ऊपर उठा कर देखा; आदमियों के एक बहुत बड़े समूह में घिरा हुआ बाकी मानों का सीता यह बात कर रहा था। निकट जा कर उसने सारी बातें समझीं। पिछली रात बलबीर की बैठक का ताला तोड़ दिया गया था। सरदारे की बीवी कह रही थी, "मैंने उसे ताला तोड़ते हुए देखा है।" लेकिन वह 'पैर' नहीं लगने दे रहा था। उनका इस तरह का शोर-शराबा केवल को अच्छा न लगा और वह अपने-आप में उलझा हुआ घर की ओर चल दिया। सूर्यास्त हो रहा था, लेकिन उसका अपना घर सूना-उदास पड़ा था। सीते के बारे में अभी तक शोर-गुल हो रहा था, मगर उसका अपना आंगन स्वादहीन माहौल से भरा पड़ा था। परंतु परसों आने वाले दिन ने उसे प्रसन्नता से भर दिया।

7

खाना खा कर केवल, चारपाई-बिस्तर बाहर बिछा कर लेट गया। शीशम का वृक्ष सुनसान आंगन में किसी रूठे हुए की तरह खड़ा था। चारों ओर निस्तब्ध वातावरण में केवल को अपना खाली घर भूतों का डेरा लग रहा था। पड़ोस में बंतो के घर शोर-गुल मचा हुआ था। दीवार आदमी के बराबर ऊंची होने के कारण उधर की बात इधर आसानी से सुनी जा सकती थी। बंतो की रोटियां थापने की 'थप-थप' में से उभरती उसकी तीखी आवाज कभी-कभी ऊंची उठती।

"यह साली, खाल-फाड़ सी, बिच्छू की भांति उछलती रहती है।" केवल ने आहिस्ता से कुढ़ते हुए कहा।

बंतो कभी-कभी उसे इतनी बुरी लगती कि वह उसे खत्म कर देने के बारे में सोचता। जब लड़ने लगती, मजहबनों की तरह ताने देती, आगा-पीछा न देखती। पड़ोसिनों के साथ वह नालियों के पानी तक के पीछे झगड़ा करती रहती। खेलते हुए बच्चे आपस में लड़ पड़ते तो वह बच्चों की बातों में आकर दूसरों के घर जाकर लड़ने-मरने को तैयार हो जाती। इसलिए लोग उसे 'मनहूस' मान कर उसकी निंदा करते। उसका इस तरह का स्वभाव ज्यादा तो अलग होने के बाद ही बना था। अजैब के दिमाग को गम का धुआं चढ़ जाता तो सारे परिवार वालों को अपने हाथों-पैरों की पड़ जाती। छोटी-मोटी सी भी उदासी वाली कोई बात होती, तो अजैब को पागलपन का दौरा पड़ जाता। जब वह लोगों से बंतो के बारे में भांति-भांति की बातें सुनता तो सन्न रह जाता। पर वह कहता कुछ नहीं था। जब पागलपन उठता तो बंतो के पीछे गंडासा उठाये फिरता और अगली-पिछली बातें जतलाता। . . . इस कारण घर में वीरानगी-सी छायी रहती। बंतो सारा दिन अजैब के साथ खेतों में खाक छानती फिरती। आधे हिस्से, बटाई और मामले पर जमीन लेकर भी वे बराबर पलड़े में न रहते। सावन माह में ही चूहे बोरियों में घुस-घुस कर निकलते। बच्चों वाला घर . . . बच्चे सुबह-शाम खाने को मांगते पर कमाई तो कोई थी नहीं।

"परमात्मा के रंग हैं। उसके हुक्म बगैर तो पत्ता भी नहीं हिलता।"

केवल ने करवट ली और साथ ही एक लंबी आह भरी; और पड़े-पड़े ही उंगलियों से दरी खुरचने लगा। उसकी बहनें, साझे घर में हर साल दरियां बुनती थीं। बंतो से यह काम तो क्या होना था, उससे तो वक्त पर बच्चों के कपड़े ही नहीं बनते थे। लोग बंतो के बारे में तरह-तरह की बातें बनाते, "इसके घर में फलां आता है. . . मैंने खुद देखा है . . . फलां के साथ खेतों में फिरती है।" अजैब जिससे बटाई पर जमीन लेता, उसका नाम जबरदस्ती बंतो के साथ घसीटा जाता। लोग मान भी जाते, जब उसे चारों पहर उनके घर के अंदर घुसी देखते। उसके संबंध में यह प्रसिद्ध था कि वह अपना मतलब निकालने के लिए दूसरे के पेट में घुस जाती है और वह स्वयं कहती थी, "मीठा होने से बंदे का क्या बिगड़ जाता है!" काम निकाला और फिर बात तक नहीं करती। इसीलिए लोगों से

लड़ने के बाद ज्यादा देर तक अकड़ न रख सकती, झुक जाती और दूसरे के घर चली जाती और खाल-फाड़ जैसे मुंह को बना-संवार कर कहती, "ले बहन। मेरा तो तेरे बगैर चलता नहीं, चाहे सिर में जूते मार ले।"

जब किसी को अपने साथ जबर्दस्ती करते देखती, तो उससे सहन न होता। मगर बिगाड़ कर रखने को भी वह बुरा समझती। एक बार जैलदार ने बंतो की ऐसी बदनामी करवायी कि लोग मुंह में उंगलियां दबाने लगे। बात यूं थी कि अजैब के साथ छन्नों वाली का लड़का काम करवाया करता था (लेकिन उसकी अच्छाई-बुराई किसी ने नहीं देखी थी)। जैलदार ने केवल की बदनामी करने के लिए लीखे और उसके साथियों को उकसाया, "सालो। चुल्लू भर पानी में डूब मरो. . . घर में शहतीर सा जवान रखे हुए हैं. . . " रात को बहाना बना कर उन्होंने उस लड़के की ऐसी खाल उतारी कि लोग आधी रात के वक्त चीखें सुन कर उठ खड़े हुए। इससे बंतो की रही-सही इज्जत भी मिट्टी में मिल गयी, मगर उसके बाद जब जैलदार की मां मरी तो शरीक होने के नाते, बंतो ने महीना भर उनका काम किया। बंतो की सहेलियां उसे चोट करतीं, "अरी तू कुछ तो समझ कर, कल शरीकों ने चौपाल में तेरी बेइज्जती की और आज तू निपूतों की गुलामी करती फिर रही है?"

"अरी छोड़ बहन, उनकी वे जानें! वे कर गये, मैं क्यों करूं! जो दुख में आह न भरे, वह आदमी नहीं होता।"

केवल भी उसकी इस बात पर नाराज था। पर उसे क्या कहे? उसे इस बात की समझ नहीं आ रही थी, "यह इतनी जल्दी भुला क्यों देती है?. . . जब लड़ती है, तो आगा-पीछा नहीं देखती।"साझेदारी में केवल के साथ उसका लड़ाई-झगड़ा होता ही रहता था। तब केवल को उस पर बहुत क्रोध आता था। एक तो उसका दिल वैसे ही उदास रहता था। केवल को याद आया, पाले की ठगी के समय, बंतो ने उसके साथ क्या भली की थी?

उधर पाला आंखें फेर गया था, तो इधर वह गंडे से गुस्सा हो कर आया था। तीसरे, हंसी-हंसी में बंतो उसे बोली मारती थी। इन दिनों वह सारा-सारा दिन चादर तान कर पड़ा रहता। दोपहर को बंतो ने उसे खाना ला कर पकड़ाया, केवल ने दो-एक निवाले साग लगा कर मुंह में डाले। जब बंतो रिड़कने में से लस्सी डाल कर उठी, उसके कान हैरान रह गये। मक्की की रोटियां कौए घसीटते फिर रहे थे। केवल चादर ताने पड़ा था। बंतो ने दौड़ कर कौओं को उड़ाया।

"तू तो टांगें फैलाये पड़ा है, रोटियां कौए घसीटते फिर रहे हैं।"

"मुझे नहीं खानी रोटी, मुझे भूख नहीं. . .।" केवल ने मुंह लपेटे-लपेटे ही कहा...

"तो पहले मुंह टूटा हुआ था क्या?. . . यहां पांच-सात फिर रही हैं न जो पकाती जायेंगी रोटियों पर रोटियां. . . ।"

केवल ने झट से मुंह उघाड़ कर देखा। बंतो का चेहरा क्रोध से टेढ़ा हो गया था। "देख क्या रहा है, कौओं ने आंगन में टुकड़े-टुकड़े कर के बिखेरी हुई हैं।" बंतो ने गुस्से से कहा।

"तुझे कहा किस कंजर ने था भई मुझे रोटी पकड़ा?"

"अच्छा !" बंतो ने जमीन से थाल उठाते हुए कहा, "इतनी अकड़ है?"

"अगर अकड़ न होती तो अब तक लोग हमें दिल्ली दक्षिण पहुंचा आते।" और केवल चबा-चबा कर बात करता हुआ जूतियां पहनने लगा। खेस अपने इर्द-गिर्द लपेट, बड़बड़ाता हुआ बाहर निकल गया।

"जरा रुक कर सुन ले, अरे ओ जाट।" बंतो ने उसे बाहर जाते हुए देख कर बायां पैर धरती पर मारा और मुंह पर हाथ फेरते हुए कहा, "आज के बाद तुझे पानी भी पूछ गयी, तो मुझे मां की बेटी न कहना। तू परिवार के हर एक आदमी को तुच्छ समझता है।"

"अरी. . . चलती बन, मैंने तुझसे क्या लेना है, सारे जहान की जूठन से?" केवल तो बाहर निकल गया पर बंतो घंटा भर खौलते पानी की तरह उबलती रही।

गली में से जाता हुआ केवल, बंतो की कुड़-कुड़ से अचेत धर्मशाला के पास खेलते बच्चों के निकट क्षण भर के लिए रुका। फिर चौपाल की ओर चल दिया। चौपाल में बैटे आदमियों ने उसे चोर आंखों से देखा, पर केवल दबे-पांव आगे निकल गया। दीने बनिये की दुकान पीछे छोड़ने के बाद उसे अपने दिल की धड़कन तेज होती महसूस हुई। उसने कैलू के घर के अंदर-बाहर झांका। आंगन में पूस महीने की धूप टंडी हो रही थी। उसके पांव अपने-आप ही रुक गये। रसोई वाले कमरे में सिंदूरी चुनरी की झलक दिखायी पड़ी। परले मोड़ पर पहुंच कर उसे थोड़ी व्याकुलता का आभास हुआ। वह क्षण भर के लिए रुका और फिर कैलू के घर की तरफ देखता हुआ, दीने बनिये के निकट आ कर खड़ा हो गया। पल भर उसके साथ इधर-उधर की बातें करके, उसने एक बार पीछे मुड़ कर देखा। सर्दियों की धूप थी और गली सूनी पड़ी थी।

इस उदासी में, जब उसे पाले की टगी की याद आयी तो शरीर में से भट्ठी जैसी तपिश आने लगी।

दूसरे दिन, सूर्यास्त होते ही, उसने पाले के घर की तरफ दो-तीन चक्कर काटे, परंतु पाला नहीं दिखायी दिया। जल्दी से घर आ कर वह बोतल को ही मुंह लगा कर पी गया। शराब छाती में मिर्चों की तरह चुभी। जब मुंह साफ कर के बाहर गली में आया तो बाहर की हवा से उसका शराबी मन भड़क उठा। वह पाले के दरवाजे पर क्षण भर के लिए रुका, फिर आंगन में जा घुसा और वहां घुसते ही उसका अपने ऊपर काबू न रहा।

"अरे, ओ पाले. . . !"

पाले का परिवार चूल्हे के आगे बैठा खाना खा रहा था, आग की मद्धम लौ, थोड़ी-थोड़ी देर बाद ऊपर उठती तो उनके पीतल के से रंग के चेहरे दिखायी पड़ते। पाला केवल को देख कर कांपने लगा। फिर भी डर से बिखरती हुई हड्डियों को संभालता हुआ चौके में खड़ा हो गया, "कौन है भई?"

"मैं हूं-केवल, तेरा नया जमाई।"

"अरे. . . मुंह सं-भा-ल कर . . . बो-ल. . . !" पाले का सूखा-सा चेहरा कांप उठा।

"मुंह संभाल कर तेरे साथ बोलूं. . . अरे. . . मेरे ससुर।. . . में तेरी लड़की से फेरे लेने आया हूं।" केवल जोर से गरजा, जैसे कोई शेर गरज रहा हो। आस-पड़ोस वाले गर्म

बातें सुन कर पाले के आंगन में आ जुड़े। पाले को चौके में चीं-चीं करता देख कर केवल फिर भभक उठा, "अब अपने जवांई से बात करता है तो कर ले।" और फिर दांत पीस कर पाले की ओर लपका, लेकिन पाला एक कोने में जा लगा।

"तू भाई अपने घर जा।" पाले की बीवी ने चौके में खड़ी हो कर कहा।

"नहीं, तेरी लड़की से फेरे ले कर ही जाऊंगा, मेरे सालो. . . ।"

". . . तुम्हारे घर में लड़कियां कम हैं. . . ।"पाले की बहू ने हाथ आगे बढ़ा कर कहा, फिर तमाशा देखने आये लोगों की तरफ मुड़ कर घूंघट निकालते हुए, क्रोध-भरी आवाज में बोली, ". . . देखो तो, घर में चढ़कर आ रहा है. . .जैसे खा ही जायगा. . . । बहुतेरा रेवड़ का रेवड़ पैदा हो जायगा. . . कंजर कहीं का. . . ।"

"तेरी मां को. . . कमजात कहीं की. . . मैं तेरी लड़की का खसम बनूंगा।"

पाले की बहू ने पीछे हटते हुए ताना दिया,. . . "अपनी बहनों का ही बन . . . खसम आहलूवालिये की बेटी की डोली ले जायगा।. . . तेरा बाप जाटिन ब्याह कर लाया था न. . . ? चूहड़ी का होकर चूहड़पन दिखा रहा है. . . आया है बड़ी इज्जत वाला?"

केवल को इतना गुस्सा आया कि उसने इतने जोर से उसके धौल जमायी कि वह उलट कर राख वाली टोकरी पर जा गिरी। उठते ही उसने गालियों की बौछार शुरू कर दी। आखिर एक-दो लोगों ने केवल को कंधे से पकड़ा और उसके घर की ओर ले चले, लेकिन वह उन्हें लिताड़ता-घसीटता जा रहा था। उसने अपने-आप को छुड़ा कर, मिट्टी उठा कर दो-तीन मुट्ठियां पाले के दरवाजे पर दे मारीं। लड़ाई देखने वाले दीवारों के पास टिठक कर खड़े हो गये और उस दिन सारी रात केवल हाथों से निकल-निकल कर भागता रहा। एक बार उसने छत पर चढ़कर भी गालियां दीं। दूसरे दिन इस हुल्लड़बाजी के बारे में सरपंच ने बचने को बुला कर पूछा और उसकी डांट-डपट की। कइयों ने पाले को बरगलाया कि पुलिस ला कर, जाटों को दिन में तारे दिखा दे। पर पाला चुप ही रहा।. . . यह तो जो हुआ सो हुआ, लेकिन केवल शराब छोड़ने का नाम नहीं ले रहा था। उसे बाहर निकलना मुश्किल हो गया था। उसके साथ दो विचित्र घटनाएं घट चुकी थीं। जब शराब का नशा उतरता, यही ख्याल आता, "अब मेरा क्या बनेगा?. . . लोगों में सिर ऊंचा करके कैसे चलूंगा?" शराब पीने से सारा परिवार ही गुस्से था। बेबे बार-बार उसके आगे हाथ बांधती, "हाय रे बेटा ! . . . देख केवल। पुत्र, तू अब होश कर।"

और इधर यह झमेला पड़ा था, उधर गंडे के घर का वातावरण बिगड़ा हुआ था। दीपो तभी से कैलू को उठते-बैठते कहती थी, "कुछ शर्म चाहिए आदमी को। डेढ़ वर्ष तक शरीक की चमड़ी कूट कर बेशर्मी से घर से चलता कर दिया। . . . यह उसके किये का सिला दिया तुम लोगों ने? वह तो चलो बेगाना था, तभी तो खाली हाथ चलता कर दिया. . . मैं भी तुम्हारी क्या लगती हूं. . . क्या मालूम कब डंडा-डेरा उठा दो. . . ।"

उसी दिन से कैलू के होश मारे गये थे, काम को उसका दिल नहीं करता था। सारा दिन अंदर पड़ा रहता और दीपो के तीर उसे अलग सहन करने पड़ते। अंदर से उसकी आत्मा भी उसे फटकारती। दीपो की बातें तो किसी समय भी, उसका पीछा न छोडतीं, "आगे

से कोई तेरा चारे का गट्टड़ भी नहीं उठवायगा। अगर उठवा दिया तो मुझे कहना. . .। उसने तुम्हारी खातिर इतनी तकलीफें सहीं और तुमने उसकी यह कीमत चुकायी? कहते हैं न. . . भला करते बुराई गले पड़ी . . .।"

कैलू सारा दोष बापू के सिर थोप देता।

"बापू तो पता नहीं चार साल है या. . . पीछे लोगों में तो तुझे ही रहना है. . . श्मशान में उसके सिरहाने बैठ कर रोते रहना !"

कैलू इस दौरान केवल के पास एक-दो बार आया भी। बापू को बुरा-भला कहता रहा। जब उसने केवल को घर चलने के लिए कहा तो केवल के दिल में फिर वही ख्याल उभर आया, परंतु कैलू को उसने कोई उत्तर न दिया। गंडे ने अंदर ही अंदर इस बात को महसूस किया तो अपने-आप पर खफा हुआ। इतनी लज्जा महसूस हुई कि चेहरा पसीना-पसीना हो गया। ". . . किये का ये बदला. . . ?" तीसरे रोज बाहर जा रहे केवल का गंडे ने बाजू पकड़ लिया और तभी छोड़ा जब केवल उसके साथ उनके घर जाने को राजी हुआ। गंडा उसे हल्के-हल्के घूर रहा था।

"तू हमारे पुत्रों जैसा है. . . पुत्रों जैसा क्यों ! पुत्र ही समझ। माता-पिता बच्चों पर गुस्सा होते ही हैं. . . मैंने तो यूं ही कहा था, तूने खाहमखाह मुंह फेर लिया, जैसे कोई बेगाना हो। पागल न बन, चल।"

दरवाजे में दाखिल होते ही चिंती ने उसके सिर पर हाथ फेरते हुए बना-संवार कर कहा, "आ बेटा। तू तो घर जा कर यूं बैठ गया कि मुड़ कर मुंह ही नहीं दिखाया। हम तो तेरे बिना उदास हुए पड़े हैं. . . देख तो कैलू ने क्या हाल बना रखा है?" अपने पास से जोड़ कर उसने आगे कहा, "उसने तो तब से मुंह में खाना ही नहीं डाला। उसे एक ही रट लगी है कि अभी केवल को मना कर लाओ तो खाऊंगा। ले बता, तूने तो हमारे साथ वह किया, जो कोई नहीं करता।" दीपो दूध ले आयी। केवल ने घूंट-घूंट कर के, दूध पीते हुए सोचा, "यह साला लड़गुच्छ परिवार है, किसी कंजर को किसी बात का गम नहीं।"

और सारा दिन केवल वहीं रहा। शाम को कैलू के साथ खेत पर चक्कर मारने गया। गेहूं की फसल खूब लहलहाती देख कर केवल का दिल खिल उठा। फिर पश्चिम की ओर देखते ही, उसे कुछ होने लगा और वह नाली वाले किल्ले से मुंह फेर कर देसी गेहूं की ओर हो गया। अभी भी उसकी छाती तेज-तेज सांसों से ऊपर-नीचे हो रही थी और वह दूर, परे डांगों के खेत में चल रहे नये पीटर-इंजन की ओर देखने लगा। नाली में से पानी की मोटी धार गिर रही थी। आधे गांव के पास इंजन हो गये थे। और आधा गांव वह रह गया था, जिनका कहीं हाथ नहीं अड़ता था।

उसे एक दिन बापू की कही बात याद आयी, "कमजोर जाट भी बोर करवाये जा रहे हैं, हम किसी से कम हैं? साली दो-तीन वर्षों से हालत कुछ ऐसी बिगड़ती जा रही है कि एक बार जो पीछे हुए हैं, तो संभल ही नहीं पाये।" केवल अपने घर की गिरती हुई हालत के लिए खुद को जिम्मेदार मानता था, लेकिन आधे गांव की ओर देख कर उसके

मन को संतोष आ जाता, "जब आदमी को किस्मत धक्का देती है, तब कोई पीरी नहीं चलती, बस. . .!"

गांव में चार-पांच ट्रेक्टर भी आ गये थे। चाहे बहुतों की साझेदारी थी। लेकिन वे सभी तो नाभे वाले सरदार बने फिरते थे, जिन्हें सिर्फ निंदा करनी होती है। लंगड़े महली जैसे कहते, "अरे उन्होंने कौन-सी लंका सिर उठा ली! चार मन लोहा ही है न, जो वरयाम बढ़ई के एक कोने में पड़ा है, घरास वाले।" लेकिन लोग लंगड़े महली की बात पर हंस देते।

लहलहाते खेतों में घूमता-फिरता केवल उदास था। न जाने क्यों, पहले वाली बात नहीं रही थी। एक तरह से कैलू के सामने ही था सब कुछ। और कैलू को पता भी था। वह कभी-कभी दांत पीसता था।

दिन यूं ही बीतते गये। कैलू कभी-कभी मौन विरोध दिखाता। यार-मित्र उसे नश्तर चुभोते। एक बार सीखे-सिखाये कैलू ने चीख मार कर दीपो को चुटिया से पकड़ लिया।

"बंदा बन कर पीछे हट जा।" उसने जोर मार कर अपनी चुटिया छुड़ा ली और गुस्से में गरज कर बोली, "चल बड़ा आया, लड़का बना फिरता है। पहले अपने बाप कंजर को पूछ तुझे लड़का जन्माया था!"

यह देख कर गंडे ने पुत्र को समझाया, "पुत्र, धीरज रख। जब स्त्री और गाय रस्सा तुड़ा जायें तो फिर आसानी से हाथ नहीं आतीं। मारने से तो और बिगड़ जाती हैं। प्यार पुचकार कर रख। अगर क्लेश करेगा तो बदनामी ही मिलेगी।"

और कैलू सयानी बात सुन कर खामोश रह जाता, पर वह बीच-बीच में भुनभुनाता जरूर था। अब भी वे खाना खाने के बाद तीनों बैठे गुरबत में डूबे हुए थे। केवल का हंस हंस कर बातें करना और उसका गद्दी पर कब्जा देख कर उसका मन काबू से बाहर हो जाता।

"क्यों केवल, पाला, मेरा साला ठगी कर गया न?" कैलू ने एक दिन कहा।

केवल के हंसते हुए दांत, एकदम होंटों में छुप गये। दीपो ने गिलास में से राख झाड़ते हुए कैलू के राख-पुते चेहरे को ओर देखा। दीपक की सिंदूरी रोशनी में उसके बिल्ली जैसे मुंह पर छोटी-छोटी आंखें चमक रही थीं।

"यूं ही होता है, बाई सिंह।"

कैलू ने फिर यूं ही अपना छोटा-सा मुंह खोला, "क्यों न साले का भुर्ता बना दें?"

"बैठा रह अब, आराम से।" दीपो ने राख चूल्हे के अंदर धकेलते हुए कहा, "तुझे मैं जानती नहीं क्या. . . ? जानती हूं बड़े भुर्ता बनाने वाले को। अभी तक टट्टी तो घर में ही करता है।"

केवल ताली बजा कर हंस पड़ा और दीपो भी होंठ भींच कर हंसी।

"क्यों भौंके जाती है, कुत्ते की तरह।" कैलू ने अपने टेढ़े से मुंह को मरोड़ा।

"नहीं तो यह क्या झूठ है? दोनों वक्त उठाती तो मैं ही रही हूं।"

कैलू अंदर ही अंदर कुढ़ता रहा, किड़-किड़ करता रहा पर बात बढ़ी नहीं।

दीपो ने दूध में मीठा मिला कर उन्हें पकड़ाया। बीच में बंतो की बात छिड़ गयी।

केवल बंतो से वैसे ही दुखी रहता था। कैलू नींद आ जाने के कारण वहीं ऊंघने लगा था। पर केवल और दीपो बंतो की बातें करते रहे। केवल अनजाने ही बंतो को कई गालियां बक गया। केवल के जाने के बाद, बंतो ने गली-मोहल्ले में जो लगाई-बुझाई की तो सुनते ही केवल भड़क उठा।

"तूझे नरमाई नहीं बरतनी थी. . .यूं तो वह और ही सिर हो गयी होगी। जाते ही जूता उतार लेना था और पूछना उस वक्त था, जब सिर पर बिल्कुल कोई बाल न रहता!"

"लड़ती तो मैं तब, जब वह मेरे ऊपर कोई तोहमत लगाती।"

"ऐसे लोग तो जूतों से ही सीधे होते हैं।" केवल अभी तक असंतुलित अवस्था में था।

"चल छोड़। हमने क्यों जूते मारने हैं, ऐसे लोगों के रब ही जूते मारता है. . . !" और लथपथ हाथों से दीपो ने केवल को अपने साथ कस लिया।

"हमें परमात्मा बड़ी शाबाशी देगा। है न !" केवल की बारीक-सी हंसी निकल पड़ी।

"रब ऐसे मिजाज वाला है तो अपने घर में ही रहे।" चूल्हे की आग बुझ गयी थी और दीये की लौ अपनी जगह टिकी हुई थी। . . .बाहर आंगन में खड़ाक हुआ तो वे अलग हो गये। दीपो झट-पट बाहर निकली और देखा कि डब्बू दीवार पर बैठा बिल्ली पर गुर्रा रहा था। रसोई की ओर मुड़ते हुए उसने मन ही मन कुत्ते को गाली दी, आस-पास में यूं नजर दौड़ायी जैसे डंडा ढूंढ़ रही हो। बाद में खाने-पीने वाले कमरे में आकर, टोकरी में बरतन रखने लगी। बीच में फिर बंतो की बात उठी, पर केवल कुछ नहीं बोला। कड़ाही में पानी डालकर कैलू को दीपो ने झकझोर कर जगाया। वह उठ कर "हैं,हैं" करने लगा।

आग तापता हुआ केवल अभी तक चूल्हे के आगे बैठा था और टकटकी लगा कर टंडे होते चूल्हे को देख रहा था, "यह इतनी जल्दी टंडा क्यों हो रहा है?" परंतु वह घर वालों के बारे में भी सोच रहा था। . . . घर वाले सभी केवल पर गुस्सा थे। . . .जब लगातार कई दिन केवल घर न लौटा तो उनके मुंह फिर डबल पैसे जैसे हो गये। बचना, पंजाब कौर और बंतो पर गुस्सा हो रहा था। लीखे को भी गुस्सा था, पर बचने जैसा नहीं। वह अब ज्यादा अपने यार मुकंद के पास रहता था। उसके साथ, उसके ससुराल भी हो आया था। मुकंद की दो-तीन सालियां अभी कुंवारी थीं। . . . आयु बढ़ती देख कर लीखे को शादी की चिंता खाने लगी थी। पर उसे केवल की 'रुकावट' बीच में दिखाई देती। घरवाले भी उसे छोड़ कर छोटे की शादी कैसे कर दें?. . .पर लीखे को अफसोस होता कि यह तो बुरे कामों से बाज नहीं आयगा, रिश्ता करवानेवाला, क्या करे. . . ? उसने अपनी बेटी की जिंदगी तो खराब नहीं करनी थी। लीखे को अपने माता-पिता पर क्रोध आता। लेकिन वह करता क्या ! उसकी समझ में ही कुछ नहीं आता था।

"सीधी बात है बापू . . . सौ हाथ रस्सा, सिरे पर गांट।" लीखे ने आखिर एक दिन बात खत्म कर ही लेनी चाही। "अलग हुए बगैर अब काम नहीं चलेगा। यूं कब तक उसके मुंह की ओर देखते रहेंगे। बंदे को एक दिन देखा. . . दो दिन देखा. . . दो साल होने को हैं. . . ।"

"तेरे दिल में है कि शायद यूं सुधर जायगा? सुधरना उसने क्या है लीखे. . . ! किसी ने कुत्ते की दुम बारह वर्ष बांसुरी में डालकर रखी, जब निकाली तो टेढ़ी की टेढ़ी।"

"अगर इसने यही गुल खिलाने हैं, तो हम बीच में क्यों घसीटे जायें। जो 'शोभा' की पगड़ी बंध रही है, उसका तो हिसाब ही कोई नहीं।"

"अभी और देख लेते हैं थोड़ा समय. . . ।" बचने ने फिर बाप वाली बात की।

"देखा हुआ है. . . ।" लीखा कोयले की भांति दहक उठा। "उसे अलग नहीं करना, तो मुझे कर दो।"

बचने ने उसके चेहरे की ओर सहसा ही देखा, बात क्या थी, जिसके लिए लोहे की लकीर खींच रहा था।

"मुझसे नहीं देखा जाता, हर रोज का यह कंजरखाना. . . यह झगड़ा।"

"लीखे, तू यह क्या कह रहा है?"

"मैं टीक कह रहा हूं।"

बचने को कोई उत्तर न सूझा।

"इस बात का जल्दी निपटारा करो।" तपे-तपाये लीखे ने मुंह खोलते हुए फिर वैसे ही कहा, "नहीं तो फिर मैं अपनी मर्जी करूंगा. . .।" वह वैसे ही पानी की तरह खौला। उसने ऊंट पर तंगड़ फेंका पर गुस्सा उसका अभी तक काफूर नहीं हुआ था।. . ."इसका टंटा बीच में खड़ा रहे. . . दूसरों ने अपना कुछ बनाना है या नहीं ! इस नवाब की खातिर कौन कंजर टूंट बनेगा? हमसे तो बना नहीं जाता. . . हां. . . ।"और यूं ही बोलता-बोलता लीखा उठ कर खेत को चला गया।

सेहन में खड़ेबचने को जोर की कंपकपी आयी, फिर यूं लगा जैसे दालान उसकी ओर चली आ रही हो। वह चौंका और पीछे मुड़कर देखने लगा। सीढ़ियों समेत बरामदा भी उसकी ओर बढ़ता हुआ प्रतीत हुआ। बचने को कोई राह नहीं मिल रही थी। यदि कड़ी जैसे पुत्र को अलग करता तो आंतें जलतीं, और अगर लीखे की बात नहीं मानता, तो कमाऊ पुत्र से हाथ धोने पड़ते हैं। घर में हर रोज टंटा-क्लेश होता। बचना और पंजाब कौर समझाने की बहुत कोशिशें करते, पर लीखा था कि अपनी बात पर अड़ा बैठा था। असल बात किसी की समझ में नहीं आ रही थी। यह बात क्या बनी? बचना अंदर ही अंदर टूट रहा था। ऐसे ही एक दिन तू-तू, मैं-मैं हो रही थी कि सुखदेव आ धमका। जब उसे असल बात का पता चला तो लीखे से उसने गहरायी में उतरते हुए पूछा, "सोच लो, अभी तो कुछ नहीं बिगड़ा।"

"नहीं भाई।" लीखे ने उसकी बात को गुस्से से एक ओर रखते हुए, तपी-सी आवाज में कहा, "अब ऐसे नहीं निभेगी। और वैसे भी यह रोज-रोज की तकरार आदमी कब तक सहन कर सकेगा ? उसका तो चलन ही उलटा है। काम-धंधे को हाथ नहीं लगाता। पर धौंस मुफ्त की जमाता रहता है।" वह यूं बात कर रहा था जैसे केवल के झगड़े और लंपटपन से उसका रोम-रोम दुखी था। "समझाने वाली बात भी बेकार है। मनुष्य कुत्ता ही बन जाय, तो फिर उसका क्या इलाज ! ज्यादा अब क्या देखेंगे? अगर अब राख उड़ती है तो भाई वह तो उड़ेगी ही। हम-तुम कब तक रोके रखेंगे?"

"यही तो मैं कह रहा हूं कि एक बार के फटे कपड़े फिर सिलेंगे नहीं?"

"यदि एक दूसरे से अलग होना ही है तो उसे कोई वली-पीर भी नहीं रोक सकता।"

यह सब देख कर सुखदेव भी बहुत उदास हो गया। केवल से पूछा तो उसने भी बना-बनाया उतर दिया, "देख बाई, सीधी सी बात है, वहां से तो मैं हट नहीं सकता बेशक दुनिया इधर की उधर हो जाय।"

सुखदेव यह बात सुन कर जैसे काठ हो कर रह गया। वह केवल के गंभीर से मुख को निहारता रहा।

"पर तेरा ऐसे गुजारा हो जायगो?"

"गुजारा होने को क्या है, जिसकी खातिर मैं दिन-रात मरता हूं. . . वह क्या मुझे पीछे फेंक देगी?"

"फिर भी. . . सारी उमर. . . ?" सुखदेव का अपना बोल जैसे सीला हो गया था।

सुखदेव फिर नहीं बोल सका। जैसे अंदर से सकते में आ गया हो। यूंही बैटे-बैटे बहुत देर तक शून्य में देखता रहा। रात को सभी की चारपाइयां बरामदे में बिछा दी गयीं। अजैब दालान में सोया हुआ था और लीखा मित्र-मंडली से वापस ही नहीं आया था। रात का पहला पहर गर्म-सा था। सुबह-सवेरे थोड़ी टंड हो जाती थी। केवल भी उनके बीच सिर-मुंह लपेटे पड़ा था। चारपाइयों पर पड़े-पड़े वे आज-कल की बिगड़ी नयी पौध की बातें कर रहे थे।

"मेरे तो अब ये सफेद बालों में पीलापन आने लगा है. . . पर कभी यूं होते नहीं देखा था। अब तो भाई, नयी गुड़ियाएं और नये पटोले।" पंजाब कौर ने रजाई को अपने इर्द-गिर्द लपेटते हुए और आस-पास से टीक तरह कसते हुए कहा।

"यह गुड़ियाएं-पटोले अपने-आप नहीं बने मामी, बनाये जाते हैं।"

"नहीं भाई . . . ज्यादा हाथ तो. . . यह जो नये उटे हैं फरजंद नये लड़के-लड़कियां . . . बहू-बेटियां. . . यही मिट्‌टी उड़ाते फिर रहे हैं।"

"नहीं मामी।" सुखदेव ने सिर हिलाया, "आग तो माचिस की डिब्बी से ही लगती है। यदि कोई तीली घिस कर लगायगा, तभी तो लपटें निकलेंगी न . . .।"

बंतो ने सभी को गिलासों में डाल कर दूध पकड़ाया। उसके तो आराम से बैटने के दिन थे। सुखदेव कामरेडों और अपनी भाग-दौड़ के बारे में बतलाता रहा। जब पंजाब कौर को सुखदेव की यह भलाई वाली बात अच्छी लगी तो वह जैसे खिल उटी, "यह काम तो कर, पुत्तर। हमारे फरिश्तों को भी क्या मालूम कि आग कहीं लगती है, धुआं कहीं और निकलता है। हम लोग तो बस, लपटें निकलती ही देखते हैं।"

बचने ने रजाई से मुह बाहर निकाल कर कहा, "क्यों सुखदेव, बारह-तेरह वर्ष तो होने वाले हैं आजादी को आये हुए? लोगों का राज फिर क्या हुआ?"

सुखदेव मामा की बात सुन कर, उसकी ओर देखने लगा। फिर खिसयानी-सी हंसी हंस कर अपने केशों में कंघी करता रहा। कंघी में से बाल खींच कर, गुच्छी-सी बनाते हुए उसी मिस्कीन-सी आवाज में बोला, "यह तो मामा आपको मालूम ही है. . . जनतंत्र के अर्थ वोट लेने के बाद उघड़ते हैं. . . ।"

"नहीं भाई जी, तू गांव-गांव यूं ही जूते तोड़ता रहा है?" बंतो ने घूंघट में से मसखरी की।

"जब साला वृक्ष ही बह गया, तो बेचारी शाखों का क्या जोर।" सुखदेव को उनकी लज्जाहीन हंसी सुनायी दी।

"फिर आप लोग इतना समय तप्पड़-घसीट ऐसे ही बने रहे?"

"मामा। तेरी बात सिर आंखों पर, पार्टी स्वयं बासी पानी में बह गयी. . . असल में पार्टी बनाने वाले ही ऐरे-गैरे थे. . . अब उनके दोनों हाथों में लड्डू हैं। . . . उन्हें इन्कलाब से क्या लेना-देना?. . . तुम्हें हमें जरूरत है. . . मरो सीधे हो कर।"

चूल्हे पर रखे बर्तनों में से आवाज आयी, "ओ तुम्हें मौत पड़े कुतीड़े।" कहती हुई बंतो चूल्हे ही तरफ भागी। कुत्ते को भगा कर, वह फिर रजाई में घुसते हुए उनकी बात-चीत में हूं-हां करने लगी। वे वक्त की वजारत के बारे में बात-चीत कर रहे थे। बंतो ने अचानक बीच में ही बात काट दी, "मैने सुना है, यह वजीर ब्रह्मण है। ब्राह्मण तो होते ही घुंत्री हैं। अपने गांव के राधू ब्राह्मण को ही ले लो, आसमान सिर पर उठाये फिरता है. . . एक तो मर-जाने को भोजन खिलाते हैं, घर में से कपड़ा-लत्ता देते हैं . . . फिर भी माथा जली-भुनी सैंसण-सा बनाये रखता है. . .।"

"अरी ब्राह्मण तो पूज्य होते हैं। कोई भी शुभ-दिन हो . . . पहले ब्राह्मणों के घर चीज देनी, पीपल की लकड़ी दे आना. . . अपने दीने बनिये ने एक बार गाय दी, उस भैंसे जैसे राधू को। साथ में लकड़ी की बनी बेहद सुंदर नांद, पानी पिलाने के लिए नया टब और दूध दोहने के लिए एक बहुत बड़ी पीतल की बाल्टी। लो, बताओ भला! ब्रह्मणों को क्या पड़ी है कि हाथ-पांव हिलायें।"

सुखदेव मामी की बात सुन कर धीमे से हंसा। पंजाब कौर उसकी ओर टकटकी लगा कर देखने लगी। क्षण भर चुपचाप गंभीर हो बैठी रही, फिर सहसा बोल उठी—

"पहले तो भाई मेरा विश्वास था, पर अब नहीं रहा। इसी राधू की बात ले लो, वैसे तो कहेगा कि परमात्मा से मिल कर आया हूं। बातें करेगा, तो परमात्मा का पेट फाड़ेगा। लोगों को उपदेश देता फिरेगा और उसकी अपनी बातें कौए-कुत्ते भी नहीं सुनते। देखो न इसकी स्त्री ने क्या राख उड़ायी है। चूहड़ा क्या, चमार क्या, कोई न कोई राधू की स्त्री के सिरहाने बैठा होता है। अब तक लोगों को हाथ पर हाथ मार कर लूटता रहा है, पर अब उसे कोई टके सेर नहीं पूछता।"

"राधू है सत्तर साल का और वह पच्चीस की।" पंजाब कौर की रही-सही बात बंतो ने पूरी कर दी।

बंतो की बात पर कोई नहीं बोला। घर में श्मशान की सी चुप्पी रह-रह कर छा जाती। ठहरी रात की सांय-सांय में दूर से गीदड़ों के चिल्लाने की आवाजें आ रही थीं। बचना रजाई लपेटे बैठा था, जैसे चारपाई भी उसे मुश्किल से ही सहन कर रही हो। लेटने को उसका दिल नहीं मान रहा था। "क्यों सुखदेव, अब फिर कोई जलसा-जलूस नहीं करना?"

"जलसा करने की उनकी नीयत ही नहीं, मामा।"

"इतनी ही गयी-गुजरी हो गयी तुम्हारी पाल्टी?"

"हमारी तो न कहो. . . ।" सुखदेव ने गंभीर हो कर कहा, "हम अब कुछ करेंगे। बाकी जलसे की सुन लो . . . स्टेज पर लड़कों को ऐसे भड़कीले कपड़े पहनाते हैं कि देखने वाले हंसते हैं. . . कहते हैं, वह तो भई मिट्टी-रंगी है. . . नहीं भई, वह दूसरी छोटे-से कद वाली भी अच्छी है।"

"तेरी बात तो बीच में ही है," बचने ने रजाई सिर से परे हटा कर अपने आप को ठीक करते हुए कहा, "छोटे-बड़े की चौपाल है हमारे यहां, ध्याने का बूढ़ा ही कहे जा रहा था कि लड़के तो अच्छे हैं, समय गुजारने के लिए।"

"बस यह हाल है मामा इनका, कि गिरी ऊंटनी से, गुस्सा लड़के पर।"

"पर सुखदेव, तुम्हारा क्या बनेगा?"

"कोई बात नहीं. . . कुछ ही दिन की बात है. . . तुम देखते जाओ. . . सब कुछ ठीक हो जायगा।"

केवल ने रजाई में करवट ली। बचने ने उसकी ओर देखा। केवल सोया हुआ होने का बहाना करके उनकी बातें सुन रहा था।

"फिर भाईजी ! मेरी बहन का इन्कलाब कब निखरेगा।" सुखदेव ने उसकी मिसकीन-सी हंसी की ओर देखा, वह घूंघट निकाले अजीब-सी आवाज में गुन-गुन कर रही थी।

"तेरी बहन, अब कौन-सा कोहलू जोते हुए है।" सुखदेव उसकी इस बात से, अंदर से बर्फ-सा सफेद हो गया, फिर भी बोला, "दुख-सुख की तो तब कहूं, जब वह अकेली हो। देखो, बाल-बच्चे उसके पास, सास उसकी माताओं जैसी. . . उसने और क्या लेना है?"

उसकी यह बात सुन कर पंजाब कौर झटपट बोल उठी, "पुत्र तूने यह क्या कहा! औरत-मर्द की तो सारी उमर गरीबी ही खत्म नहीं होती। बूढ़ी तो बंदे के श्वासों के साथ ही जीती है।"

सुखदेव के अंदर कुछ खौलने लगा। मामी का बोल फिर भीगा-सा सुनायी दिया, "बेशक लाख बेटे-बेटियां हों, स्त्री का सहारा तो उसका मर्द ही होता है।"

सुखदेव को फिर अपना शरीर टंडा-टंडा लगा। उसने मामी को कोई उत्तर न दिया। अकेली दीये की लौ भप्प-भप्प कर रही थी। तभी बाहर का दरवाजा खोल कर गिरता-पड़ता लीखा अंदर आ गया। झूमता-झामता वह चारपाई के निकट आया, तो उसके मुंह से निकली शराब की बदबू बरामदे में फैल गयी। लीखा पिछले कुछ समय से अपने मित्र मुकंद के पास ही रहता था। बंतो ने उसका चूल्हे पर रखा हुआ दूध ला दिया। कांपते हुए हाथों से लीखे ने गड़वी(लोटा) और गिलास पकड़ लिये। गर्म होने के कारण उसने गड़वी एकदम नीचे रख दी-और हाथों से गर्म गिलास लुढ़क कर टन-टन करता हुआ चौके में गिर गया।

आवाज सुनकर सोये पड़े केवल की नींद खुल गयी। उसने पहले अंधेरे में आंखें फाड़-फाड़ कर देखा। दूध वाले डोलचे के ऊपर खूंटी पर बैठा बिल्ला, छलांग मार कर भाग गया। काफी दूर जा गिरा ढकना उठा कर उसने डोलचे को फिर अच्छी तरह बंद किया।

नींद उखड़ चुकी थी। अंगड़ाई लेते हुए उसने ऊपर आकाश की ओर नजर उठायी। तारे खामोशी से थिरक रहे थे। सुबह का बड़ा तारा उदय होने वाला था। शरीर को ऐसी बेचैनी लगी कि फिर उसकी आंख न लगी। चारपाई पर पड़ा वह अतीत की घाटियों में भटकता करवटें लेता रहा।

8

सुबह-सवेरे जब केवल निवृत होकर वापस आया तो दीपो का पांच वर्ष का काकू दूध वाला डोलचा हाथ में लटकाये ठुम-ठुम करता चला आ रहा था। डोलचा केवल को पकड़ा कर, वह उसके गले में बांहे डाल कर लाड़ करने लगा। उसकी छोटी-छोटी गाजर जैसी बांहों से केवल को जैसे कोई उत्साह मिलता था, कोई चाव चढ़ता था। इधर-उधर की तोतली बातें करते काकू ने अचानक ही पूछा, "ताऊ, मेरी बेबे कहती थी, हम ताऊ के घर ही चले जायेंगे।"

केवल ने उसकी ओर हैरान हो कर देखा। फिर उसकी पीठ पर गुदगुदाने लगा। काकू ऊंची-ऊंची आवाज में हंसने लगा, जैसे घंटी बज रही हो। उसकी हंसी सावन की बौछार की तरह बढ़ती ही जा रही थी। फिर जब उसकी हंसी रुक गयी, तो केवल ने उसे गोद में लेते हुए कहा, "तुझे किसने कहा, अरे ओ गोंगलू।"

"मुझे. . . मुझे बेबे कहती थी?. . . है न ताऊ, हम इकट्ठे रहेंगे।"

केवल को काकू पर बड़ा प्यार आया। उसे पकड़ कर केवल ने चूम लिया। लड़का उछलता हुआ गोद से उतर कर बाहर जा खड़ा हुआ और गुस्से में आ कर मारने के लिए आगे बढ़ा।

केवल हंसता हुआ चूल्हे की तरफ झुक गया। लड़का अपने गाल सहलाता हुआ बोला, "ताऊ-सा। क्या करता है।. . .मैं मारूंगा भी. . .।"

"मैं तेरा चाचा लगता हूं।"

"तहां! चाचा तो उधल वाले घल में है।"

"अच्छा फिर।" केवल ने जेब में से कुछ पैसे निकाल कर उसे दिखाते हुए फिर मुट्ठी में कस लिये।

"मैं लूंगा, दे दो न मुझे।" काकू चूं-चूं करता छोटा-सा मुंह बना रहा था।

"पहले बापू बोल।" काकू अभी तक भी चूं-चूं कर रहा था। फिर केवल ने उसे पकड़ कर अपने साथ कस लिया और बाद में उसकी जेब में चिल्लर डाल दी । काकू घर भाग गया। उदासी फिर उस पर छा गयी। सूना-सूना घर उसके अंदर कंपन पैदा कर रहा था। क्षण भर वह बैठा रहा। फिर चादर के एक कोने में गुड़-चाय बांध कर खेत की ओर चल दिया। जब वह गली का दूसरा मोड़ मुड़ा, तो उसके कानों में "तू-तू. . .मैं-मैं" की आवाजें पड़ीं। उसने आगे बढ़ कर देखा सुरैना अपने भाई से लड़-झगड़ रहा था। उनके बीच दीवार के कारण झगड़ा था। पल भर के लिए वहां खड़ा हो कर वह दोनों के बीच हो रही तकरार सुनता रहा। फिर धूप चढ़ती देख कर, खेत को चल दिया। . . . कभी उसने भी दीवार खड़ी करने का बीड़ा उठाया था। झगड़ा तो बेशक नहीं हुआ था, पर 'दीवार' शब्द से सारा अतीत उसके सामने उभर आया।

---

1. शलजम

इसके बाद बचने ने शरीके के चार भाई बुला कर केवल को अलग कर दिया। घर में से जो चीज उसके हिस्से आती थी, वह उसे दे दी। बंटवारे पर तो कोई शोर-गुल न हुआ। चार एकड़ जमीन उसके हिस्से में आयी। . . . केवल ने सारा सामान रिहाइश वाले कमरे में रख कर ताला लगा दिया। थोड़े ही दिनों में उसने कटिया और भैंस बेच दी। कई दिन वह यूं ही बवंडर की भांति भटकता रहा। घर वालों के साथ उसने कभी बात भी नहीं की थी। फिर न जाने उसे क्या हुआ, वह सेहन में दीवार बनाने के बारे में सोचने लगा। इस संबंध में उसने नौहणा के साथ बात की। नौहणा इन्हीं दिनों, उसके पास ज्यादा आने-जाने लगा था। उसने भी हां कह दी। न जाने क्यों केवल को दीवार बनाने के बारे में व्याकुलता-सी लगी रहती। एक दिन वह और नौहणा गुणे मजहबी से कच्ची ईंटें बनाने को कहने गये। (मजहबी बड़े तालाब पर ईंटें बना लेते और जाटों को बेच देते।) जब केवल ने घर वापस जाने को कहा, तो नौहणा उसे खेत पर चक्कर मारने के लिए कह कर, बाजू पकड़ कर उसे खेत पर ले गया। बालें निकालते गेहूं के खेत के एक कोने, नौहणे की 'रूड़ी मार्का' की एक बोतल दबी हुई थी। जब वे खेत के दूसरे किनारे से वापस आये, तो सूरज वृक्षों के झुंड में नीचे बैठता जा रहा था। नौहणे ने उंगलियों से कोने को खुर्च कर, वहां दबायी हुई बोतल निकाल ली। जब केवल ने इनकार किया तो नौहणे ने बोतल पर से मिट्टी झाड़ते हुए दबी-सी हंसी हंसते हुए कहा, "कोई नहीं यार, सयाने कहा करते हैं न, शराब बातों के लिए, घी पहलवानों के लिए।"

केवल उसकी यह बात सुन कर हंस पड़ा। कुएं की हौदी में पानी भरा था। आज बरसीम को पानी देने के लिए रहट चलता रहा था। नौहणा शहतूत के तनों में टंगा चीनी मिट्टी का कप ले आया। जब उन्होंने पौना-पौना कप अंदर उंड़ेला तो दोनों जैसे हल्के-हल्के सुरूर में आ गये। नशे में घूम रहे सिर. . . और वे दोनों नौहणे वाली गुरबंशो की बातें करते रहे। जब नौहणे ने दूसरी बार पैग लगाया तो मूंछें पोंछ कर, केवल की ओर कप बढ़ाते हुए सहसा ही पूछ लिया—

"और फिर. . . सुना है लीखे की सगाई है।"

'हैं. . . एं. . . उसकी सगाई . . . ।" केवल के शरीर में एक झनझनाहट-सी दौड़ गयी। वह भौंचक्का-सा रह गया। केवल को भूरी-भूरी आंखें निकालता देख कर, नौहणे ने घूमते हुए सिर से यूं पूछा, जैसे शराब अभी उसे चढ़ रही थी, "तुझे नहीं मालूम?"

"ऊं हूं. . .।"

"अच्छा. . . ।" जैसे नौहणे को असल बात समझ में आ गयी हो। वह सिर हिलाता, आहिस्ता-आहिस्ता बोलने लगा, "तो फक्करा। तेरे साथ तो बिल्कुल ही, दुनिया-जहान से अलग हुआ है। मुझे अधिक तो पता नहीं. . . बंशो से इतना ही पता चला है! . . . उसका मुकंदे की बहू के पास आना-जाना है न. . . ! . . . मुकंद अपनी साली का रिश्ता ला रहा है।"

केवल की आंखों के सामने अंधेरा ही अंधेरा नजर आने लगा। उसके कानों में सांय-सांय हो रही थी। गेहूं के खेतों के परे, अंधेरा जैसे स्याही फेरता आ रहा था, परंतु

केवल की आंखों में लालिमा गेरू की भांति चढ़ती आ रही थी। और फिर केवल ने स्वयं को रोकते-रोकते भी दो-तीन नीट पैग अपने अंदर उंड़ेल लिये। दिल पर पत्थरों-सा भार इकट्ठा होता गया। नौहणा उसे छोड़ने आया तो कह रहा था—

"तू दीवार की बिल्कुल चिंता न करना। मैं बंदे बुला लाऊंगा।" केवल भारी कदमों चलता जा रहा था, जैसे छाती पर कोई बोझिल चीज रखी हुई हो। सेहन में प्रवेश करते ही उसकी आंखों में खून उतर आया और वह बड़ी तेजी से बाहर गली में आ गया। नौहणा उसे घर की ओर खींच रहा था। गली में केवल लड़खड़ाती हुई टांगों और बहकते बोलों से गरजा—

"यह तुम्हारा जमाई चल-फिर रहा है, अरे ओ, बेटी-चोदो।" केवल की आवाज शोर में से उभरी। जब घर वालों ने बाहर केवल के बोल सुने, तो बचना और पंजाब कौर भाग कर गली में आ गये।

"तुम्हारा जमाई फेरे लिये बगैर नहीं मरता, अरे ओ बड़े नवाबो।"

घर वाले सारे हैरान थे। केवल किसके साथ गर्म हो रहा है? बचने और पंजाब कौर ने केवल को बाजू से पकड़ते और समझाते हुए कहा, "हट, पगला नहीं तो, किसे गालियां दे रहा है?"

"तुम्हें क्या लेना-देना है? तुम तो मेरे लिये मर गये, मुझे हाथ मत लगाना!" केवल ने अपने-आपको छुड़ाते हुए और उनकी ओर लाल आंखें निकालते हुए तपे स्वर में कहा।

"हट, पगला. . . । क्या कर रहा है !" बचने ने फिर वही बात कही।

"तू मेरा बाप नहीं।" केवल ने अंदर और बाहर से आग की भांति भभक कर कहा, "तू मेरा शत्रु है, शत्रु।" फिर भी वे सभी उसे खींच कर अंदर ले गये। अंदर कितनी ही देर तक शोर-शराबा होता रहा। फिर हल्का होते-होते बिल्कुल ही शांत हो गया। सुबह-सवेरे ही नौहणा आ गया। केवल की हालत रात से अधिक अच्छी नहीं थी। उसके शरीर में तपिश अभी भी भट्ठे की भांति दहक रही थी। थोड़ी देर बाद वह नौहणे के साथ हंसी-मजाक की बातें करने लगा। नौहणे से गुरबंश के बारे मे मजाक करता रहा। परंतुफिर कुछ याद आ जाने से केवल का मुख गंभीर हो गया। उसे अपने अंदर पागलपन-सा उठता प्रतीत हुआ। आंखों में लालिमा-सी उभर आयी। शरीर में झुनझुनाहट-सी होने लगी।

"तुझे पक्का पता है कि लीखे की सगाई है !"

नौहणे ने उसकी ओर देखा। उसे उसके भड़कते हुए बोलों से भय हो रहा था। फिर दबी जुबान से कहने लगा, "तू यार ! अब इसे यहीं पर छोड़।"

"छोड़ा तो हुआ ही है. . . मैं तो वैसे ही पूछ रहा हूं।"'

"वैसे पूछने में भी क्या है. . . ? जिस गांव न जाना हो, उसका रास्ता नहीं पूछा करते।"

"वैसे तो तेरी बात ठीक है. . . साला मन जल रहा है. . . अगर उसने सगाई ही करवानी थी, तो मैं क्या उसे रोक रहा था?"

"यूं जलते हुए मन को कोई नहीं जानता ! . . . अब तू मेरी ही बात ले ले। अगर गुलाम बन कर भाई-भाभी का काम करता जाऊं तो आदर-सम्मान करते हैं। वैसे साला

मेरा, कोई पानी को भी नहीं पूछता. . . रिश्ता पहले ही बड़ी मुश्किल से हुआ था। अब तो कोई उम्मीद ही नहीं। बाकी भाई और भाभी का तो तुझे पता ही है, वे तो मुझे मरा देखना चाहते हैं। तो बताओ भला, काहे के हैं आजकल के भाई। तू तो और भी पीछे रह गया।"

केवल को नौहणे की तानों जैसी बातें सच्ची लगीं। दिल पर जो गुबार-सा बैठा था, वह नौहणे की दिल धराने वाली बातों से जाता रहा। मन फिर बाग-बाग हो गया, फिर भी उसने नौहणे से सख्त आवाज में पूछा, "तू यह बता कि सगाई है?"

"तू तो यार, वही बातें करता है कि नाई नाई बाल कितने बड़े हैं। उसने कहा, जजमान, तेरे सामने ही आ जायेंगें। देख लेना पंद्रह दिन के अंदर-अंदर तेरे घर रेड़ियो खड़केगा।

केवल ने अंदर की ओर सांस खींची और सिर को आहिस्ता-आहिस्ता हिलाने लगा। फिर वह नौहणे को दीवार वाला काम जल्दी खत्म करने के लिए जोर देने लगा। लेकिन नौहणा धैर्य से कह रहा था, "तू दीवार के बारे में बिल्कुल निश्चिंत रह।"

"अरे निश्चिंत कैसे रहूं पतंदरा[1]।" केवल की आंखों में लालिमा चढ़ आयी, "ये मेरे भाई नहीं। भाई होते तो यूं करते? दीवार भी इसकी सगाई से पहले ही खड़ी करनी है। यह भी क्या समझेगा!"

"कोई बात नहीं। मैं आज ही गूणे चूहड़े से पक्की कर आता हूं।" नौहणा उसके पागलपन से डरता था, "उसे कहेंगे कि जो ईंटें पड़ी हैं, वही उठवा दे।"

उसी रोज नौहणा गूणे मजहबी से बात-चीत कर आया। उसे दो रुपये ज्यादा का लालच देकर उन्होंने ईंटें खरीद लीं। तीसरे दिन वे छकड़ा जोत कर ईंटें ढोते रहे। जब वे आखिरी छकड़ा लेकर आये, तो केवल ने दीपो को बंतों के पास बैठे देखा। संधूरे अमली और नौहणे को ईंटें जमाने के काम में लगाकर केवल स्वयं घर की ओर चल दिया। दीपो को केवल के पीछे जाते देख कर अमली ने नौहणे की ओर शरारती आंखों से देखते हुए दांत निपोर दिये। "तू ईंटें पकड़ा आराम से।" नौहणे ने उसे हल्का सा घूर कर बंतो की तरफ चोर नजरों से देखा।

नौहणा और उसके साथी ईंटें उतारते रहे और दीपो केवल के साथ इधर-उधर की हांकती रही। जब दीपो ने केवल से इतने दिन मुंह न दिखाने का कारण पूछा, तो वह ढीली-सी आवाज में बोला, "तुझे पता तो है भई, शरीक ने मुझे दूध में से मक्खी की तरह बाहर निकाल फेंका है। फिर तू तो सयानी है लाडो, टूटी-फूटी झोंपड़ी को भी तो ठीक करना है. . .करना है या नहीं?"

"क्यों, मैं मर गयी थी?"

केवल उसकी तरफ देख कर खिलखिला कर हंस पड़ा। फिर हंसते-हंसते ही कहने लगा, "लोग तो धड़ा-धड़ घर बसाये जा रहे हैं। मैं भी तो कोई प्रबंध करूं?"दीपो उसकी ओर तन कर देखने लगी।

---

1. अपनत्व भरी गाली सौतेला बाप

"देखती क्या है? कोई मायके से रिश्ता ला दे न, भाभी।" केवल लय में आकर धुन निकालने लगा, "नी. . . ला दे भाभी-ए। अपने यार पर करम कमा दे भाभीए।"

"घर बसाने का इतना ही चाव है, तो तू मुंह से बोल तो सही।'"

"मैं तो दुल्हत्थड़ मार कर रो रहा हूं, भई छड़े का कहीं काम बना दे।"

"मै आज ही आ जाती हूं. . . चुनरी उठा कर।'" दीपो उसकी ओर गंभीरता से देख रही थी।

"तू तो मेरे पास ही है.". .कहते-कहते केवल के मन में कुछ आया तो वह बात को टालने लगा, पर दीपो ने कड़क कर पूछा. . ."और तूने यूं ही हाथी घर में बांधना है?"

केवल ने फिर उसे उत्तर नहीं दिया। वह इस बात से घबराता था कि कहीं बातों-बातों में दीपो बुरा न मान जाय। उसने बात दूसरी तरफ मोड़ ली। दीपो भी भूल-भुलाकर और बातें करती रही। जब वह चली गयी, तो केवल ने बाहर निकल कर देखा, अमली और नौहणा ईंटें उतार कर छकड़ा मोड़ रहे थे। जब वे मुंह-हाथ धो कर उसके पास चारपाई पर आकर बैठे तो केवल ने देशी शराब की बोतल खोल ली। पानी की गड़वी लाकर चारपाई के पास रखते हुए केवल ने हंस कर कहा :

"लो भई मित्रो ! थके-टूटे अपने हाथ-पांव को गर्म कर लो, और तो मैं तुम्हारी क्या सेवा कर सकता हूं। मैं तो खाना भी तुम्हें यहीं खिलाता, पर मेरे यहां कौन-सी 'लूल्लां वाली' आयी बैठी है, जो टिकड़ सेंक देगी।"

संधूरे ने शराब अंदर उंडेल कर डकार मारते हुए, जरा रंग में आकर मूंछें संवारते हुए कहा, "अमलिया, लूल्लांवाली तो यहीं घूम रही थी।"

नौहणे को उसकी बात से उच्छू आते-आते बड़ी मुश्किल से रुकी। फिर उसने उन्हें डांट पिलायी, "अबे साले, बात करते समय मौका तो देख लिया कर।"

"यूं है. . . ' अमली फिर उसी गुनगुनी आवाज में बोला,'मौका देखने को मैंने यहां नाला खोल लिया है क्या?"

"नाभेवाले दोस्त।" केवल ने मुसकराते हुए शराब गिलास में ढाली और बोतल नीचे टिकाते हुए कहा, "यह लूल्लां वाली ऐसे ही नहीं मिलती. . . पुलिस ने पिंडलियां भी तो मेरी ही तोड़ी हैं। 'जब कभी अमली अफीम के नशे में होता, तो कहता, "अरे, मेरे जैसा तो नाम वाला नहीं. . ."

"तो क्या हो गया?" अमली ने ढोली की तरह सिर हिलाया, "नागर बैल सी जट्टी भी तो तू ही फंसाये फिरता है, कि नहीं?"

वे दोनों फिर अमली की बातों पर जोर से हंस पड़े। आज नौहणा अमली को ईंट ढोने के लिए ले आया था। संधूरे के बाप के घर ग्यारह लड़कियों की कतार आ बैठी थी। दो लड़के पिछली उमर पैदा हुए थे। लड़कियों को निपटाने संधूरे का बापू हर संभव प्रयत्न कर चुका था। जमीन के चार कुर्रे थे, जो रहन या गिरवी हो गये थे। संधूरा अभी किशोर भी नहीं हुआ था कि उसे जैलदारों की सीरी[1] में दे दिया। जाटों के साथ सीर निभाते,

---

1. खेत मजदूर बना देना

झिड़कियां खाते उसकी जवानी नशे ने खा ली. . .अब बेशक, अमली में काम करने की शक्ति नहीं थी, पर बातों में वह किसी को अपने सिर नहीं होने देता था। अंधेरी हो गयी "सबात" में केवल ने उठकर ताक में पड़ा दीया जला दिया। रोशनी में अमली का मुंह साग वाली टूटी हांडी की तरह लगता था, लेकिन उन दोनों के मुख सोने की भांति चमक रहे थे। अमली अभी तक भी मक्के के दानों की तरह तिड़क रहा था।

"अब एक और सपेरा नागिन को बस में कर रहा है।"

नौहणे ने उसकी ओर मुक्का चलाते हुए, क्रोध में आकर कहा, "कंजर ! नागिन को तो सपेरे ही बस में करते हैं, तेरे जैसी जूठन को तो कोई पास नही फटकने देगा।"

"कोई बात नहीं, देखेंगे टीले वाले नाथ को ! नाग के बच्चे को सीधे रास्ते पर लाता है या नहीं।"

गयी रात तक वे पीते रहे और हंसते रहे। अगली सुबह केवल मिस्त्री बुला कर दीवार बनाने लगा। घर वाले उन्हें ईंटें ढोते देख कर ही समझ गये थे। बाकी सारा परिवार बाहर था, घर में पंजाब कौर और बंतो ही रह गयी थी। बंतो ने पूछे बगैर ही भोजन बना लिया। जब उसने "भोजन तैयार है" कहा तो केवल ने मुंह बना कर जवाब दे दिया।

"तू घर आने वालों को चाय-पानी मत पूछना।" बंतो न जाने क्या सोच रही थी।

"सरदारनी, हम भिखारी थोड़े हैं?"

"मैंने कब ऐसे कहा . . . ? . . . चलो, न सही, दीवार हमारी भी तो सांझी है।"

केवल का आगे से जोरदार विरोध देखकर बंतो यूं बोलने लगी जैसे बड़ी उमर की औरत किसी कम समझ वाले को समझा रही हो, "केवल, तू तो जैसे लोहे की लकीर खींच रहा है ! अलग तो सारी दुनिया होती आयी है, पर नाखूनों से मांस कहीं टूटा है?"

"जो बात तुम लोगों के दिल में है, वह तो सभी के सामने नंगी हो जायगी।" केवल ने उसकी ओर देखते हुए ईंट यूं नीचे फेंक दी, जैसे उसका गुस्सा अभी कम न हुआ हो।

"मैंने कुछ कहा है?" बंतों ने बात को फिर टिकाते हुए कहा, "तू जाने, या तेरा भाई जाने, मैं तो बीच में बेगानी बेटी ही कहलाऊंगी !"

"यह बात सच है भाई तेरी !" मिस्त्री ईंट को ठीक से जमाते हुए सिर हिला-हिला कर कह रहा था।

"सरदारनी !" अमली की अफीम रगों में बोल रही थी. . . "तू रोटियां ला इधर, लड़ाई फिर करना।" और मिस्त्री की ओर टेढ़ी आंख से देखते हुए अमली ने फिर उसी आवाज में कहा, "हां ई यार! पेट में चूहे नाच रहे हैं और इन्हें लड़ाई की पड़ी है।"

बंतो को बात रास आ गयी। उसने सभी को रोटी पकड़ा दी। उसके बाद काम फिर शुरू हो गया। सूर्यास्त के साथ ही मिस्त्री ने दीवार सिरे लगा दी। मुंडेरे बनाकर उन्होंने दीवार का काम टप्प कर दिया। दीवार बन जाने के बाद , केवल को अपना-आप और घर का आंगन अजनबी-सा लगने लगा। यूं ही लड़ाई-झगड़ा होते दो महीने बीत गये। तीसरे महीने के दस दिन भी नहीं गुजरे होंगे कि कोठे पर स्पीकर गरजने लगा। सुबह से नाई से लेकर परिवार के सारे सदस्य चक्कर मार गये थे, पर केवल ने सौ की एक ही सुना दी।

"मैंने ज्यादा बातें नहीं सुननीं, मेरी कोई मां नहीं, बाप नहीं, भाई नहीं. . . मैंने तुम्हें मरा हुआ समझ लिया है। सुना ! ऐसी फारसियां उसके पास छांटना जिसे दीन-दुनिया की खबर न हो।"

"अरे पुत्र। तू यूं क्यों तोड़-तोड़ कर फेंक रहा है. . . पगले। बेशक लाख लड़ें पर . . . !"

"तू मुझे पुत्र समझती होगी. . . ! बातें बनाती है . . . मैं उसकी झोली में से रुपया उठाता था न?"

"तो ! तुझे कोई यूं कहता है क्या?"

"अभी बाकी है क्या?" केवल वैसे ही जला-भुना बैठा था। "अगर तब काम चल रहा था, तो अब कौन-सा नहीं चलेगा. . . अब भी चलेगा. . . मेरे घर से बाहर हो जाओ, जिसने मुझे अलग करने के लिए एड़ी-चोटी का जोर लगाया, उसकी मैं सगाई पर जाऊं?"

और वह फिर गरज कर बड़े ही गुस्से में भभका, "तुम सोचते होगे कि भई मैं भुला दूं? सगाई तो सगाई, मैंने तो उसके मातम में भी नहीं आना। हां!"

"हाय ! क्या कहता है पुत्र! शगुन के दिन तो बुरा बोल न बोल।" पंजाबो उसकी मिन्नतें कर रही थी।

अंदर की बात जान कर पंजाब कौर और बचने का मन बहुत ही खराब हुआ, लेकिन उन्होंने सयानेपन से उठती हुई बात को दबा देना अच्छा समझा। लीखा स्वयं मिन्नत करने आया। केवल ने उसका भी निरादर किया। जब केवल ने लाल सुर्ख आंखें कर के कहा, "अब, मेरे बगैर सगाई नहीं हो रही. . . अगर मैं तब कंजर था, तो अब भी कंजर ही हूं, बाई सिंह . . . ! दफा हो जा...! जब मैं तेरे घर आऊं तो बेशक जूता उतार लेना। मेरे घर से बाहर हो जा।" और लीखा अपना-सा मुंह लेकर लौट गया। बेबे उसे खाना पकड़ा गयी पर उसने खाया नहीं और बिनौले वाले तौड़े में डाल दिया। शाम हुई तो उसे चार भाइयों के कहने पर जाना पड़ा, पर वह वारना[1] कर के वहां खड़ा न रह सका। रात को नौहणे के साथ शराब पीकर उसकी सिसकियां निकल गयीं। नौहणा बहुत चुप कराता रहा पर उसकी आहें और ऊंची होती गयीं !. . . और पड़ोस में शराबी हंसी सारे माहौल में बिखरी हुई थी।. . . बेस्वाद सी हंसी और शोर-शराबा केवल को अंदर से बुरी तरह जख्मी किये जा रहा था।

जब केवल कपास के खेत के पास पहुंचा तो उसकी सोच छीलो मजहबन की हंसी से उखड़ गयी। पिछली स्मृति का अभी उसे एहसास था। कपास चुनती हुई स्त्रियां एक दूसरी से हंसी-मजाक करती छोटी-छोटी बात पर हंस रही थीं।. . . परंतु केवल अभी उसी बेस्वाद-सी हंसी से जख्मी हुआ जा रहा था।

---

1. शगुन के पैसे देना

9

छीलो मजहबन अभी तक वैस ही ऊंची-ऊंची आवाजें दे रही थी, "अरी,आजाकहींनहीं लगी तेरे बर्छी।अरी छुट्टड़ क्यों सूने वाली भैंस की भांति हिम्मत हारे बैठी है . . .? कहीं नहीं मौत आने लगी तुझे, आ जा . . . अब तोखेत का मालिक भी आ गया है . . .!"

"मालिक आ गया तो कर के ले जायेंगे, ऐसे ही तो नहीं ले जानी।" पैरों में चुभे कांटे निकाल कर उठती हुई युवती मजहबन लंगड़ाते हुए बुदबुदायी। "अरी. . .तूयहां जबान चलाये जा रही है. . .और मेरे पांव कांटों से अटे पड़े हैं!"

"कहीं नहीं तुझे गोली लगती!" छीलो ने कपास से भरी मुट्ठी झोली में डालते हुए, केवल की ओर देखा।

"इतनी गर्म न हुआ कर। सारा दिन आग की तरह जली-भुनी रहती है !" केवल ने उसके निकट पहुंचते हुए धीरे से कहा।

"अरे ! . . .फिर कहेगा कि कपास नहीं चुनी गयी, गर्म न होऊं तो और क्या सिर पीटूं अपना?"

शेष मजहबनें ऊंची आवाज में हंस पड़ीं।

'क्रंटवैल' के एक मूंगिया दुप्पटे की ओर देखते हुए, केवल ने गुड़-चाय की गटरी छीलो को पकड़ा दी। छीलो ने केवल की नजर भांप ली। छीलो जब तक स्वयं को रोक सकती थी, चुप रही। अब उसकी उमर ढल गयी थी, पर सांठ-गांठ कराने में वह कभी ढील नहीं करती थी। केवल वहां खड़ा-खड़ा, उस मूंगिया दुप्पटे की ओर चोर निगाहों से देख लेता था। छीलो ने उस महजबन को पुकारा—

"अरी देबो। कमबख्त. . .! यह तो सारे गांव का देवर है, देख तो सही जरा इसकी ओर।"

छीलो की ओछी बात से केवल का बुरा हाल हो गया और जी चाहा, उसे थप्पड़ मार दे। शर्मसार होते हुए केवल कीकर की छाया की ओर मुड़ गया, परंतु छीलो फिर बोली, "तू भी हमारे साथ कपास चुनने में मदद कर . . . नहीं तो कहेगा कि मेरी कपास कम है।"

"तुझे कौन यह सब कहता है, री नागिन।"

केवल के 'नागिन' कहने पर मजहबनें फिर जोर-जोर से हंस पड़ीं।

"अच्छा रे जाट ! तुझे रास आयी है, मजे ले रहा है।" छीलो भादों की धूप की भांति तड़पी। जाते हुए केवल के कानों में मूंगिया दुप्पटे वाली की आवाज पड़ी, "अरी अंधी, यह तो नये-नये गन्ने चूसता है, तेरे मक्के की सूखी डटंलों को कौन पूछता है !"

"अरी, हमारी ऐसी किस्मत कहां !" छीलो ने एक लंबी आह भरी।

केवल कीकर के नीचे जाकर, छांव में चादर बिछा कर लेट गया। मजहबनें उसकी

ओर गर्दन घुमा-घुमा कर देखने लगीं। आज वाली बात पर भी और पहले भी वह छीलो से खफा रहता था। वैसे कभी छीलो उसे अच्छी भी लगती थी। वह छीलो की चाल समझता था। जाटों के जवान लड़के छीलो के झांसे में आ जाते थे। और अब वह केवल से भी 'कोई इनाम' लेना चाहती थी। और मजहबनें विलावजह बोले जा रही थीं। किसी-किसी बात पर तो वे खिली कपास की भांति हंस पड़तीं। केवल का ध्यान सोये पड़े रास्ते की ओर चला गया। उसे लगा, नौहणा चला आ रहा है। जरा गौर से देखा तो नौहणा ही लगा। ". . . यह भी मेरे जैसा ही है !" केवल ने मन ही मन सोचा। साल भर से नौहणा उसका साथी बन गया था। केवल को लगता था, नौहणा शीशम के सूखे पत्ते सा लट्टू की भांति घूम रहा है। फिर वह उसकी गुरबंशो के बारे में सोचने लगा . . .गुरबंशो के बारे में नौहणा खुद ही, उससे कई बार बातें किया करता था।

गुरबंश का ससुर थम्मण सिंह जब लाम पर से आया था, तो उसकी जमीन का टुकड़ा आंडलू में काट दिया गया था। सरकार की उथल-पुथल अभी खत्म नहीं हुई थी। उन्होंने पांच-छह किल्ले बड्डूंदी में काट दिये। थम्मण सिंह की हालत तो हो चुकी जैसी थी पर उसकी घरवाली अभी भी भरी पूरी औरत थी। आते ही उसका गली मोहल्ले वालों पर दबदबा छा गया था। वैसे भी वह पैरों से लगाती और हाथों से बुझाती थी। जय कौर की एक बुरी आदत और भी थी। एक तो कहती, "बहू-बेटी की बातें करने वाले को कहां सुख मिलेगा?" ऊपर से वैसी ही बातें भी कर जाती। सारा दिन इसकी, उसके पास, और उसकी इसके पास करती भी रहती थी। उसके तीन बेटियां और दो बेटे थे। बड़ा लड़का नगिंदर आठ जमातें पढ़ कर सेना में भर्ती हो गया था। घर में जय कौर का डंडा चलता था। इसी कारण, गुरबंशो नगिंदर के साथ नहीं गयी। जब कभी वह साल-छह महीने बाद छुट्टी पर आता, तब भी जय कौर पुत्र और बहू का अधिक मेल-मिलाप न होने देती। उसे डर था, ऐसा हुआ तो उसकी अपनी पूछ कम हो जायगी। और यह कह कर नगिंदर के कान भरती रहती कि बहुओं को ज्यादा सिर नहीं चढ़ाते। गुरबंश अपनी इच्छाओं, आकांक्षाओं को रोते-बिलखते हुए दिल में दबाये रही। कभी-कभी उसके अंदर से चिनगारियां-सी उठतीं। शरीर ऐसे हो जाता, जैसे भट्टी में रखा हो। वैसे भी गुरबंश उन दिनों पके टमाटर की भांति भरी हुई थी। नगिंदर की पलटन को चीन के सीमांत क्षेत्र में जाना पड़ा। यह सुन कर गुरबंश का शरीर गीली मिट्टी की भांति बैठ गया।

उन दिनों में वह इतनी दुखी थी कि नहाते समय, उसके अंगों पर पानी पड़ते ही, शरीर में से जलता हुआ धुआं उठने लगता। सात-आठ वर्ष के छोटे देवर को वह आने-बहाने छेड़ती। लेकिन यह तो जंगल की आग को फूंकें मार कर बुझाने वाली बात थी। कभी-कभी गुरबंशो आवेश में आकर छोटे देवर को पकड़ कर, उसके गाल लाल-सुर्ख कर देती। यह भी तो लपटें छोड़ते भट्ठे को छींटे मारने वाली बात ही थी। इन्हीं दिनों एक ऐसी घटना घट गयी, जिससे गुरबंशो के पैर उखड़ गये।

सावन का ठंडा-मीठा मौसम था। कोयलें अपने मीठे-मीठे गीतों से वातावरण को रंगीन बनाये हुई थीं। वर्षा हर तीसरे-चौथे दिन आ जाती और भगदड़ मचा देती। आंगन के एक

कोने में बेरी थी। पास में पांच-छः शहतीर, दो बड़े-बड़े पुराने तख्ते और कुछ छोटी-मोटी लकड़ियां वगैरह पड़ी थीं। वर्षा की बौछारें शहतीरों को खराब कर रही थीं। छोटी-मोटी लकड़ियां तो उन्होंने अंदर डाल लीं, मगर शहतीर और तख्ते उनसे हिलाये न हिलते। जय कौर नौहणे को बुला लायी। पहले भी वह जरूरत पड़ने पर सहायता कर जाता था। नौहणा शरीके-कबीले में से बेशक नहीं था, पर आस-पड़ोस में सभी एक-दूसरे का मान-आदर करते थे। नौहणे की पत्नी पिछले साल, कैंसर के फोड़े से मर गयी थी। वह पच्चीस-तीस के बीच का कड़ी-सा युवक था, दरमयाने कद का, मक्की के आटे-सा रंग, तीखे नयन-नक्श ! चीते की तरह पैर रखता नौहणा उनके आंगन में आया तो गुरबंश के अंदर सब कुछ जैसे एकदम से भड़क उठा। वैसे तो वह पहले भी आता-जाता था, पर आज गुरबंश ने उसे और ही नजरों से देखा था। उन्नाबी पगड़ी, गोरे रंग पर चमक रही थी। कलियों वाले नीले पापलीन के कुर्ते के नीचे गोल मछलियों वाली जांघें गाजर की भांति चमक मार रही थीं। जब नौहणे ने शहतीर को अपने बाजुओं के घेरे में जकड़ा तो उसकी जांघों की मछलियां अजीब तरह से थिरकीं।

"साथ में लग जा न लड़के के, खड़ी-खड़ी देखती क्या है?" जय कौर ने नौहणे को अपना सारा जोर लगाते देखकर, घूंघट निकाल कर खड़ी गुरबंश को जरा कसी हुई आवाज में कहा। नौहणा गुरबंश का जेठ लगता था। गुरबंश ने शहतीर का एक सिरा पकड़ लिया और दोनों शहतीर को अंदर रख आये। जब वे चौथा शहतीर अंदर रखने लगे तो गुरबंश का घूंघट उतर गया। नौहणे के हाथों से शहतीर एकदम से छूट गयी। युवती का मुखड़ा ऐसे चमक रहा था जैसे चील के घोंसले में सोने का गहना पड़ा हो। बहू घूंघट टीक करने लगी तो सास ने हंसते हुए हल्की-सी आवाज में कहा, "चल, रहने दे, क्यों चुनरी फाड़ती है।" गुरबंश ने मुस्कराहट बिखेरते हुए घूंघट छोड़कर मुंह दूसरी ओर कर लिया। नौहणा उसकी ओर देखता हुआ यों ही शहतीर को उठाकर टीक करने लगा। जय कौर ने नौहणे को बरामदे में चारपाई पर बिठाया और हंसते हुए चाय पूछी तो नौहणा "नहीं-नहीं" करता हुआ भी, चारपाई पर संभल कर बैठ गया।

"चाय ही है पुत्र, दूध का तो हमारे यहां अभाव है।"

"दूध आप उधर से ले आया करो, आपका कोई हाथ पकड़ता है क्या?"

"पुत्र तू सयाना है।"जय कौर ने नये लगवाये सफेद दांत निकालते हुए धीमे से हंस कर कहा, "हाथ तो बेशक कोई न पकड़े, पर धन्नो तो जाने पर बैठने को भी नहीं कहती दूध तो वह हमें क्यों देगी !"

तैश में आकर नौहणे ने धन्नो को मां की गाली देते हुए, तपे हुए स्वर में कहा, "दूध वह क्या मायके से लायी है? मैं तो कुतिया की चुटियां मूंड दूं। . . . न औरत, न औरत की जात। ऐसे ही 'बेटी देने की' सांड-सी, मैं तो चाची, उससे तंग आ चुका हूं. . .मुझे पशुओं के बहाने गालियां देगी. . .बैरन ऐसी पीछे पड़ी है. . .।"

"तो बताओ," चाची ने आंखें और चौड़ी कर लीं, "ऐसी कलमुंही है भाइयों पिट्टी[1] भला कोई अपने घर वालों को भी गालियां देता है।"

1. जिसके भाई मर जायें वह बहन उसका सयापा करे—एक गाली।

"अगर यह बात है, तो दूध तू खुद दे जाया कर।" गुरबंश ने चाय का गिलास नौहणे को पकड़ाते हुए मजाक किया।

"यह क्या बात हुई !" नौहणे ने फूल की भांति खिलते हुए जरा मचल कर कहा, "दूध तो दूध, तू हुक्म तो कर !"

और शाम को नौहणा सचमुच ही दूध ले आया। वास्तव में भैंसों का दूध वही दुहता था। हल्की-हल्की फुहार पड़ रही थी। जय कौर दूध की आधी बाल्टी देखकर कुछ और ही सोचने लगी।

"अरे बेटा, इतना दूध हम क्या करेंगे? हम तो ले दे कर ढाई जन हैं।" उसने कहा।

"मैंने कहा, खीर-खार बना लेना।" ठुमक-ठुमक कर चलता हुआ नौहणा चौके के निकट आ गया था। जय कौर दिल में सोचती, कुछ भांपती रही। टेढ़ी नजर से बहू की ओर देखा तो पाया वह बाल्टी उठा कर अंदर ताक में रखने जा रही थी। चाची क्या कहती नौहणे को ! खामोश रही। धीमे से हंसती हुई बोली, "हमने तो यूंही कहा था, तू तो सचमुच ही ले आया, अच्छा खीर खाने के लिए आ जाना फिर भाभी के हाथों की।"

क्षण भर के लिए नौहणा खड़ा सोचता रहा, फिर बोला, "मेरे हिस्से की खीर किसी बर्तन में डाल कर रख देना।"

"ठंडी गले से नीचे उतार लेगा?" गुरबंश ने अंदर से बाहर निकलते हुए हंसी में पूछा।

"तू गर्म भी नहीं करके देगी!" नौहणे का हृदय फूल की तरह चहक उठा था। जय कौर ने उनकी ओर देखा। दिल में सोचा, 'यह तो बात खराब है?' पर दूसरी ओर दिल ने गवाही दी, कोई नहीं भाभी लगती है ! फिर भी नौहणे को यह बात कहने से न रह सकी, "तू पुत्र, गर्म-गर्म ही ले जाना, ठंडी हुई खाने का क्या मजा?"

रसोई में से बंशो की छनकती हुई हंसी सुनाई दी, "हां, गर्म-गर्म. . . मेले के पकौड़ो जैसी !" बाद में गुरबंश ने चावल धो कर खीर पकायी। छोटे देवर से उसने दुकान से गरी-किशमिश मंगा कर डाली। दूध को उबाल कर उसने खोये जैसी खीर बना दी। सूर्यास्त के समय चूल्हे में और उपले डालती हुई, वह मन की मस्ती में कोई गीत गुनगना रही थी। "आज तो प्रसन्नता से फटने पर आयी हुई है !" पड़ोसन नंद कौर की भतीजी भप्पो ने दीवार के पास आते हुए कहा। भप्पो की बनावट चटूरी औरत जैसी थी। उसका पीले रंग का हांडी जैसा मुंह फिर खुला, "लगता है, बाई का पत्र आया है।"

चूल्हे में उपलों के साथ लकड़ी लगाते हुए गुरबंशो ने एक लंबी आह भरी, "बाई तेरा अगर पत्र डालने वाला होता. . .! कितने वर्ष हो गये, कभी पता भी दिया है उसने?"

" ना री, उसे दोष न दे! आना कोई उसके अपने बस में है। ऊपर से कमबख्त लड़ाई लग गयी है. . .! सच तेरी सास. . .?"

"गयी होगी, मटरगश्ती के लिए, जब घर में बैठे-बैठे हड्डियां दुखने लगती हैं, तो उठ कर चल देती है !" और फिर उसने दीवार पर कोहनियां टेक कर खड़ी भप्पो से पूछा, " तूने कैसे थाल उठाया हुआ है ?"

"मैं तो आटा लेने आयी थी, हो तो दे दो. . .!"

पहले गुरबंश ने उसकी तरफ गंभीर हो कर देखा, फिर आहिस्ता से कहा, "बेबे को आ लेने दे. . .!"

"भई, तुम्हारी यह बात मुझे बुरी लगती है? हमने तो कभी नहीं कहा, फलां को आ लेने दो. . .। तेरी सास तो हमारे घर से जो चाहती है खुद ही उठा कर ले आती है।"

"ज्यादा गर्म न हो, आटा तो घर है जरूर, तू थाल रख जा, मैं तुझे आवाज दे दूंगी. . . हैं?" और फिर उसने भप्पो को ठंडा करने के लिए कहा, " आ तेरा मुंह मीठा करवाऊं, सारा दिन फेन ही उगलती रहती है।"

"नहीं भाभी ! तेरी सास मुझे विष जैसी लगती है। वैसे इसे कोई पूछ कर देखे तब यह अकड़ कर चौधराइन बन जाती है।"

जब गुरबंश ने पतीले का ढकना उठाया, तो भप्पो ने झटपट पूछा,"भाभी ! तुम्हारी भैंस सू गयी?"

"आ. . . .हां !" गुरबंशो ने खीर में कड़छी चलाते हुए सिर हिलाया। जब उसने दबी जबान से असल बात बतायी, तो भप्पो दांतों में उंगली दबा कर रह गयी और उसकी आंखें खुली की खुली रह गयीं।

" भाइयों पिट्टिए?" भप्पो ने उसके पास बैठते हुए गुरबंश के कंधे पर जोर से हाथ मारा, "कोई तमाशा न खड़ा कर लेना कहीं। अरी यह 'औंतरा' तो चुगल की सी आंखों वाला इतना खराब है कि पूछ मत !" फिर और निकट आ कर उसके कानों में फुसफुसायी, "धन्नो के साथ इसकी लड़ाई किस बात की है?"

गुरबंश ने नहीं में सिर हिलाया, "तुझे बड़ा पता है; अरी परे हट। और लड़ाई किस बात की होगी ! . . . और सुन. . .मैंने कभी तुझे बताया नहीं, मुझे इसने कई बार इशारा किया है, पर मुझे तो यह औंतरे का कांगडी-सा धतूरे से भी कड़वा लगता है . . . और तू कहती है. . ।"

गुरबंश चुप लगा गयी । वह कहती तो क्या? बात ही क्या थी, जिसके लिए वह उसके साथ तकरार करती। उसे यूं लगा, सचमुच. . . यह बात कहीं अच्छी है। परंतु . . .वह करे क्या? भप्पो नौहणे के बारे में और भी बहुत-सी बातें बताती रही। इधर गुरबंशो की यह हालत थी कि वह नौहणे को लाख बुरा सोचने का यत्न करती, पर वह उसे बुरा न ठहरा पाती।

"बाई को कब आना है?"

गुरबंशो को जैसे अंदर एक झटका-सा लगा, परंतु वह संभल गयी। "बाई की तो तू अब बात ही न छेड़; छुट्टी आ कर भी क्या हो जायगा? कभी ढंग से बोला भी नहीं।"

"यह तो तेरी सास की मेहरबानी है !" कहती हुई भप्पो थाल रख कर चली गयी।

बादल अभी तक पूरी तरह बरस नहीं रहा था। हल्की-हल्की फुहारें कभी पड़ने लगतीं, कभी बंद हो जातीं तो कभी बौछारें सेहन को भिगो जातीं। रोटी से पहले, गुरबंश ने सबको थालों में खीर डाल कर पकड़ा दी। ससुर को उसकी कोठरी में दे आयी। उसकी सास बिस्तर में बैठी 'रहरास' का पाठ कर रही थी। काफी अंधेरा हो गया था जब नौहणा आया। उसके

सेहन में आते ही गीली मिट्टी में से शराब की बू उठी। पहले थोड़ा समय अपनी चाची के पास बैठकर वह बातों में लगा रहा। जाते वक्त.उसने अपनी हमउम्र भाभी से खीर देने की कहा¦नशा उसे लट्टू की तरह चक्कर दे रहा था। भाभी ने कांसे का बड़ा कटोरा किनारे तक खीर से भर कर नौहणे के हाथ में पकड़ा दिया। एक हाथ से कटोरा पकड़ कर उसने दूसरे हाथ से भाभी का हाथ कस कर पकड़ लिया। एक कंपन-सी उसकी रग-रग में दौड़ गयी। गुरबंश ने एक झटका मार कर अपना हाथ छुड़ाते हुए अनचाही धमकी दी, "बताऊं बेबे को!"

"बेबे तेरी भली है!" नौहणे ने अंधकार में खिसियानी हंसी हंसते हुए कटोरा संभाल लिया, "इसे पूछना जरा, जवानी के दिनों में दस-दस हाथ ऊंची दीवार कैसे फलांग जाती थी!"

"जा. . .मर जाना न हो तो. . .!" कटोरा पकड़ा कर बंशो रसोई वाले कमरे में खिसक गयी।

काम-धाम खत्म करके जब वह चारपाई पर लेटी, तो नीचे से पट्टियों वाली दरी सुइयां चुभो रही थी। वर्षा की बूंदों से छत कभी-कभी भट्टी की भांति दहकने लगती। लेटे-लेटे बंशो को याद आया कि उसने ऊपर वाला सुराख बंद नहीं किया है। सास को बताये बगैर ही वह छत पर चढ़ गयी। सुराख बंद करने से पहले सहसा ही उसकी आंखें पश्चिम की ओर नौहणे के कोठे पर जा लगीं। बूंदों के सिवा अंधेरे में कुछ भी महसूस नहीं हो रहा था। कितनी ही देर तक वह यूं ही खड़ी रही। बूंदें मोटी हो गयीं तो घबरा कर वह गिरते-गिरते मुश्किल से बची। सुराख पर टूटा ठीकर रख कर, उसने पश्चिम की ओर अंधेरे को एक बार फिर बड़े गौर से देखा, पर बारिश की बूंदों से डर कर, वह नीचे उतर आयी। फिर कई दिनों तक नौहणा दिखायी न दिया। पर जब भी आता, तो मौका देख कर आता। जय कौर घर में न होती। जब कभी जय कौर गांव में जाती, गुरबंशो नौहणे को बुला लेती या नौहणा ही ताक मे रहा। बात छुपी न रह सकी। धीरे-धीरे चर्चा जय कौर के कानों तक भी पहुंची। उसने बहू को बहाने-बहाने डांटा-डपटा। एक रोज जय कौर ने गुरबंशो को अंदर ले जाकर समझाना चाहा। गुरबंश इन दिनों इतनी मुंहजोर हो गयी थी कि उसने सीधा ही कह दिया, "बेबे मुझे मायके छोड़ आ।" जय कौर दांत भींच कर रह गयी। नगिंदर को आये एक मुद्दत हो गयी थी। नौहणा आता रहा। सौ बातें होतीं, पर उसकी जूती भी उन्हें याद नहीं रखती थी।

उसी दौरान नौहणे को अपनी किश्ती डूबती देख कर घबराहट होने लगी। गुरबंशो का 'खाड़े' वाला बहनोई गेबा कई चक्कर लगा गया। बेशक उसने कोई बात देखी नहीं थी, पर मन में जबर्दस्त संदेह पैदा हो जाता था। यह संदेह उसका पीछा नहीं छोड़ रहा था। इस बात के साथ ही नौहणे ने एक और अनोखी बात सुनी, नगिंदर चीनियों के कब्जे में है। उसकी ओर से तो जैसे 'राम नाम सत' ही हो गयी थी। पर जय कौर किसी को कुछ न कहती। वैसे नौहणा भी इस बात का किसी से जिक्र न करता। लेकिन कभी-कभी शराब पी कर केवल के पास आ वह रो पड़ता। एक दिन तो उसने हद ही कर दी। शराबी

नौहणा उसके समझाने पर भी नहीं संभल रहा था। केवल को शक होता कि क्या यह वही नौहणा है, जो उसे 'लीखे की सगाई' के बाद ढ़ांढ़स बंधाता था. . . आज. . .खुद. . . ! नौहणा इतना व्याकुल हुआ, इतना बेचैन हुआ कि केवल के कंधे पर जा गिरा। वह उसे बहुतेरा झकझोरता रहा. . . समझाता रहा, पर सब बेकार !

कीकर के वृक्ष के नीचे पड़े केवल को छीलो झंझोड़ कर जगा रही थी। छीलो काले-कलूटे होटों में से चावलों जैसे सफेद दांत दिखा कर खिल-खिलाकर हंस रही थी। मजहबनें चाय बना कर पी रही थीं। धूप में बनाये, मिट्टी के ढेलों के चूल्हे से धुआं निकल रहा था।

"चाय ला दूं?" छीलो ने खड़े-खड़े ही पूछा। "ले आ अगर दो घूंट है तो . . . ।" उसकी यह बात सुनकर रोटी खा रही देबो को अपने गले में कौर अड़ता हुआ लगा। वह टुकुर-टुकुर उसकी तरफ देखने लगी। एक और मजहबन ने उसकी हैरानी देख कर कहा, "अरी ! देखती क्या है? यह नहीं मानते रख-रखाव।ये तो अपने घरों में भी मुंह मार लेते हैं। ये तो और ही। . . . बेगैरत ! जो अनाचार करते हैं।"

छीलो ने केवल को चीनी के मटमैले से कप में चाय पकड़ाते हुए देबो को नाक बढ़ा कर कहा "यूं खाने-पीने के मामले में हमें चूहड़ा समझते हैं, पर क़भी सुनसान दोपहर के समय आंख मार कर देखना, वही गर्क हो जायेंगे।" देबो को इतने जोर का उच्छू आया कि उसकी चाय बाहर आ गयी। केवल स्वयं छीलो की बुरी जबान पर बहुत क्रोधित था। लेकिन वह करता क्या?

10

कपास चुनी जा चुकी थी। मजहबनें गट्‌टर घर रख गयीं थीं। केवल को भांय-भांय करते सूने घर से भय लग रहा था। फिर आने वाले कल के दिन उसे खुशी चढ़ गयी। सूर्यास्त के समय दीपो रोटी देने आयी तो कैलू की बातें करने लगी। कैलू ऐसा करता है, कैलू वैसा करता है। दीपो उसकी हां ले कर, पक्की ताकीद कर के चली गयी। मगर बाद में केवल यूं ही कितनी देर तक कैलू के बारे में सोचता रहा। अब तक दीपो के दो लड़के हो चुके थे। लोगों को कैलू नर्म स्वभाव वाला लगता था, पर अंदर से वह जला-भुना रहता था। दीपो के साथ घर के अंदर लड़ता-झगड़ता भी बहुत था। कई बार तो मार-पीट भी हो जाती, परंतु दीपो केवल से अलग नहीं हुई। कैलू बेशक परिपक्व-सा हो गया था पर अभी उसमें पूरे आदमी की झलक नहीं दीख पड़ती थी।

पहले-पहल तो कैलू को बहुत क्रोध चढ़ता, लेकिन जब बात पूरी तरह उजागर हो गयी तो फिर उसने 'कुत्ती औरत' कह कर मन को ढ़ांढ़स देनी चाही। पर तब जैसे उसमें बिल्कुल जान ही न रहती जब बाल-बच्चे भी ज्यादा ख्याल केवल का ही करते। कभी-कभी कैलू बच्चों के नक्श अपने साथ मिलाता तो काकू वगैरह के खूबसूरत चेहरे देखकर उसके तन-बदन में आग लग जाती। . . .यह बात भी वह किसी न किसी तरह सहन कर लेता, परंतु दोस्त-मित्र उसे सुबह-शाम बेधते रहते, "जाट तेरे घर आकर गुलछर्रे उड़ा रहा है। और तुम आंखें मूंदे पड़े हो। यदि वह बदजात नहीं मानती तो जाट के घर के अंदर ही टुकड़े कर दो। तुम्हें कोई आंच भी नहीं आयगी।"

कैलू जितना कर सकता था, क्लेश कर चुका था। ले-देकर एक ही धमकी रह गयी थी उसके पास जो उठते-बैठते देता रहता था, " मैंने तो साधू बन जाना है . . .तू अपने लिए कोई और . . .!"

दीपो उसकी ओर देख कर चुप कर जाती। वह उसके भीतर के मंथन को समझती थी।

"फिर . . .तूने कोई उत्तर नहीं दिया।" कैलू मौन दीपो को झकझोरता।

"कोई बात नहीं, जब तुझे साधू होना होगा तब मैं भी सोच लूंगी।"

कैलू के अंदर उधार का स्वाभिमान गर्दन झुका देता। वह दुनिया-जहान का जोर लगा चुका था पर उस दुष्ट स्त्री को बुरे कामों से नहीं मोड़ सका था। घर में मार-पीट भी अनेक बार हुई थी। उसे कभी-कभी लगता, दीपो उसे अपने रास्ते का कांटा समझती है। सयाने बुजुर्ग उसे अच्छी शिक्षा देते, "अरे भले आदमी बछियारी को लगाम दे, दुलत्तियां पहली उमर की और चोट पिछली आयु की बड़ा टीसती हैं। कल को बाल-बच्चे होंगे, लोग उन्हें ताने देंगे कि तुम्हारी मां तो यह करतूतें करती रही है। लड़कों को कोई चौपाल में खड़ा हो कर बात नहीं करने देगा। और दूर क्या जाना है, लड़कों को कोई रिश्ता नहीं देगा।"

सगे-संबंधियों ने दीपो को आकर समझाया। वह उनकी बातें सुन जरूर लेंती, लेकिन

कोई उत्तर न देती। होंट सी लेती, जैसे किसी ने कानों में तेल डाल दिया हो। एक बार कैलू ने अपने शराबी-कबाबी बहनोई को बुलाया। देर रात तक वे पीते रहे। उन्हें नशे की हालत में बातों में लगा देख कर दीपो अंदर-बाहर आती-जाती बुदबुदाती रही। बहनोई पूरा पियक्कड़ था। दीपो, भोजन लिये चूल्हे के बाजू से लगी ऊंघती रही। उसे रह-रह कर नींद की झपकियां आ रही थीं। उसकी आंख लगी तो कहीं कैले ने भोजन मांग लिया। कैलू ने दीपो का कंधा हिलाकर आंखें दिखाते हुए खाना परोसने के लिए कहा तो दीपो के अंदर क्रोध करवटें लेने लगा।

"यह कोई खाने का समय है, पहर रात हो रही है . . . लोग कब के आराम की नींद सोये हुए है . . .और यहां . . . !"

"यहां क्या . . .?" कैलू के अंदर बहनोई का दिया प्रोत्साहन बोल उठा, "बड़े नथुने फुला रही है, और क्या तुझे काटना है ! अगर खाना नहीं पकड़ा सकती।"

"खाना टैम पर पकड़ाया जाता है, आधी रात होने को आयी है, इन्हें अब भूख लगी है . . . शाम से ही पीने पर लगे हुए हैं, शाम से . . .।"

"तू खाना पकड़ायेगी या तेरे खारिश हो रही है" कैलू के अंदर शराब बल खा रही थी, "कमजात नहीं तो . . .यार के पास जाना हो, तो पल भी नहीं लगाती।"

"तू हाथ तो लगा कर देख . . .अगर तेरे . . .!" बात अभी उसके मुंह में ही थी कि कैलू गरजा।

"रुक तेरी मां की . . . अब बोल।" उसने मुक्का हवा में उभारा।

"ले मार. . . !" दीपो उठ कर खड़ी हो गयी, "शर्म तो नहीं आती गालियां देते हुए . . .!"

कैलू ने दांत पीसते हुए एक मुक्का दीपो की गर्दन पर मारा और वह रोटियों वाले डब्बे पर जा गिरी, "बहन देने की, कुत्ती औरत !"

दीपो के कानों में मेहमान के बोल पड़े, "मार . . .इसकी मां . . .इसने क्या खुदा को जेब में डाल रखा है?" और फिर दोनों ने मिलकर दीपो की खूब पिटाई की, जितनी वे कर सकते थे। मुक्कों, लात-घूंसों से उसकी हड्डियों की तह लगा दी। नीचे गिरी पड़ी दीपो ने, शोर-शराबा नहीं मचाया। इसमें उसी की बदनामी थी ! शोर मचाती तो लोग उसे ही बुरा कहते। अंदर पड़ी चिंती को जब 'धम-धम' की आवाज सुनायी दी, उसने भाग-दौड़ कर उन्हें शांत किया। सुबह गुस्से से वह काफी दिन चढ़े तक चारपाई पर पड़ी रही। दिन चढ़ आने पर चिंती ने चूल्हा-चौंका संभाला। चिंती दो-तीन बार दीपो को झंझोड़ गयी थी। उसने चिंती को झिड़की दे कर उल्टे-पांव लौटा दिया था।

"मुझसे नहीं उठा जाता !"

"उठना काहे को है . . .!" सब कुछ समझती चिंती ने बड़ी मिठास से कहा, "काम का तो अंबार लगा हुआ है!"

"आग लगे काम को, जिसे जरूरत है, कर ले . . . मुझसे नहीं होता किसी का मुर्दा फूंकना।"

"लो सुनो. . .!" चिंती ने दोनों हाथ हवा में हिलाये, "लोग सुबह-सुबह 'वाह गुरु' का नाम लेते हैं और तू चारपाई पर पड़ी, गालियां देने लग गयी। चिंती डगमगाते कदमों से बाहर की ओर चल दी और कितनी ही देर तक बड़-बड़ करती रही, लेकिन दीपो नहीं उठी तो नहीं उठी।

छोटी गली वाली दीवार से किसी के नीचे उतरने की आवाज सुनायी दी। चारपाई पर निढ़ाल पड़े केवल ने उधर देखा। शाम के हलके-झीने अंधरे में उसने दीपो को पहचान लिया।

"क्या बात है, आज बीमारों की भांति पड़ा है?" दीवार पर से थाल उठा कर दीपो ने उसकी ओर निहारते हुए पूछा।

"वैसे ही . . .। खेत में से कपास चुन कर लाया था, अभी-अभी लेटा हूं।"

"ले पकड़ रोटी, तूने तो अभी दीया भी नहीं जलाया।" दीपो ने अंदर झांकते हुए कहा।

"अभी नहाया भी नहीं।" पर दीपो उसकी बात का उत्तर दिये बगैर ही रोटी अंदर रख आयी और दियासलाई ढूंढ़ कर ताक पर पड़ा दीया जला दिया। दीया जला कर दीपो ने उसकी ओर देखा। उसे केवल मुरझाया-मुरझाया सा लगा और उसके पास बैठते हुए उसने पूछा—

"तेरे मुंह पर तो जैसे राख उड़ रही है?"

"नहीं तो . . .!" केवल ने एकदम उसकी ओर देखा। दीपो हौसले-भरी आवाज में बोलने लगी, "तू हताश काहे होता है? हमें किसी से ले कर तो नहीं खाना ! मुझे लगता है तू लोगों से डर रहा है?"

"डरता नहीं, कुछ और . . .!"

"फिर सुस्त होकर क्यों पड़ा है? मुझे तो अब उस घर में हर्गिज नहीं रहना ।"

केवल एक शब्द भी न बोला तो दीपो को लगा जैसे उसका किया-कराया सारा पानी में पड़ गया हो। मन में कहने के लिए बहुत कुछ आया पर कहा नहीं। शायद यह सोच कर कि कहीं केवल गुस्सा न मान जाय। मन में क्रोध भी था, "मैंने तो उसके पीछे अपनी इज्जत भी न देखी, और यह ऐसे मुंह फुलाये फिरता है।" फिर वह कोमल स्वर में बोली—

"आज तक उसके घर का दाना-पानी लिखा था। सुबह सारा टंटा समाप्त होगा। हां सच ! मैंने बंतो को सब बता दिया है। उसे तो बल्कि बहुत प्रसन्नता हुई।"

"प्रसन्नता उसे किस बात की होनी है ! सबसे पहले शोर भी वही मचायेगी!"

"नहीं !" दीपो ने चारपाई से उठते हुए कहा, "सुबह उठते ही मैं तो बाल-बच्चे ले कर यहां आ जाऊंगी। तू सारा डर दिल में से निकाल दे। लोग तो चार दिन कुत्तों की तरह मुंह उठाकर रोयेंगे। दिन गुजरने पर बात टंडी पड़ जायगी। अब कोई अंदर बैठा-बैठा कैसे मर जाय!"

उदास बेशक वह नहीं था, लेकिन दीपो की बातों से मन खिल उठा। उसे इतनी खुशी हुई कि वह बड़े उत्साह से चारपाई से उठ खड़ा हुआ। "कैलू का भला सोचने का मैंने टेका

ले रखा है क्या? मेरा किसी साले ने नहीं सोचा. . . मैं उनकी भलाई करता रहूं . . .। मेरी तरफ से तो सारे ही उजड़ जायें।"

मन में दृढ़ निश्चय करके, वह बाल्टी उठाकर नल पर आ गया। नलका चलाते हुए उसने सरसरी तौर पर कान बंतो के घर की ओर लगाये। उसे कोई अजनबी-सी मर्दाना आवाज सुनायी पड़ी। नलके का हत्था वहीं का वहीं छोड़ कर केवल दीवार के साथ पड़ी लकड़ियों के ऊपर चढ़ गया। थोड़ा-सा सिर आगे बढ़ा कर उसने बंतो के आंगन में नजर दौड़ायी। आंखों का चश्मा लगाये सरदारा बंतो के पास बैठा, मुंह से मुंह जोड़ कर बातें कर रहा था। बंतो रोटियां पकाती, एक तरफ से चुनरी दांतों में दबाये हंस-हंस कर उसकी बातों का उत्तर दे रही थी। केवल की आंखों में सिंदूरी डोरे पड़ गये! वह भभकने ही वाला था कि न जाने उसके मन में क्या आया? उसके मुंह में कड़वाहट सी फैल गयी, "बहन देने की कमजात।" उसने एक गाली दी, "कुतिया नित नया यार गांठती है।" मन में उठी विषैली भड़ास गालियों द्वारा निकाल कर वह फिर नलका चलाने लगा। जितनी देर तक नहाता रहा, बंतो को गालियां देता रहा। रोटी खा कर उसने बछड़े को अलग बांधा और चरपाई खुली हवा में डाल कर लेट गया। वह अभी तक भी बंतो के घर की ओर कड़वाहट से ताक रहा था और फ़िर धीरे-धीरे सोचते ही सोचते, बंतो उसे 'गरीबनी' और 'बेचारी-सी' लगने लगी। उसे स्मरण हो आया, सारी आयु बंतो के सिर कूड़े की टोकरी ही रही थी और अब . . .

लीखे के विवाह के बाद बंतो की, उसकी पत्नी के साथ बन न सकी। बंतो को बहुत दुख होता, "मुझे क्या सुख दे दिया। सारे परिवार का गू-मूत साफ करने को मैं ही रह गयी।" सात वर्ष हो गये, इस घर की गुलामी करते! कद्र तो किसी ने क्या करनी थी, बल्कि सारी उम्र बेचारी ने सभी के जूते खाये। अब आखिरी दिनों में देवरानी भी गोली मारने को फिरती है। घर में लीखे की चलती थी, इस कारण उसकी नयी-नवेली दुलहन भी काम-धंधे को हाथ लगाने का कम ही कष्ट करती है। कार-मुखतार लीखा ही था। और उसकी बहू भी चौधराहट चलाना चाहती थी। अजैब वैसे ही सीधे-सादे स्वभाव था। कभी-कभी उसे गर्मी चढ़ जाती तो घर में कोलाहल मच जाता, धुआं उठने लगता। औरत की सरदारी मर्द के सिर पर होती है। लीखा पांच करे, पचास करे, अजैब ने कभी जबान नहीं खोली थी। बंतो पहले तो साझे घर की गुलामी करती रही, पर देवरानी को चौधराहट चलाते देखकर उसने पैर अड़ा लिये। वह सहन भी कैसे कर सकती थी, जिसने बरसों साझे घर का गोबर-कूड़ा किया था। बंतो ने अलग होने के लिए घर मे क्लेश खड़ा कर दिया।

सभी ने उसे समझाया, "देख, तू पागलपन न कर, घर खड़े होते हैं मर्दों के सिर पर तेरा मर्द तो तीन कौड़ी का भी नहीं हैं। फिर बता अलग होकर तू करेगी क्या? पगली तू अकड़ किसके सिर पर रही है? इस जैब के सिर पर, जिसे जब पागलपन उठता है तो दीन-दुनिया की खबर नहीं रहती। चुप कर के साझे घर में काम कर और दो टुकड़े खा।"

परंतु बंतो ने इस सौदेबाजी को लात मार दी। उसने नेक सलाह-मशविरे देने वालों को झाड़ कर अलग बिठा दिया।

"मुझे नहीं किसी की नेक सलाह की जरूरत। मुझे नहीं रहना, नहीं रहना ! मेरी तो दोहाई है ! मेरी सुनो, कोई चारा करो ।" बंतो की बात में मिन्नत-समाजत तो थी ही, पर बातें भी बहुत संवेदंशील थीं, "जब मैं भूखी मर रही हूंगी, तो मुझे कोई खाने को न दे। जिसके घर मांगने जाऊं, बेशक जूता उतार ले। चलो, मेरा आदमी बुरा है, तो बुरा ही सही। अब कहां फेंक आयें? जब बैरी रब ने बुरे लेख लिख दिये, तो भोगने तो हुए। सो भोगेंगे। पर किसी शरीक के आगे हाथ नहीं फैलाऊंगी। कूट-पीस कर दिन काट लूंगी, पर शरीकों की गंदगी नहीं बुहारूंगी। पहले ही बरसों के काम का जो परसाद मिला है, वही खत्म नहीं हो रहा।" वह क्षण भर के लिए खामोश हो गयी, पर फिर बोली, "वह जो अलग हुआ बैठा है, जब शराब पीता, मेरे बाल नोचता। यह बैठा है लीखा, सामने लड़ते थे दोनों आपस में, चोटी मेरी खींचते थे। होंठ सीकर बहुत सहा, अब ताकत नहीं रही और सहने की।"

जब वह अपनी जिद पर ही अड़ गयी तो उन्हें अपना भांड़ा-बर्तन बांटना ही पड़ा। अलग होने से अजैब पर बहुत घातक असर पड़ा। खेत पर जाने के लिए उसका मन ही न करता। अब उसका दिल विषादग्रस्त हो गया था। लोग उसे 'पागल' कहने लगे। बंतो भी उसे पागल समझ कर टोने-टोटके करवाती फिरती। उसने बरगद वाले बाबा को रोट चढ़ाने की मन्नत मांगी। बंतो सुबह-शाम हाथ-पांव मारती फिरती थी, कि कहीं उसका मर्द चला न जाय। मलेर कोटले वाले पीर का, मन में पूर्ण निश्चय से ध्यान धरा। उसकी चौकियां भरीं। लेकिन अजैब को जब पागलपन का दौरा पड़ता, उनके हाथों के तोते उड़ जाते। नये-नये अलग हुए थे। अभी तो बल्कि किफायत कर के घर बनना है। अभी से जो झटका लग गया जो आने वाले पचास वर्षों तक ठीक होता नहीं दीख रहा था। अजैब कान में तेल डाले पड़ा रहता था, अब छोटी-मोटी बात पर 'पागलपन' के दौरे में बंतो के पीछे टकुआ उठाये फिरता। बंतो पराये घरों में बिल्ली की भांति छुपती फिरती। ऐसे मौके पर केवल उन्हें सहारा देता। उसे बच्चों पर प्यार आ जाता और . . .। अजैब कुदरती तौर पर केवल की झिझक भी मानता था। जो कुछ केवल कहता वह सिर झुका कर स्वीकार कर लेता। दूसरों को पागलपंन के दौरे के दौरान काट खाने को आता। कई बार उसने दूध देने को आये काकू को झिड़कियां दी थीं। एक दिन तो वह सीमा ही लांघ गया। इस बार जाड़ों में वह मस्त ऊंट की भांति झाग फेंकता था। एक दिन अजैब को काकू हाथ में डोलचा लिये आता दिखायी दिया। उसने लड़के को कंधे से पकड़ कर रोक लिया।

"ताऊ को दूध देने. . .!" लड़के ने कहा।

"किस ताऊ को . ?" अजैब ने उसे कंधे से पकड़ कर बहुत जोर से झकझोरा।

"मेरे ताऊ केवल को . . .!" लड़का उसकी ओर डरी हुई नजरों से ताक रहा था।

"केवल तेरी मां का यार है न. . .साले की टांगें तोड़ दूंगा, अगर फिर कभी तुझेइस गलीमें देख लिया तो · · · । आया हैबड़ा ताऊ को दूध देने वाला । साले हमारी मिट्टी खराब करते हो?" और उसने एक बार फिर लड़के को झंझोड़ा।

"आज तो दे जा, फिर कभी मुड़ कर इस गली में न आना।"

काकू केवल के आंगन की ओर चलता-चलता, बार-बार गर्दन घुमा कर अजैब को

भूरी आंखों से देखता जा रहा था। इस बात का बंतो को पता लगा, तो उसने अजैब को समझाया,

"तूने लड़के को किसलिए झिड़का? हमारी क्या कानों की मैल जाती है? बल्कि दूध ही दे कर जाते हैं न।"

बात अजैब को जंच गयी।काकू ने दूध देना बंद नहीं किया था, बल्कि उसने रास्ता बदल लिया था। वह पिछली ओर से आकर दीवार पर से दूध पकड़ा जाता था। दीवार के साथ मिट्टी का ढेर लगा हुआ था।

अजैब ने दूसरे-तीसरे रोज ही काकू से बड़े प्यार से कहा—

"अरे भई छोटू! दे जाया कर, हमारे केवल को दूध। उसे खूब मोटा कर दो। मैं कुछ नहीं कहता। मैं तो यूं ही हंसी कर रहा था।"

काकू भोली-भाली और मोटी-मोटी आंखें उसकी ओर घुमा कर मुस्करा दिया।

केवल के सोये पड़े कानों में पैरों की चाप सुनायी पड़ी। उसे अपनी चारपाई की ओर दबे पांवों की आवाज आयी । उसने घात लगा कर कान खड़े किये। चारपाई पर पड़े-पड़े ही सेहन में नजरें घुमायीं। तारों की रोशनी में दूर से किसी मनुष्य का आकार, बंतो वाले खंभे के निकट खड़ा दिखायी दिया। केवल का दिल जोर-जोर से धड़कने लगा। दूसरी तरफ से किसी ने कुछ पकड़ाया और उस आकार ने अपने सिर पर कोई गठरी-सी रखी जो दूर से परछाईं की तरह लगती थी, और दबे पांव केवल की चारपाई की ओर बढ़ने लगा। केवल ने शीघ्र ही कोहनियां टेक कर मामूली-सा सिर ऊपर उठाया। आकार निकट आ गया तो उसने तेज चलती सांसों के साथ पूछा . . .

"कौन है . . .?"

"पड़ा रह आराम से, यहां चोर नहीं आते।" आवाज जानी-पहचानी थी।

"यह सिर पर क्या ढोये जा रही है?" छप्पर के नीचे गठरी-सी रख कर मुड़ते हुए जाने-पहचाने आकार से उसने हांफते हुए पूछा।

"निश्चिंत पड़ा रह, बेगानी नहीं है।" कहती हुई दीपो फिर दीवार की ओर चली गयी। पूर्व में पल भर में लालिमा उगने वाली थी। दीने जुलाहे के एक मुर्गे ने बांग दी। उसके पीछे ही सारे मुर्गे 'कुकड़ूं-कूं' करने लगे, जैसे वे पिछड़ गये हों।

जब दीपो दूसरी गठरी ले कर आयी, तो केवल ने उसकी बांह पकड़ ली। उसे अभी तक भी विश्वास नहीं आ रहा था! उसे अपनी ओर डरी-सहमी निगाहों से ताकते देख कर दीपो ने उसका कंधा झकझोरा।

"मैं कहती हूं, तुझे हो क्या गया है? यूं ही पागलों की तरह देखे जा रहा है?"

"मुझे तो कुछ नहीं हुआ, हुआ तो तुझे लग रहा है। रात को किसका घर लूट लायी है?" केवल ने उसके सिर पर रखी गठरी की ओर ध्यान से देखा। मटमैली रोशनी में उसने गठरी को जांचा। उसमें कपड़े बंधे थे।

"ऐसा कौन-सा 'औंतरे का' गोरा बैल है कोई, जो घर लूटने देगा।" अंधेरे में उसके सफेद दांत चमके।

पौ फटते ही, रोशनी में केवल ने उसके गेहुंए चेहरे को पूरी तरह देख कर नजर नीची कर ली। दीपो पहली गठरी पर दूसरी रख कर, बड़ी तेजी से उसकी ओर बढ़ी।

"अब यूं बैठ गया जैसे कोई मर गया हो?"

"कभी कोई अच्छी बात भी किया कर। क्या सारी उम्र बुराई ही बुराई दिखानी है? तू मुझे यह बता कि यहां तुझे कपड़े न मिलते।"

"अरे मैं क्या करूं ? मेरे खूबसूरत यार !"

"अगर उन्होंने सवेरे रिपोर्ट लिखवा दी कि एक तो गोभी के फूल-सी स्त्री भगा कर ले गया है दूसरे घर भी खाली कर गया है तो?"

दीपो ने केवल के गिर्द अपनी बांहों को और भी कस लिया।

"यदि मेरी बात मान, तो गठरियां वापस रख आ।"

"क्यों?" तमक कर दीपो एकदम से अलग हो गयी, "वह इन कपड़ों का बाप लगता है? उसने नोट खर्च किये थे, जो रख आऊं? मेरे थे, सो मैं ले आयी।"

"मेरी, कंजर की भी, कुछ मान लिया कर।" मैले प्रकाश में उसका गोरा रंग असाढ़ की तासीर-सा हो गया।

"आज के बाद हर बात मानूंगी, पर यह नहीं मानूंगी। तेरा क्या भरोसा, कब सिलवा कर दे। मैं पहनूंगी क्या?"

केवल ने उसकी बात का उत्तर दिये बगैर ही पूछा, "और कुछ तो नहीं लायी?"

दीपो उसकी ओर देख कर मुस्करा पड़ी, "गहने हैं थोड़े से ।"

"कहां हैं।"

"बंतो के पास हैं।" दीपो ने हल्की-सी आवाज में कहा।

"उसे क्यों पकड़ाये।"

"हौसला रख, वह दबायेगी नहीं।"

"तुझे तो विश्वास है पर दूसरे का मन बेईमान होने में एक पल नहीं लगता।"

"अच्छा बैठा रह आराम से।" दीपो उठ कर चल दी।

केवल ने अब उससे पूछा, "किधर को?"

"मैं दिन चढ़ जाने पर आऊंगी। लोगों को पता भी तो लगे, जो बड़ी-बड़ी बातें करते थे। अब लगा लें अपना जोर, बजा लें ढोल।"

दिन चढ़ गया। चिंती अभी दूध बिलोने ही लगी थी। दीपो आज जल्दी उठ कर गोबर-कूड़े के काम में नहीं लगी थी। 'सीरी' पशुओं को चारा डाल रहा था। गंडा चाय-पानी पी कर, जंगल-पानी के लिए बाहर गया हुआ था। सेहन की अभी तक साफ-सफाई नहीं हुई थी। किसी ने झाड़ू नहीं लगायी थी। मुंह-हाथ धो कर उसने चाय पी और फिर यूं ही कुछ समय चूल्हे के आगे बैठी रही। कैलू ने सीरी से हल जुतवा कर खुद मशीन वाले कमरे से 'तंगड़' उठा कर ऊंट के ऊपर फेंका। कैलू ने दीपो से जल्दी खाना लाने को कहना चाहा, पर उसका गंभीर चेहरा देख कर ठिठक गया।

"ले, तू कहता था कि मैं साधू हो जाऊंगा, अपने लिए ठिकाना देख ले!"

"हैं !" कैलू के जैसे होश गुम हो गये।

"मैंने तो अपने लिए ठिकाना देख लिया है, तू बेशक साधू हो या न हो।"

बात खत्म कर के दीपो गली की ओर चल पड़ी। उसे इस तरह बड़ी शान से जाते देख कर कैलू के काले रंग से जैसे रतुआ की धूल-सी उड़ने लगी। उसका दिल तो उसे आवाज दे कर रोकने का भी हुआ, लेकिन वह ऐसा कर न सका, जैसे उसके शरीर में शक्ति ही न रही हो। उसकी मुहार उसके हाथ से छूट गयी और वह वहीं बैठ गया।

ज्यों ही दीपो केवल के दरवाजे के सामने आयी, उसे पंजाब कौर मिल गयी। उसे बंतो ही सचेत कर आयी थी। दीपो को बाल-बच्चे उठाये आती देख कर, पंजाब कौर का चौड़ा, गोल, झुर्रियों-भरा मुंह खुला का खुला रह गया। दीपो ने झुक कर सास के पैर छुए। बुढ़िया ने आशीष देने की बजाय, चिंता से हाथ हिलाये।

"बेटी, तुझे अपने घर से बाहर कदम नहीं रखना चाहिए था।"

"कोई बात नहीं, अम्मां जी। तुम डरो नहीं।"

"बेटी, डरूं कैसे नहीं, तू अपने घर से ऐसे बोरिया-बिस्तर उठा कर आ रही है...।"

इससे आगे बुढ़िया को कोई बात ही न सूझी।

"वाहेगुरु।" पंजाबो ने फिर मुंह खेला, "अब किधर जाऊं, हाय . . .हाय . . .हाय!" केवल के घर की ओर जा रही दीपो की ओर निहारती पंजाब कौर फूटे बर्तन की भांति बुड़-बुड़ करती रही।

"कटखनी है पूरी की पूरी . . .फिसाद की जड़" पंजाब कौर ने गुस्से से भरकर ..जोर लगाकर बंतो के घर की ओर इशारा करते हुए जोर से कहा और वैसे ही बोलती-बोलती वह बंतो पर जा गरजी।

"अरी, तू, कोई अच्छी काम भी कर लिया कर . . .कमजात।"

"क्यों, मैं कोई मर्द रखती हूं!" बंतो ने आगे से उसे आंखें दिखायीं। जब वह सास के चूल्हे पर थी तब भी वह सास का रौब नहीं मानती थी। अब तो वह थी ही अलग।

"जुबान् चलाने को तो बीस के बराबर है, शरीकों की बहू को फुसला लायी है, है कोई खौफ किसी का . . .?"

"मैं लायी हूं।" बंतो अंगारे की तरह दहक उठी, "उससे पूछ जो आयी है, और साथ ही उससे पूछ, जिसके साथ आयी है। मुझे कमजात परख रही है, अपने पुत्र को पूछ, जिसे तूने जन्म दिया है। उस पतंदर के आगे तो सभी का पेशाब निकलता है, जो कोई भी है, मेरे साथ ही सीनाजोरी करता है! . . .गरीब की जोरू सबकी भाभी!"

बोलते-बोलते बंतो की सांस फूलने लगी। उसने हांफते हुए फिर कहा, "आयी है झाग गिराती हुई, मेरे साथ माथा लगाने, उसे छेड़कर देख, ततैया के छत्ते को! फाड़ कर न रख दे सभी को, तो कहना।"

बंतो को तैश में देखकर पंजाब कौर एक ओर खिसक गयी, लेकिन उसके दिल की धड़कन सामान्य होने में नहीं आ रही थी। मन में आया कि जाकर केवल को समझाऊं। मगर फिर सोचा,उसका क्या है? कह देगा, ज्यादा तकलीफ है, तो ब्याह कर देती ! मैं क्यों कुछ कहूं? पुत्र कहेगा, मेरा बसता हुआ घर उजाड़ रही है, हाय वे रब्बा! किधर जाऊं? और फिर हांफती-खीझती पंजाब कौर ने बंतो के घर की ओर संकेत करके कहा, "इस बेवा ने घर को टुकड़े-टुकड़े कर दिया और अभी कौन-सा बस कर रही है। पता नहीं किस

मनहूस दिन इसे जन्म दिया था मां ने, बुरे कामों से चौधराइन बनना चाहती है . .कमजात तू कुछ आगे-पीछे भी तो देख। मैं तो तभी से कह रही थी, इसका सहेलीपना कोई गुल खिलायेगा। रोज दूध उठाने वालों की तरह उसके घर को भागती थी। बहू-बेटियों को लाज-शर्म होती है, पर इसने किसी की भी कोई शर्म नहीं की, किसी देवर-जेठ की शर्म न मानी। हाय! . . .हाय ! . . .अब क्या होगा . . .?"

"बनेगा तेरा सिर . . .!" जब पंजाब कौर ने पलकें खोल कर अपनी चुंधियाई-सी छोटी-छोटी आंखें ऊपर कीं, तब केवल उसके सिर पर खड़ा लाल-पीला हो रहा था, "घंटा हो गया, घर में कितूर खड़ा कर रखा है, तुझे ज्यादा दर्द है?"

"तभी तो भुनी हुई खील की तरह . . .तुम्हारी बच्चों की सी समझ . . .।"

"क्यों हमारी समझ को क्या हुआ है . . ."केवल टूट के पड़ा, तो पंजाब कौर ठिठक कर चुप हो गयी, "लगा रखी है, बेकार में बरड़-बरड़। तुम्हें कोई कंजर नहीं पूछेगा ! आकर . . . पूछगा तो मुझे, जिसके यहां आयी है . . .तुम्हारा मेरा साथ क्या साझा है . . .जो नुकसान हो जायगा!

"घंटा हो गया इसे बिच्छू की तरह उछलते . . .।" केवल ने पीछे मुड़ कर देखा, बंतो दीवार की मुंडेर पर हाथ रखे खड़ी थी। "पहले यहां मुझसे खूब लड़ कर गयी है।"

और केवल उसी तरह गुस्से में भरा वहां से कोठरे की ओर चला गया।

धूप आहिस्ता-आहिस्ता मुंडेर से उतर कर सेहन के ऐन बीच में आ गयी। कैलू का मुंह मुर्दे जैसा था। उसकी सरे-आम बेइज्जती हुई थी। इससे ज्यादा अपमान क्या होना था, कि औरत उसी गांव में दूसरे के घर बैठ जाय! गंडा और चिंती मनाने के लिए आये तो दीपो ने सीधे मुंह बात भी न की। गंडे ने केवल से कहा कि वह उससे घर चलने के लिए कहे।

"मैं नहीं कुछ कह सकता।" केवल ने साफ जवाब दे दिया।

"तेरे घर बैठी है, कह तो सकता है तू?"

"ताया मैं घर आयी को धक्का क्यों दूं? मेरा दिमाग तो नहीं फिरा?" गंडा अपना-सा मुंह ले कर रह गया। चिंती ने शर्मिंदगी-सी महसूस करते हुए बहू का कंधा हिलाया।

"चल, बेटी घर चल ! क्यों हमारा बुढ़ापा मिट्टी करने पर तुली है? अभी गिरे बेरों का कुछ नहीं बिगड़ा है।"

"बेर तो पहले ही गिर चुके थे, मैंने तो उठा कर झोली में डाले हैं।"

"अच्छा, तो हम बच्चों को ले जाते हैं।"चिंती ने बीरे की बांह पकड़ कर खींचते हुए कहा। दीपो ने बुढ़िया का हाथ लड़के की बांह से हटाते हुए, जोर से परे झटक दिया।

"आप बच्चों के क्या लगते हो? मेरे बच्चे हैं, जहां मैं रहूं वही बच्चे रहेंगे।"

गंडा और चिंती बहू के रूखे और कड़े उत्तर सुन कर लौट गये। गांव में उनका बहुत अपमान हो रहा था। लोग उन्हें जाते देखकर उंगलियां उठाते थे। गंडे ने पंचायत में अपना रोना रोया तो पंचायत बचने के पास आ गयी। बचना दम साधे पड़ा था। "मैं तो भाइयो, विवश हूं।" सारी पंचायत केवल के आंगन में इकट्ठी हो गयी। केवल से पूछा गया कि वह पड़ोस की बहू को क्यों भगा लाया है?

"आने वाली से पूछो ! चौधरियो !"

पंचायत के चौधरियों ने दीपो को सुलाह-सफाई से घर जाने के लिए प्रेरित किया। उसने इनकार कर दिया।

कैलू के भतीजों में से एक गुरदयाल था, जिसका शरीर दो मन भारी और कद छह फुट का था।

"चल चाची, घर चल।" गुरदयाल ने चाची को कंधे से हिलाते हुए विनम्रता से कहा। दीपो उसे अपना कंधा झकझोरते देख कर गुस्से में आ गयी।

"तुझे लाज तो नहीं आती, चाची कहते हुए?"

दीपो की फटकार सुन कर दयाल का मुंह पीला पड़ गया। फिर भी बोला, "चाची ! यह तू क्या कह रही है?"

" तू अपना मुंह बंद रख, दुष्ट! तूने मुझे चाची समझा है कभी ! कर जरा गुरुद्वारे की ओर हाथ, कि तेरी बदनीयत नहीं थी? कितनी बार तेरी मिन्नतें कीं कि जा चला जा, अपनी इज्जत ले कर।"

पंचायत के भले आदमियों ने शर्म से सिर झुका लिये। गुरदयाल के पैरों तले से धरती निकल गयी। उसके सिर पर जैसे सौ घड़े पानी पड़ गया हो। फिर भी वह बोला,

"अब तू तो पूरी भली मानस है, जिसने सारे गांव में हलचल मचा दी।"

"मैं तो सारे जहान की लुच्ची हूं ही। तू यहां धक्के खाने आया है?" सारी पंचायत ढीली हो गयी। उनमें भी बहुत से काने बैठे थे। नंबरदार और गांव के अन्य घटिया और बदमाश लोग सारे 'पंचायत वाले' बन बैठे थे। हार कर सरपंच ने केवल से रौबदार आवाज में कहा, "केवल सिंह ! इस तरह तो गांव कंजरखाना बन जायगा!"

"चाचा, पहले कौन-सा शरीफखाना है?"

"पर पहले ऐसा लुच्चापन तो कभी नहीं हुआ, जैसा तुमने किया है!" सरपंच ने आंखें चढ़ाकर और सिर हिला कर केवल से पूछा।

"ठीक है, ऐसा चांद तो चढ़ा नहीं, पर अंदर ही अंदर जो खराबी हो रही है, तुम्हें पता ही है।" उसने सभी पर नजर घुमायी। उन सभी की सफेद पगड़ियां उसे दागी लगती थीं, "हम कौन-सा भूले हैं बूढ़ी वेश्या अम्मा बन जाती है। इसी गांव में रहते हैं हम भी, क्या यहां बैठे सभी शरीफ हैं?"

"अरे ओ छोकरे, जरा मुंह संभाल के बात करते हैं।" नंबरदार को जैसे मिर्चें लग गयीं। नंबरदार का स्त्रियों के मामले में रिकार्ड था। "चलो भई, ये तो पुलिस से ही ठीक होंगे।"

"जाओ, जितना जोर लगाना हो, लगा लो। हम तुमको जानते हैं, बड़ी शान वालों को।"

"अब तो तू ऐसा जानेगा कि याद करेगा। अंदर ही टट्टी-पेशाब न करवाया तो मजाल है दहलीज से बाहर भी हो जाओ . . .देखता हूं किस मां ने तुम्हें जन्म दिया है?"

'भले लोग' बड़बड़ करते बाहर निकल गये।

11

शिखर दोपहरी में छोटी गली की ओर से नौहणे ने दीवार के ऊपर सिर उठाया। केवल और हीरा सिंह उसे चारपाई पर बैठे दिखायी दिये। दीपो पीढ़ी पर घूंघट निकाले बैठी थी। नौहणा दबे पांव दीवार से नीचे उतर गया और बरामदे में कोठरे के दरवाजे के साथ लग कर उनकी बातें सुनने लगा। हीरा सिंह दीपो को समझा-बुझा रहा था।

"तू मेरी बेटियों जैसी है; कबीलदारों की बहू-बेटियों को ऐसे काम शोभा नहीं देते!"

नौहणे के दिल में गुस्से की लहर-सी उठी कि बूढ़े की दाढ़ी नोच ले। मैं इसकी छोटी बेटी को . . .आया बड़ी पगड़ी वाला . . . अपनी बहू को क्यों नहीं समझाता . . .जो बदमाशों के साथ घूमती-फिरती है।

नौहणे के कानों से, दीपो की खनकती हुई आवाज टकरायी। "अब तो बाबा जी, जो होना था, हो गया। उसे तो मोड़ा नहीं जा सकता।"

"लो भाई, लोग तो कत्ल कर देते हैं, तो भी दुनिया छिमा कर देती है। तुमने तो ऐसा किया ही क्या है!"

चारपाई पर बैठे केवल ने बूढ़े की ओर गहरी दृष्टि घुमायी। उसने सिर हिला क़र अंदर ही अंदर फैसला किया। फिर उसने खंगूरा मार कर हीरा सिंह को कहा।

"बात सुन बाबा ! हमें तुम्हारी हमदर्दी की जरूरत नहीं। अपने घर बैठो आराम से। क्यों गलियों में जूते चटखाते फिरते हो?"

बूढ़े ने अपनी पलकों के आगे बढ़े हुए बालों को, जो आंखों पर आ गये थे, एक ओर हटाते हुए मीठे स्वर में कहा, "अरे भई, तुम हमारे बेटे-बेटियां हो, हमें दुख नहीं?"

"दुख तो पहले भी होना चाहिए था फिर?" केवल आखिर मुंहफट हो ही गया, "पहले भूल गये थे क्या? क्यों अभी खुजली होने लगी है।"

"हम तो भाई, तुम्हें रास्ते पर लाने वाले हैं, आगे तुम्हारी इच्छा। वैसे तुम यह अच्छा नहीं कर रहे।" हीरा सिंह लाठी हाथ में लिये खांसता हुआ बाहर को चल दिया।

"तुम्हारे रास्ते से तो हम ऐसे ही भले हैं।" केवल टिप-टिप करते जा रहे बूढ़े को देख कर और भी गर्म हो गया, "आप तो न जाने कितनी दीवारें-छतें फलांगते रहे, और अब हर कोई लक्ष्मण बना फिरता है—जैसे लुच्चे-लफंगे . . .।"

नौहणा भी बूढ़े की ओर कनखियों से ताकता हुआ, आकर चारपाई पर बैठ गया और कहने लगा, "ले भई फक्कर-! अब तो एक बार पटाखे पड़ेंगे। गांव वालों ने एका कर लिया है, भई, बाहर नहीं निकलने देना।"

केवल को हंसते देख कर वह फिर बोला,

"भई, वे तो राइफलें कंधे पर डाले फिरते हैं, लाठियां इकट्ठी किये बैठे हैं, भई छोड़ेंगे नहीं।"

"अच्छा !" केवल का दिमाग चक्कर खाने लगा, "कौन-कौन हैं?"

"कोई गिनती है। सारे गांव के ऐरे-गैरे हुल्लड़ मचा रहे हैं, जैलदार, नंबरदार, मीके जैसे बाकीमानों के अफीम खाने वाले भी। और तो और नरैणे जैसे भी हाथों को तेल लगाये फिर रहे हैं।"

"माना कि बाकी लोगों से हमारी अनबन है लेकिन बाकीमानों के लड़कों और नरैणे जैसों की हम कौन-सी बेटी अगवा कर लाये हैं?"

"जिनकी बात है, उन्होंने तो उफ तक नहीं की।" नौहणे का इशारा कैलू की ओर था, "जैलदार तो अपनी पुरानी दुश्मनी निकालना चाहता है। बाकी लोग तो जैसे भेड़ों का झुंड है, जिधर एक गया, उसके पीछे ही सारे चल देते हैं।"

केवल ने दो बार सिर हिलाया। फिर पीछे मुड़ कर दीवार की तरफ देखा। कुछेक पल खड़ा रहा और फिर कुछ सोचता हुआ खाट पर बैठ गया।

"ऐसे सोचने से तो कुछ बनेगा नहीं।" नौहणे ने उसका कंधा हिला कर अपनी ओर किया, "यूं गर्दन नीचे न कर, टकुवे बाहर निकाल, ला उन्हें तेज करें।"

"अरे पतंदर ! इतनों के आगे दो की क्या चलेगी? बाहर निकलते ही, मलीदा बना देंगे।" उसकी ऐसी कमजोर बातें सुनकर, दीपो का जी डूबने लगा। उसने किसी तरफ से बाहर निकलने के लिए कहा, लेकिन नौहणे ने सिर हिलाते हुए कहा—

"नहीं, उन्होंने सभी नाके बंद किये हुए हैं।"

बाहर खड़ाक हुआ, जैसे किसी ने दीवार पर से छलांग मारी हो। वे चौकस हो गये। केवल दौड़ कर कृपाण उठा लाया। नौहणे ने गंडासा संभाल लिया और दोनों पूरी तैयारी से घात लगा कर बैठ गये। पदचाप कोठों की ओर बढ़ रही थी। जैसे ही पदचाप नजदीक सुनाई दी, नौहणा उठकर दरवाजे के साथ जा लगा, लेकिन सामने बंतो का उतरा हुआ चेहरा दिखायी दिया।

दीपो ने उससे पूछा, "तूने यूं ही अपना खून क्यों खुश्क किया हुआ है?"

"वाहेगुरु बोल।" बंतो भौचक्की सी रह गयी। उसने चारपाई पर बैठते ही अपना सिर पकड़ लिया। "केवल, मेरी मान और दीपो को घर भेज दे।"

"क्यों?"

"क्यों क्या, वह तो सारे मुझे या लीखे की बहू को उठाने को फिरते हैं।"

"तुझसे किसने कहा?"

"ले, वे तो सभी के सामने कह रहे हैं। मैं तो डर से कूड़े की टोकरी फेंकने तक नहीं गयी। ऐसे लोगों का क्या भरोसा?"

"ऐसे ही न डरती रहा कर।" नौहणे ने बात को मजाक में बदल दिया।

"न भाई वह करेंगें जरूर कुछ न कुछ।"

गांव वालों का निर्णय सुन कर केवल घबरा गया। सयानों ने समझाया, "अगर बात कचहरी तक चली गयी, बहू-बेटी का मामला है, खींचातानी और बेइज्जती बहुत होगी।" दूसरे, उन्हें किसी कानूनी आदमी ने राह बतायी "कानून के अनुसार तो स्त्री उसी की है, जिसे वह 'हां' कर दे।" इन्हीं विचारों में किसी को भी कोई राह नहीं मिली थी। सारे ही गंभीर थे।

परंतु ढलते पहर बंतो, बचने और पंजाब कौर की आंखों के आगे अंधकार छा गया। बंतो की पांच वर्ष की बड़ी बेटी घर में दिखायी नहीं दे रही थी। उन्होंने घर का कोना-कोना छान मारा। लड़की घर में होती, तो मिलती। बाहर से जैलदार का संदेश आ गया।

"यदि लड़की की जान चाहते हो, तो गंडे की बहू वापस लौटा दो।"

सुनते ही बंतो हाय करके पड़ गयी। सारे एक-दूसरे की ओर 'मजौरों' की तरह ताक रहे थे, पर कुछ भी सुझाई नहीं दे रहा था। बंतो चीख मार कर हाय ! हाय ! करने लगी।

"जैसे भी हो, मेरी बेटी वापस ला दो मुझे। हाय! उस गरीब बच्ची से क्या लेना है तुम्हें कमबख्तो। तुम्हें कीड़े पड़ें। तुम्हारा कुछ न रहे। पता नहीं लड़की को कहां फेंका है?"

बचना और पंजाब कौर जैलदार के कदमों पर जा गिरे। उसके आगे खूब गिड़गिड़ाये, "हम तो उस से पहले ही बहुत दुखी हैं। हमारी वह मानता ही नहीं ! पर अजैब ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है?"

"उसका न घर, न घाट। उसका हम क्या बिगाड़ लेंगे। अभी तो तेरी बहुओं का हाल देखना।" जैलदार अपनी दाढ़ी पर हाथ फेरता मुंह लाल करके बोला।

फिर भी बचना और पंजाब कौर हाथ-पांव जोड़ते रहे तो जैलदार ने उसे कंधे से पकड़ कर, घर की ओर भेजा, "जा बचने, घर जा ! गीदड़ की भांति जब तुम्हारे चूतड़ों पर सेंक लगेगा तभी तालाब को भागोगे।"

बचना उसी तरह गुस्से में भरा आकर केवल को गालियां देने लगा,"कमबखत क्यों मेरी दाढ़ी के बाल नोचवाने लगा है। मुझसे तो पहले ही तेरी नेकियों का भार नहीं उठाया जाता था !"

"तुझे कौन-सा सांप डस गया है?" केवल अपने बाप पर बरसा, "न तीन में, न तेरह में। सुबह से घर में ऊधम मचा रखा है। जा, जाकर आराम से खाट पर लेट।" पर बचना गया नहीं। उसी तरह 'रीं-रीं' करता रहा। यह नयी, अद्भुत बात सुन कर, उन सभी के चेहरे उतर गये। चारपाई पर बैटे केवल की गर्दन अपने-आप ही नीची हो गयी और वह एक तिनके से, धरती पर लकीरें खींचने लगा, "अगर मैं इसे रखता हूं तो साला स्यापा खड़ा होता है, नहीं रखता तो बात बिगड़ती है।" सूबेदार उन्हें खामोश बैठे देखकर आकर उनके साथ बैठ गया।

"देख भई, तू अब बच्चा नहीं। मैं यह नहीं कहता कि तू उनकी औरत लौटा दे। पर अब वे अपनी जिद पर अड़े हुए हैं, तेरी भाभियों में से जरूर किसी को उठायेंगे . . . अब सोच ले, अगर तो आदमी मरवाने हैं तो विचार कर ले, अगर नहीं मरवाने, तो . . .।"

केवल ने सूबेदार की किसी बात का जवाब न दिया। सारे ही चुपचाप बैठे थे। केवल ने सोचने के लाख यत्न किये परंतु उसे कुछ भी न सूझा। उसने दीपो के उड़े हुए चेहरे की ओर देखा। सूबेदार को उसने बाहर भेज दिया और खुद बैठा दीपो की ओर देखता रहा, फिर आहिस्ता से बोला—

"तो अब क्या करना है . . .?"

"करना क्या है?" दीपो ने नजर उठा कर केवल का चेहरा देखा। उसके चेहरे पर

सुबह वाली लालिमा नहीं थी, "मैं तो एक बार उस घर से अपने हाथों अपना आबो-दाना खत्म कर आयी हूं, अब वहां जाने की तो बात ही छोड़ !"

"तूने बात तो सुन ही ली है कि वे गिद्धों की तरह घेरा डाले बैठे हैं, मैं कहता हूं कि तू . . .।"

"बस, यही थी तेरी . . ."उसके बोल गले में यूं घुट कर रह गये जैसे किसी दानव के पंजे ने उसकी रगें पकड़ ली हों। उसकी आंखों से खारे आंसू बहने लगे।

"मुझे तो तुझ पर विश्वास था," उसकी सिसकी निकल गयी, "मुझे क्या मालूम था कि तू यूं धक्का देगा। यदि यह पता होता तो मैं घर के बाहर पैर ही क्यों रखती?"

"अब तुझे मैं कौन-सा धक्का दे दूंगा।" केवल की आवाज भर्रा गयी, "तू देख तो सही, सालों ने कैसे कौवों की तरह घेरा डाल रखा है।" परंतु दीपो उसकी सुने बगैर ही रोये जा रही थी और कुछ न कुछ बोले भी जा रही थी।

"बस, मुझे तो जहर की पुड़िया ला दे। मैं जीते जी अब उस घर में जाने से रही।"

बाहर मामूली-सी आहट हुई, पर वे अपनी बातों में व्यस्त थे।

"तू देख ही रही है, हम किसी ओर भी नहीं निकल सकते। सयाने कहते हैं कि यदि सीधे न मार सके तो हेर फेर से मारें। अब तू उनकी आंखों में धूल झोंकने के लिए घर वापस चली जा, आधी रात को मैं आऊंगा, तू आहट रखना, हम बड़ूंदी ही छोड़ देंगे।"

"सच !"

"तेरी कसम।" केवल ने उसे खींच कर अपने साथ कस लिया।

"केवल !" उसकी छाती से लगी दीपो ने, एक सुखद अनुभव किया और भावभीनी, प्यार-भीगी आवाज में कहा, "तेरे लिए तो मैं अपनी जान न्यौछावर करने को तैयार हूं मेरे महबूब। सभी दुख-तकलीफें तेरे साथ मर्द बन कर काटूंगी। तेरे बिना मुझे अंधेरा ही अंधेरा दिखायी देता है।"

"मुझे कौन-सी रोशनी दिखायी देती है। मुझे भी सारा संसार घुप अंधेरा दिखायी देता है।" उसकी आंखों के कोने सहसा ही गीले हो गये।

बात तय होने के बाद, सारी पंचायत केवल के सेहन में चारपाइयों पर आ बैठी। कैलू बच्चों की तरह रो रहा था और गंडा उसे ऐसे डांट रहा था, जेसे उसके होश ठिकाने न रहे हों। फिर सूबेदार ने कैलू से पूछा।

"भाई तेरी कोई चीज, जो गुम गयी हो?"

"गहने हैं, थोड़े से।" रोने से उसका गला रुंध गया था।

"हां ! तो लिखवा, कौन-कौन-से ?" सूबेदार ने कागज-पैंसिल ठीक किये।

कैलू ने पहले कपड़े से आंखें साफ कीं, फिर गला साफ किया और फिर सूबेदार की ओर देख कर, जो उसकी ओर ही देख रहा था, कहा—

"एक गले का तावीज है।"

"और?" सूबेदार ने लिख कर पूछा।

"बालियां और मुरकियां।"

"और?"

"कैंठा और सगी फूल।"

"और कुछ?"

"बस . . .!" कैलू ने यह कह कर नजर नीची कर ली।

सूबेदार ने केवल की ओर मुंह किया। उसकी छोटी-सी चौरस पगड़ी फड़क रही थी। सूबेदार की भूरी सुंदर-सी मूंछें हिलीं।

"हां भई, केवल सिंह ! तेरे पास ये चीजें आयी हैं?"

केवल के जवाब देने से पहले बंतो चुपचाप आहिस्ता से उठी। उसने झोली में हाथ डाल कर सब कुछ सूबेदार के सामने ढेर कर दिया। सारे ही, "शाबाश भई, शाबाश" कहने लगे। उनमें कैलू द्वारा बताये गये जेवरों से भी ज्यादा जेवर थे। इससे बंतो की खूब प्रशंसा हुई। कपड़ों की गांटें कैलू के 'सीरी' को उठवा दी गयी। बंतो की लड़की नंबरदारों के घर में थी। उसे नंबरदारनी ले आयी। अब मुसीबत यह बनी कि दीपो को घर कौन छोड़ कर आये ! जब किसी और ने यह जिम्मेदारी न ली, तो बंतो ने यह काम भी खुद ही करना तय कर लिया।

"देख लो।" बहुतों ने शंका प्रकट की।

"कोई नहीं जी, मेरे साथ उनकी क्या दुश्मनी है?" बंतो के शब्दों में हौसला था।

"कोई नहीं छोड़ आने दो। वही लायी थी, अगर छोड़ जायगी, तो आफत तो नहीं आ जायगी।" नंबरदार ने बात खत्म करके पीछे मुड़ कर देखा और बोला, "अच्छा यार !" और वह हल्का सा मुस्करा दिया।

सभी को डर था, उनका शरीका-कबीला बंतो को डांट-डपट जरूर करेगा। सूर्यास्त से पहले बंतो दीपो को लेकर उसके घर को चल दी। छोटी-छोटी बातें करती, वह आगे चलती गयी। मारे डर के बंतो का दिल जोर-जोर से धड़क रहा था। घर में प्रवेश करते ही चिंती ने, विनम्रता से बहुत गरीबनी-सी बन कर कहा—

"शाबाश बेटी ! तूने आज हमारी लाज रख ली। तेरा किया तो बेटी हम उमर भर नहीं भुला सकते।"

"बेबे जी, वाहेगुरु करने वाला है, बंदा कौन है बिचारा, यदि वह न हो तो आदमी तो आदमी का जीना दूभर कर दे।"

चिंती ने बहुत जोर दिया कि बंतो थोड़ी देर और बैटे, लेकिन वह बैठी नहीं, उल्टे पांव लौट गयी। चलते समय उसने कैलू को इशारे से बुलाया। वह उसके पीछे-पीछे दरवाजे तक आ गया। बंतो ने दरवाजे में खड़े होकर गली की ओर देखा। उसने अपनी चुनरी दांतों में ली हुई थी। वह कहने लगी, "ले करनैल ! हो गया, अब तू खुद ध्यान रखना।" फिर आगे-पीछे देखकर, कैलू के निकट हो कर, दबे-घुटे स्वर में उसने कहा, "आज रात को ये खिसकेंगे। मैंने अपने कानों से सुना है। केवल आयेगा, आधी रात को। फिर ये किसी ओर रवाना होंगे। मुझसे तेरा उजड़ता हुआ घर नहीं देखा जाता। तू अब रात को पहरा रखना।" फिर उसने कैलू के आगे हाथ जोड़ते हुए टेढ़ा-सा मुंह बना कर कहा, "देखना,

मेरे भाई, किसी को कानों-कान पता न लगे कि तुझे बंतो बता कर गयी है।"

उधर दीपो के चले जाने के बाद, केवल सहमा-सा, घबराया-सा इधर-उधर देख रहा था। सहसा उसने पीछे मुड़कर कोटरे में पड़े सामान की ओर देखा। मन में न जाने क्या आया कि वह तेजी से भागता हुआ बाहर आ गया। उसे भौंचक्का देखकर नौहणे ने पूछा—

"क्या बात है . . .?"

"कुछ नहीं।" केवल ने सिर हिलाया। रसोई में से गिलास उठा कर घड़े में से पानी पिया। मन शांत हो गया। फिर वह चारे वाले कोई में चला गया। काफी ढूंढने के बाद देसी शराब की बोतल पर से भूसे के तिनके झाड़ता हुआ, वह बाहर निकला। नौहणे ने उसे पीने से मना किया। पर जब तक उसका सिर घूमने लगा, तब तक वह अंदर शराब उंड़ेलता गया।

"नौहणे यार।" वह झूमता हुआ टिकी नजर से उसे देख रहा था। उसने अपना फैला हुआ पंजा नौहणे के कंधे पर मारते हुए और अंगुलियां उसके मांस में गड़ाते हुए, उसे झकझोरा।

"कोई बात भी तो बता, कमबखत।" नौहणा अभी तक ठीक था।

"बात को . . .ई . . .न . . .हीं . . .मे . . .रे . . .य . . .ा . . .ा . . .र।" उसने हवा में हाथ मारते हुए घिघियायी सी आवाज में रुक-रुक कर कहा, "कोई . . .ई. . .न हीं . . .हमें ऐसे गंदे गांव में न . . .हीं . . .रहना।"

"बिल्कुल नहीं रहना।" नौहणे ने बोतल उठा कर एक ओर रख दी।

केवल ज्यादा पी कर, उसी चारपाई पर गिर गया। नौहणे के पांव अभी स्थिर थे। उसने केवल की चारपाई से नीचे लटकी हुई टांगों को पकड़ कर ऊपर कर दिया। नौहणा सामान संभाल कर अंदर वाली कोठरी को ताला लगा कर घर की ओर चल दिया। रात के तीसरे पहर शराब ने केवल का गला पकड़ना शुरू कर दिया। पेट खाली था। वह चारपाई का सहारा लेकर बैठ गया। उसका सिर अभी भी चक्कर खा रहा था। गिरते-पड़ते, उसने नलका चला कर पानी पिया। भीतरी मचलाहट कुछ ठंडी हुई। फिर कितनी ही देर तक वह चारपाई पर पड़ा विचारों में खोया रहा। कुछ स्मरण हो आने पर, उसने अपने नशे से टूटे शरीर में कुछ बल भरा, हिम्मत करके चारपाई से उठ कर एक कोने में पड़े गंडासे की ओर बिजली की-सी तेजी से बढ़ा। खाली पेट होने के कारण दीवार के साथ लुढ़क गया।

कैलू के बंद दरवाजे की मोटी-मोटी झिर्रियों से अंदर झांका। दो-तीन आदमी आंगन में चारपाइयों पर पड़े थे। किवाड़ अंदर से बंद था। दस-फुट ऊंची दीवार के साथ गंडासा लगा कर चढ़ना चाहा। बेंत की लचकदार छड़ी पर से उसका पांव फिसल गया। छुरी की नोक एड़ी में घुस गयी। पर वह लगे हाथों, दीवार पर चढ़ने का प्रयास करता रहा। आखिर थक-हार कर नीचे ही बैठ गया। सहज-भाव से उसने आकाश की ओर निगाह फेरी। नीली चादर पर सफेद तारे आखें झपक रहे थे। जब उसने सप्तऋषि की ओर नजर घुमायी, तो उसके मुंह से सहसा ही 'हैं' की आवाज निकल गयी। दूर कहीं से मुर्गे की बांग सुनायी दी। ऊब कर उसने एक गाली निकाली और पहले किवाड़ों की ओर, फिर ऊंची दीवार की

ओर बुझी-बुझी आंखों से देखा। गंडासे को हाथ डाल कर वह उठ खड़ा हुआ। मन में भैंसे की भांति गुस्सा बागी हो गया। धक्के मार-मार कर किवाड़ तोड़ देने को जी कर रहा था। फिर घर की ओर घृणा से सिर हिलाकर देखता हुआ वह गली में से होकर आगे बढ़ने लगा दस-पंद्रह कदम आगे जाकर उसने गाली निकाली।

"बुलाना नहीं, इसकी . . .बहन की . . .आखिर औरत ही रही है न !"

और उधर सूर्यास्त होते ही दीपो केवल की प्रतीक्षा करने लगी। कैलू अपनी चारपाई पर पड़ा करवटें ले रहा था। दीपो चाहती थी कि वह जल्दी सो जाय। डर बेशक उसे नहीं था। पर 'हाय, हाय' करके वह शोर तो मचा सकता था। दीपो को यह भी पता था कि कैलू चारपाई पर पड़ा 'सोया होने का' बहाना कर रहा है। कभी-कभार आहिस्ता से करवट बदलता और दीपो की चारपाई की ओर ताकता। दीपो एक-दो बार पेशाब करने या पानी पीने के बहाने उठती। फिर कितनी ही देर तक बिस्तर पर बैठी रहती। वह गुस्से में जल कर कोयला हुई पड़ी थी कि आधी से अधिक रात बीत गयी, परंतु वह नहीं आया। एक बार हौसला कर के वह उठी कि वह स्वयं ही उसके पास चली जाय। दबे पांव कैलू की चारपाई के पास से गुजरी, तो परे बैठा सांवला बछड़ा, डर कर उठ खड़ा हुआ। कैलू झट से उठ बैठा।

"क्या बात है . . .?"

"कुछ नहीं, मैंने सोचा, पता नहीं क्या है, बछड़ा फनफना रहा था।" मन ही मन कुढ़ती वह फिर आ कर चारपाई पर लेट गयी। कितनी ही देर तक सिर पकड़ कर पड़ी रही। फिर बीरा 'चूं-चूं' करने लगा। उसे मच्छर काट रहे थे। दीपो ने लड़के को गोदी में ले कर, उसके मुंह में दूध दे दिया। उसके मन में आया, "एक बार, केवल आ जाय, फिर वह नहीं रुकती . . .पर वह आया क्यों नहीं ! उसके अंदर अनेक प्रकार के शक-संदेह उठ खड़े हुए, "वह तो कहता था, मैं जरूर आऊंगा।" फिर उसे केवल का दगा साफ दिखाई देने लगा। जोर का रोना आया। वह अपनी बदकिस्मती को कोसने लगी। "हाय री किस्मत ! बदनामी करवा के भी किसी किनारे न लग सकी !" केवल का न आना, उसका हौसला पस्त कर रहा था। उसके किये सारे फैसले धरे-धराये रह जाने का डर था। अब उसे यही चिंता खाये जा रही थी कि दो आने की औरत भी उठ कर ताना देने लगेगी। वह सोच रही थी, अब लोगों में सिर ऊंचा कर के कैसे चलेगी? आखिर में प्रतीक्षा करते-करते उसकी आंख लग गयी। उसे पता ही नहीं था कि वह कहां पड़ी है।

12

इसके पांच-छह रोज बाद संधूरा अपनी सूखी-पतली टांगें घसीटता हुआ केवल के घर आया। कुछ दिनों से वह आंडलू गया हुआ था। जब गांव में नशे-पानी का खर्च न चलता, तो साथ वाले गांवों में छोटी-मोटी मेहनत-मजदूरी करने चला जाता। जब उसने इस घटना के बारे में सुना, तो उसका अफीम के नशे से बुझा-बुझा मुंह खुले का खुला रह गया। खूब अफीम खाने के बाद, उसकी रगें भारी हो जातीं। बोल नाक में से घसर-घसर करके बाहर आता। केवल तपती दोपहरी में शीशम के वृक्ष के नीचे खाट डाले पड़ा था। उस दिन के बाद वह घर से बाहर नहीं निकला था। उसे दीपो पर रह-रह कर गुस्सा आता था। उसने वायदा करके भी पूरा नहीं किया था। जंगल-पानी वह मुंह-अंधेरे ही हो आता था। बंतो खाना दे जाती, तो वह खा लेता था, नहीं तो लंबी तान कर पड़ा रहता।

"ओं केंवला . . .।" अमली ने नाक में से गुनगुनी आवाज निकाली। केवल ने मुंह पर से कपड़ा उतार कर देखा तो उठ कर बैठ गया और बोला, "अरे आ नाभे वाले।" अमली उसकी बात सुन कर मुस्करा पड़ा, "पतंदरा, पता नहीं कहां छुप गया, कहीं मुंह ही नहीं दिखाया।" जब अमली अफीम के पूरे नशे में होता, तो कहता, "हमारे जैसा तो नाभे वाला भी नहीं।"

"भई, हम तो तेरे पड़ोस में ही रहते हैं, और क्या अमली ने विलायत जाना है !"

"विलायत चला जा, आजकल तो ऐरा-गैरा भी विलायत भाग रहा है।"

"हम, उन ऐरे-गैरों में नहीं आते न।"

"तू मन बना, विलायत तो साली तेरे आगे-पीछे भागी फिरेगी।" साथ ही साथ केवल की सुंदर आंखें हंसने लगीं। अमली ने अंदर धंसी हुई छोटी-छोटी भूरी आंखों से केवल के चेहरे की ओर देखा।

"यह जो बात-सी सुनते हैं, क्या हो गया था?"

"कौन-सी बात?"

"यही भई कि दीपो तेरे घर आ गयी थी।"

"ले यह भी कोई बात है, वह तो रोज आती है।"

"न . . .ा . . .ा . . . ।" अमली ने लंबी-लटकती आवाज में गुन-गुन किया। "वैसे ही भई, सारी सेना यहां हांक आयी थी।" केवल ऊंची आवाज में हंस पड़ा।

"मैंने सुना है कि शोर-शराबा हुआ। कहते हैं, लड़ाई होने लगी थी? और तू कह रहा है कि यहां हुआ ही कुछ नहीं !"

"मैंने कब कहा कि हुआ ही कुछ नहीं।" केवल की बिलौर जैसी आंखों में खुजली होने लगी, "चल छोड़ तू इस बात को, कोई और बात सुना।"

"और इससे बढ़कर क्या बात होगी।" अमली की छोटी भूरी आंखों में प्रकाश लरजा, "पर यार, उनके क्यों आग लग रही थी?"

"लग रही थी . . .तभी तो उन्होंने बेटी दी।" केवल मुंह एक ओर कर के खांसा, जैसे गले में कुछ कड़वा-कड़वा अटक गया हो। थोड़ी देर के लिए दोनों चुप बैठे रहे। केवल ने बात टालने के लिए अमली को छेड़ा।

"सुना फिर आंडलू कोई हीर स्लेटी नहीं मिली?"केवल अपने चेहरे पर जबरदस्ती मुस्कान ले आया।

"हीर न, कोई हूर-परी, मेरे गिर्द तो साली मक्खियां भी नहीं भिनभिनातीं।" केवल हंसी से लोट-पोट हो रहा था। अमली ने अगली बात भी कर दी। "हीरें तो भाई, तेरे पीछे ही पागल हुई फिरती है। फक्करों पर तो कोई थूकता भी नहीं, बाई भूका कैसे जाता है . . .!"

"फिर तू किसी नांगे साधू से गुरमंतर सीख ले न।"

"बहन के यार हैं पक्के, नांगे साधू। उनकी तो बात ही दूर है। यहां तो हमारा यार नांगे साधुओं से बढ़कर है। वही नहीं कोई राह बताता !"

"यूं ही तुझे भ्रम है, अमली सिंहां, एक के साथ ही लगायी थी, उसने भी वहीं धकेल दिया, जहां से निकले थे।"

"उसे दोष न दे, यह तो मेरे सालों की बेटी निकल गयी।"

"हैं !" केवल हल्का-सा मुस्करा दिया, "यहां आ यहां . . .यूं बात बनती है न !" उसने अमली की नकल उतारी।

कितनी ही देर तक वह, इसी तरह संधूरे के साथ हंसता रहा। तभी कैलू की नौहणे की बतायी बात स्मरण हो आयी। उसने आंखें घुमा कर, अमली के खमीर-उठे चेहरे पर टिका दीं।

"यार अमलिया, एक बात बता।"

अमली ने केवल की ओर देखा और फिर आहिस्ता से कहा, "पूछ!"

"परसों ध्याने की, रात को भला कपास किसने चुनी है?"

अमली का सिर अपने-आप ही नीचे झुक गया; सिर के ऊपर बंधा हुआ, दो तीन हाथ लंबा परना मैल से भरा था। सिर के बीच में से जुड़ी हुई जटूरियों में से दुर्गंध आ रही थी।

"तुझे नहीं मालूम।" अमली घुटनों के गिर्द अपनी बांहें लपेटे झूल रहा था।

"फिर कुछ बताया नहीं।" केवल ने सिर हिला कर पूछा।

"तुझे पता तो है!" अमली नजर नीची किये बोला, "जब नशे में कमी पड़ती है, तो किसी ध्यानी-ज्ञानी की पहचान ही नहीं रहती।"

"पहचान करनी तो बेगाने पुत्र अब सिखा देंगे। पता है न कि तंग आया जाट, पीटने से कभी पीछे नहीं हटता। गुस्सा और किसी का, हड्डियां तेरी गंगा जायेंगी।"

"वह तो जानी ही हैं। यहां कौन-सी बीर सिंह की भांति बापू वाली पचास की ढेरी है भई, जिसे समेट लें . . .!"

संधूरे का कड़ा-सा जवाब सुन कर केवल बोल ही न सका। अमली बगैर कुछ कहे,

उठ कर चला गया। केवल उसकी ओर यूं देख रहा था, जैसे उसके मन पर कोई बोझ बैठा हो, जिसे वह फेंक नहीं सकता था, गिरा नहीं सकता था।

दीपो भी उस दिन से बाहर नहीं निकली थी। गोबर-कूड़े के लिए चमारन को कह देती। लोगों का डर बेशक वे दोनों ही नहीं मानते थे, लेकिन सीमित माहौल में जन्मे और पले होने के कारण, वे अपनी अंतरात्मा से ही डर रहे थे। इस अनहोनी से दोनों परिवारों के अधेड़ उम्र के सदस्यों पर बड़ा बुरा असर पड़ा था। बचना अभी, टूटा हुआ भी, सांसें गिन रहा था। पंजाब कौर वैसे तो मजबूत थी लेकिन जब लोग मिर्च-मसाला लगा कर बातें करते, तो वह भी सिर पकड़ कर बैठ जाती। और उधर गंडा बिलकुल ही टूटकर, कीड़ों-पड़े कुत्ते की भांति अंदर पड़ गया। उसे लगता, जैसे सारा संसार ही उसका दुश्मन हो गया हो। लोग तो बेशक पीठ के पीछे ही बात करते थे, लेकिन उसकी इज्जत नहीं रही थी। भरे-बाजार उसकी नाक कट गयी थी। उसकी थकी-टूटी हड्डियां इस सदमे को सहन न कर सकीं। उसे हल्का-हल्का ज्वर रहने लगा। चिंती फिर भी 'कोई बात नहीं' कहती थी। वह उनकी अल्प बुद्धि को क्षमा कर देती, "चलो नासमझ थे, अगर जरा भर भी बुद्धि होती, तो अपनी बदनामी क्यों करवाते!"

और बंतो का तो जैसे बिल्ली की भांति जी भर गया। उस दिन भाग-दौड़ कर, वह दीपो के कई नये सूटों पर हाथ साफ कर गयी थी। तीन-चार माह बाद, जब उसके ससुर के भाई के बेटे का विवाह हुआ, बंतो रोज नये-नये वस्त्र बदल-बदल कर निकली। उसके पैरों में सिलमे-सितारों वाली जूती चमक रही थी। स्त्रियों की चुगल-आंखों ने बात निकाल ली और कानों-कान सबके पास पहुंचा दी "देखो, इस लच्छो बंदरिया को क्या चाव चढ़ा है? अगले की तो इज्जत-आबरू मिट्टी में मिल गयी . . .इसे नये दिन, नये-नवेले कपड़े बदलने को मिल गये। देखो तो कैसे पटरानियों की तरह बनी-संवरी फिरती है।"

बंतो ने उनकी बात आयी-गयी कर दी।

कितने ही दिनों तक दीपो और केवल मिल न सके। एक-दो बार राह चलते मुलाकात भी हुई, परंतु दोनों के दिलों में गुस्सा भरा था। एक दिन दीपो को बाहर जाते हुए केवल मिला, लेकिन वह मुंह फेर कर निंकल गया। दस-पंद्रह कदम आगे जा कर उसने पीछे मुड़कर देखा, दीपो उसकी ओर चोर आंखों से देख रही थी। केवल ने एकदम गर्दन घुमायी और आगे चल दिया।

उसके बाद कई दिनों तक उनकी मुलाकात न हुई।

एक दिन दोपहर ढले, केवल खेत से आ रहा था। गेहूं की बुआई के लिए खेत तैयार किये जा रहे थे। केवल को भी कपास के बाद खाली हुए खेत में गेहूं बोना था। उसने पानी छोड़ा हुआ था। केवल घर से चाय लेने जा रहा था। दीपो दोपहर की रोटी दे कर चली थी। केवल को देख कर वह रुक गयी। उसने इधर-उधर देखा। आस-पास कोई नहीं था। केवल ने पीली पापलीन का कुर्ता पहन रखा था और उसी रंग की चादर बांध रखी थी। सिर पर चारखाने का साफा था। दीपो चलते-चलते खांसी। उसने अपना ध्यान आगे जाने वाले को दिया। केवल बिना उसकी ओर देखे रास्ते के किनारे हो गया।

"यूं मुंह फेर कर तो गुजारा नहीं होगा।"

केवल ने एकदम पीछे मुड़ कर देखा। साथ चली आती दीपो को देखकर उसकी मोटी-मोटी आंखों में पहले तो हैरानी की झलक दिखायी दी, फिर हंसी उतर आयी।

"अच्छा, तो तू है ! मैंने सोचा पता नहीं कौन है।"

"तुझे काहे को पता होना है अब!" दीपो ने सिर के ऊपर वाले, लस्सी के बर्तन को ठीक करके आंखों में गुस्सा घोलते हुए कहा, "अगर मुड़ कर बात नहीं पूछनी थी, तो पहले ही सोचना था।"

अब केवल उसकी ओर सचेत होकर देखने लगा।

"देख क्या रहा है . . .?" उसके पैरों से हल्की-हल्की धूल उड़ रही थी।"जवाब दो!"

"जवाब मैं दूं कि तू . . .?"

"क्यों?"

"क्यों क्या. . .? तब मुझे 'हां' कह कर चली गयी, और फिर सोयी हुई की नींद ही न टूटी।"

"तू तब आया था?"

"और नहीं तो क्या !" केवल ने दीपो की ओर देखा और दीपो ने उसकी ओर।

"खा कसम . . .!" दीपो के चेहरे पर मुस्कराहट थी।

"मुझे तेरी कसम !" केवल मारे हैरानी के घबराया हुआ था।

"मैं सारी रात उठ-उठ कर आहट लेती रही।" कहते-कहते दीपो ने एक लंबी आह भरी, जैसे उसका अपना-आप बिखरता जा रहा हो।

"लेती रही होगी तू आहट।" केवल ने यूं कहा जैसे उसे गुस्सा हो। "उस समय तो सेहन में कोई ऊंची सांस भी नहीं ले रहा था।"

दीपो ने उसकी बात का उत्तर नहीं दिया। सामने से भैंसें आती देख कर वह एक ओर हो गयी। पीछे चरवाहे लड़के, बांहों में डिब्बे लटकाये, धूल में धूल बने चले जा रहे थे।

"विश्वास करवाने के लिए सीना फाड़ कर कैसे दिखाऊं? यह देख।" उसने दायां पांव, जूते में से निकाल कर उसे दिखलाया, "उस दिन का कमाया इनाम !"

दीपो ने देखा। केवल के पैर का जख्म भर गया था। फिर भी, दाग अभी मिटा नहीं था।

"क्या हो गया था?" जैलदार का हलवाहा चोर नजरों से देखता हुआ आगे निकल गया।

"इसे तू अपनी ही मेहरबानी समझ।" केवल ने यूं ही इधर-उधर नजरें घुमायीं। वैसे उसे किसी कंजर का कोई डर नहीं था। जब उसने रात वाली घटना बतायी, तो दीपो ने अपनी जांघों पर, हल्का-सा हाथ मारते हुए कहा, "हाय रे, मैं मर जाऊं। कसम खा तो . . .।

"तेरे विचार में मैं झूठ बोल रहा हूं?"

दीपो फिर नहीं बोली। पुल वाले कुएं तक वे छोटी-माटी बातें करते रहे। अपनी राह मुड़ते समय, दीपो ने पूछा, "आयेगा न?"

"अब कौन कंजर घुसने देगा।"

केवल का उत्तर सुन कर दीपो चुप हो गयी। मन मन सोचने लगी, अब, आने-जाने वाली कौन सी बात रह गयी है? हाय! रब बैरी ने, कैसे बुरे लेख लिखे हैं, इससे तो अच्छा था लिखता ही न ! सब्र-संतोष तो कर लेती . . .। उसे सोच में पड़ी देख कर केवल ने कहा—

"मैं न आऊं, पर तुझे तो कोई रोक नहीं !"

दीपो के अंदर अभी तक भी कुछ उबल रहा था, "बढकें भी मारीं, पर रास भी न आयीं।" गांव नजदीक आ गया था। दीपो का अभी बातें करने का मन था। इन दिनों के दौरान केवल उससे मिल न सका था। उसने केवल को पुल की ढलान पर उतरते ही, रास्ते की बायीं ओर के वृक्षों के झुरमुट के नीचे रोक लिया। छोटे-छोटे पौधे इतने घने थे कि उनके बीच बैठा आदमी राह चलते को दिखायी नहीं देता था। दूसरी तरफ कुएं वालों ने लकड़ियों का ढेर लगा रखा था।

"तो फिर अब . . .?" उसने लस्सी वाला बर्तन उतार कर नीचे रख लिया। चुपचाप केवल के मुंह की ओर देखती चबा-चबा कर बात करने लगी, "मुझे लगता है तू अपनी ओर से यूं ही काम खत्म किये बैठा है, क्यों, है, न?"

"नहीं, तू बात तो बता।"

"बात तो पहले ही बता चुकी हूं। मैंने तब भी तुझे बता दिया था कि मैं उस घर में किसी हालत में नहीं रहूंगी, चाहे दुनिया इधर की उधर हो जाय।"

"फिर तू ही बता, क्या करें?"

"मैं क्या बताऊं? मैं मर्द होती तो बताती कि आ इस राह चल पड़ें, मुझे परमात्मा ने बना दिया स्त्री। और स्त्री को यह दुनिया खांड-मिश्री समझती है। उठाई, मुंह में डाली और घुल गयी।"

केवल उसके गिले-शिकवे भरे चेहरे को देख रहा था। फिर उसने पैरों में से मोजे खोल कर, पैर दबाते हुए पूछा, "तुझे वे कुछ कह रहे थे?"

"कहेंगे कैसे? मैं मुंह फाड़ कर न रख दूं।"

"तो भी . . .?"

"वैसे, खुल कर तो कुछ नहीं कहते . . .पर अंदर ही अंदर उनकी जैसे घी में पकती हो . . .!"

"करता है, तो करने दे। कौन-सा उसका मुंह सिला हुआ है, पर तू तो सिर नीचा करके न बैठ। कोई राह निकाल . . .ढंग सोच . . .!"

केवल के उत्तर न देने पर, दीपो को दुख हुआ। लकड़ियों के ढेर की एक ओर, वह खाली पड़े खेतों की तरफ देखने लगी। बाहर लोग कपास उखाड़ रहे थे और गेहूं की बोआई का जोर बढ़ रहा था। दीपो को रह-रह कर क्रोध आता था। मायके से तो गयी और ससुराल

से भी। इसी के पीछे, जो अब वैसे ही रेत की ढेरियां बिखराये बैठा है।

"अच्छा फिर, हम बड़ूंदी ही छोड़ देंगे।" केवल ने उसे विचारों में डूबी देख कर कहा।

"बस, यही बात मुझे भी कहनी थी। यहां तो हमें मरजानों ने, खुली सांस भी नहीं लेने देनी। और बातें तो दूर की रही।"

केवल और दीपो के संबंध फिर उतने ही गहरे हो गये। कैलू के घर फिर धुंआ उटने लगा। पर दीपो आंख बचा कर केवल की सीढ़ियां उतरती रही। न जाने उसके मन में क्या बात बैट गयी थी। लोकाचार या अन्य किसी किस्म के भय से वह बिल्कुल ही मुक्त थी। उसके मन में तो बस, केवल के पास जाने की एक लालसा थी। कैलू के दिल में था कि अब वह फिर बदनामी करवा के कहीं नहीं जाती। और वह हर समय कमजोर कुत्ते की तरह दांत पीसता रहता था। दिन में एक-दो बार उनमें तू-तू, मैं-मैं हो जाती। जब भी क्लेश खड़ा होता, दीपो के केवल के घर जाने पर ही होता। ननदों ने आकर उसे समझाया— "देख बहन, अब तूने बहुत बदनामी करवा ली है, कोई कसर बाकी नहीं छोड़ी। जो सयानी औरतें हैं; वे तो सफेद चुनरी को सिलवट नहीं पड़ने देतीं। यह तो अब उम्र के लिए कलंक लग गया, यह कहीं धुल सकेगा भला ! बिल्कुल नहीं, यह तो बेटों-पोतों तक भी जायगा।"

दीपो की मोटी-मोटी आंखों में खुजली-सी होने लगी। सांवले आकर्षक चेहरे पर चीटियों की-सी जलन उठने लगी। उसने सांस अंदर खींचते हुए कहा—

"बीबी ! अगर कुछ सामने न हो, तो ही आदमी धतूरा चबाता है। नहीं तो उसे कोई चाव तो नहीं होता, अपने सिर में राख डलवाने का!"

"यह क्या बात की तूने?" ननद फूस की आग की तरह जल उठी "सामने क्या नहीं हैं, यहां कौन-सी उजाड़ पड़ी है . . .पूरे गांव में नहीं होगी किसी के पास इतनी जमीन . . .!"

दीपो ने नजरें उटा कर ननद के मुंह की ओर देखा; कैलू के मधुमक्खियों के छत्ते जैसे चेहरे और छोटी-छोटी गहरी आंखों में बबूल के पत्तों की सी रंगत थी। सफाई कर रही दीपो ने झाड़ू के गिरे हुए तिनके उटा कर झाड़ू में खोंसते हुए कहा—

"अगर आदमी टीक हो तो बाकी कमियां तो याद ही नहीं रहती।"

"तेरे आदमी को क्या हुआ है?" ननद ने मुंह बनाया, "अच्छा भला है मेरा भाई।"

"दूसरे ऐसा ही कहा करते हैं, कुम्हारिन अपने बर्तनों की हमेशा ही सराहना करती है . . .।"

"अच्छा . . .!" ननद ने तैश में तप कर कहा, "जभी तू दीवारें-छतें फलांगती फिरती है। लक्षण तो देखो ! तभी तो तू सिर चढ़ी हुई है। अगर उसमें ही पांच काने होते, तो कमी किस बात की थी! अंदर ही चोटी न काट देता !"

ननद कितनी ही देर तक फूटे बर्तन की भांति 'बड़-बड़' करती रही। उसके तीर दीपो की जूतियों को भी याद नहीं थे।

दीपो के मायके तथा ससुराल सारे ही दुखी थे। बाप और भाई दीपो के 'लक्षणों' से तंग थे। एक दिन दीपो की माता उससे मिलने आ गयी। भाई और भाभियां तो मुंह पर

ही कह देते थे, "ऐसी नालायक के साथ क्या वास्ता रखना, जिसने दोनों गांवों में हमारी बदनामी की है।"

दो दिन रह कर, उसने समधियों के घर का तौर-तरीका देखा, समधी और समधन के चेहरे के उसे बंटे-बंटे से लगे। कैलू ने पहले की तरह ज्यादा हित न दिखाया। उसने बेटी से बहाने-बहाने पूछा। वह बताती भी क्या? मां उसे जबर्दस्ती अपने गांव ले गयी। उसने सोचा, शायद इस तरह से उसका मन किसी दूसरी ओर लग जाय।

. . .और इधर केवल भी पागलों की तरह घूम-फिर रहा था। उसे अंदर-बाहर कुछ भी अच्छा नहीं लगता था। भायं-भायं करता घर उसे काट खाने को आता। सुनसान आंगन उसके दिल को दहलाता, काम करने को मन बिल्कुल नहीं मानता था। और फिर, एक दिन उसने बछड़ा चार पैसे घाटे पर किसी को बेच दिया। रबी की फसल, उसने लिहाजदारों की जोड़ी मंगवा कर बीज ली थी।

नौहणे की अपनी भाभी से बनती न थी। धन्नो उसके चादर बांध कर गली में चक्कर काटने से बुरी तरह नाराज थी। धन्नो बहाने-बहाने पशुओं में अपने जले-भुने दिल की भड़ास निकालती रहती थी। और नौहणा उसे मजाक ही समझता था। संध्या के समय धन्नो भैंसों को "गोतावा" कर रही थी, करतारा मजदूरी पर गेहूं की निराई-गुड़ाई कराता था। नौहणे का दिल करता, तो काम में हाथ बंटा देता, नहीं तो सारा दिन नीम तले चारपाई डाल कर पड़ा रहता। वैसे उसका उठना-बैठना ज्यादातर केवल के पास ही था। अकेली होने के कारण धन्नो के चेहरे पर तनाव बना रहता था। घर से खेत और फिर खेत से घर आते-जाते उसकी टांगें टूट जाती थीं। उसकी खीझ उसके कुदरती खीझ भरे स्वभाव के कारण भी थी। नौहणे ने कमर पर बोस्की की तहमत बांधी हुई थी। बाहर से आते ही वह सीधा चौंके में चला गया। धन्नो ने उसे देखा, तो उसके माथे पर बल पड़ गये। हर तीसरे-चौथे रोज उनका झगड़ा जरूर होता। धन्नो को उससे बहुत गिला था, खाने पीने को यह और अपने हाड़ तोड़ें वे दोनों। यह कहां का दस्तूर है? वह भूसे की टोकरी के बहाने निकली तो नौहणा डोलू में दूध डाले बैठा था। मथनी की आग की तपिश सीधी धन्नो के माथे पर जा चढ़ी और नांद में टोकरी उलटते हुए, उसके शब्द उभर कर बाहर आ गये।

"किसी को दिन में चैन होगा तो किसी को रात में। हम दोनों का ही दुर्भाग्य है कि हमें किसी पल भी चैन नहीं है। सुबह-सवेरे उठती हूं, मजाल है कि पल भर के लिए भी कहीं बैठ जाऊं, या किसी से बात कर लूं।" उसके बात करने के अंदाज से लगता था, जैसे वह किसी पास में खड़े व्यक्ति से यह सब कह रही हो। नौहणे ने उसकी बातें सुन लीं। दूध का घूंट अंदर उड़ेलते हुए, उसने आहिस्ता से उसे मां की गाली दी और फिर दूध पीने लगा। खली-बिनौलों वाला बर्तन भूसे में उलटाते समय धन्नो के कानों की बालियां हिलीं। बोलने के साथ-साथ वह बड़ी तेजी से भूसे में हाथ चला रही थी—

"जब भी बात करेगा, मेरी जमीन है! जमीन क्या पैसे उगलती है! क्या हमारी, निस्संतान की, कोई जमीन ही नहीं, जो हम सारा-सारा दिन काम में इधर-उधर फिरते हैं। उन कुत्ती औरतों ने हमारे खून में नहाने की ठानी हुई है, इनके मर जायें ताजे खसम। मैं तो कहती हूं कि सचमुच ही विधवा हो जायें। फिर देखूं कि कैसे आंखों में सुरमा सजाती हैं।"

भैंसों को नांद पर बांधती हुई भी वह बोलती रही।

"कमजातो! हमारे घर को ही सेंध लगानी है। कहीं और मर लो। अब तो संदूक की फट्टियां ही बाकी रह गयी हैं। अभी भी कमजातों की भूख नहीं मिटी। अभी कौन-सा बस कर रही हैं। अभी तो जमीन लिखवाना बाकी है।" भैंसों को बांध कर, वहीं खड़ी धन्नो पल्लू फैला कर, ऊंची आवाज में गरजी।

"मैं तो कहती हूं, जय कौरे, जैसे तूने हमारे घर को बर्बाद करने की सोची है, तुझे मांगने पर रोटी का टुकड़ा भी न मिले।"

"तेरा उन्होंने क्या बिगाड़ा है?" नौहणा उसके सामने आ कर आंखें लाल करके बोला। उसकी संतरी रंग की पगड़ी मावे से अकड़ी हुई थी, "घंटा भर हो गया, तुझे बड़-बड़ करते हुए।"

"अभी और घर लुटवाने की मर्जी होगी तेरी !" धन्नो उससे डरी नहीं।

"मैं तो लुटवाऊंगा। पकड़ ले तुझे जो पकड़ना है मेरा?"

धन्नो घास की आग की तरह भभक कर नौहणे की ओर लपकी।

"कंजर कहीं का, पकड़ा अपनी मां-बहन को . . .और साथ ही उन लुच्ची औरतों को, जो तुझे उंगल देती रहती हैं।"

उसे चुड़ैल की तरह दांत पीसते हुए आती देख कर नौहणा पीछे हट गया। पीछे हटते हुए, उसने जोर से कहा, "साली जमीन ही हो गयी सब कुछ, बहन-देने की, औरत न औरत की जात, तू जमीन अपने मायके से लायी है क्या? कुतिया कहीं की ! मैं चाहे अपना सारा हिस्सा दूं . . .तुझे क्या . . .तेरी . . .को क्यों आग लग रही है?" नौहणा बोलता-बोलता दरवाजे की ओर चला गया।

"तू उजाड़ कर तो देख . . .तेरा खून न पी लिया तो . . .।"

"तूने जिस बहन के फेरे देने होंगे, दे देना . . .सुना?"

धन्नो ढीली नहीं हुई। नौहणे के चले जाने के बाद भी, उसका गुस्सा सावन की वर्षा की भांति बढ़ता ही गया। दो तीन पड़ोसिनों के साथ जय कौर भी आ गयी। धन्नो ने ऊंचा बोल-बोल कर अपने आपको हलकान कर लिया।

जय कौर ने उसे चुप कराने के लिए नम्रता से कहा, "चल छोड़, क्यों जुबान गंदी कर रही है। घर का आदमी बुरा हो तो दुख ही दुख।"

"तू कमजात तो सारी दुनिया से गंदी है।" धन्नो जय कौर की ओर पूरे गुस्से में लपकी, "मुझे अक्ल देने आयी है!" एक हाथ जय कौर के सफेद बालों की तरफ बढ़ाते हुए उसने दूसरा हाथ उसके कंधे पर जोर से मारा। जय कौर एकदम से पीछे हट गयी। धन्नो फिर चीखी, "इन सफेद बालों की ही शर्म कर। तूने तो लाज-शर्म सब उतार दी बस, खाना-पीना ही सीख रखा है, कुत्ती कहीं की।"

जय कौर ने उसकी ओर भूरी-भूरी आंखें निकाल कर देखा। अन्य औरतें चुप रहीं।

"अब तेरा पुत्तर नहीं आने वाला, नौहणे पर चादर डाल ले !" तेज गरजती धन्नो की आवाज बैठ गयी। जय कौर कान बंद करके उल्टे पांव लौट गयी।

"अब जा क्यों रही है? सच्ची-सच्ची सुन कर जाना। दूसरे का घर उजाड़ कर तेरा वक्त पूरा नहीं होगा। शहर जा कर वेश्यापन कर, बदजात कहीं की।"

"अरी, अब बस भी कर धन्नो!" एक पड़ोसन ने उसे कंधे से पकड़ कर झकझोरा। "यूं ही अपना दिल दुखी न कर। बेशर्म लोगों को क्या फर्क पड़ता है? तू अपने आपको क्यों रोती है?"

"मैं अपने आपको न रोऊं, तो क्या करूं। हमारा तो घर ही बर्बाद हो गया। जुबान चला कर भाग गयी, जरा भिड़ कर तो देखती।"

"उसे भिड़ने की क्या जरूरत है! खाती-पीती है, पहनती है।" उस पड़ोसन ने पानी का गिलास ला कर देते हुए कहा, "ले पकड़, दो घूंट पानी के पी, कैसी घबरायी हुई है!"

"अरी मुझे कुछ नहीं होता, हमें तो इस कंजर ने तबाह कर दिया। काम को हाथ नहीं लगाता, इन रंडियों के पास ही रहता है। मैंने तो कह दिया है इन लुच्चियों से कि इसके बच्चे पैदा कर लो।"

धन्नो को शांत कर पड़ोसनें चली गयीं।

यह बात भी नौहणे के कान में पड़ी, पर उसने चुप्पी साधे रखी। धन्नो को वह भौंकने वाली कुतिया समझता था। धन्नो ने करतारे पर जोर डाला कि मैं तो जीवित तब रहूंगी अगर इसे अलग करे। करतारे ने दूर की सोच कर नौहणे को पहले की तरह समझाना ही उचित समझा। नौहणे ने "हां-हूं" कर दी।

जब करतारे ने जरा कड़ा होकर कहा तो नौहणे ने अकड़ कर कहा,

"तुम मुझे जाने से रोकते हो। मैंने तो अपने हिस्से का घर ही उसके नाम लिखवा देना है।"

करतारे और धन्नो की आंखों में नौहणे के शब्द कंकरों की तरह चुभने लगे। धन्नो ने करतारे के समर्थन में अकड़ते नौहणे को धक्का दिया तो वह पास पड़ी चारपाई पर औंधे-मुंह जा गिरा। नौहणे ने उटते ही धन्नो के एक धौल जमायी। उनमें हाथापाई होते देख कर करतारा भी नौहणे पर झपटा। बेशक नौहणा ताकतवर था, पर पति-पत्नी ने मिल कर उसकी खूब पिटाई की। उनके गुत्थम-गुत्था होकर गिरने से चारपाई एक तरफ से टूट गयी। धन्नो उसे दोनों हाथों से पीट रही थी। नौहणे ने बड़े जोर से धन्नो के फूले हुए पेट पर लात जमायी। मारे दर्द के वह कराह उठी और पेट पकड़ कर एक ओर बैठ गयी। करतारा नौहणे से कमजोर था। नौहणे ने पूरे जोर से करतारे को मुक्का मारा। दुनियादारी का मारा करतारा चक्कर खा कर, दीवार के साथ जा लगा। पगड़ी उठा कर साफ करते हुए, नौहणे ने, गुस्से-भरी आंखों से करतारे की ओर देखा, फिर गाली निकालते हुए पगड़ी को दोबारा जोर से झटका। धन्नो अभी भी पेट पकड़े खड़ी थी। नौहणे को दरवाजे की ओर आता देख कर, वह एक तरफ हो गयी। अभी उसने पीठ मोड़ी ही थी कि सहसा उसके कूल्हे पर गुरुगाबी वाली लात आ लगी। वह वहीं बैठ गयी।

"तेरी मां की . . .अब दिखाऊंगा तुझे दिन में तारे।" जला-भुना नौहणा कपड़े झाड़ता हुआ बाहर निकल गया।

आस-पड़ोस में पिछले दो दिनों के दौरान घटी घटनाएं चर्चा का विषय बनी हुई थीं। औरतें एक-दूसरी से मुंह जोड़-जोड़ कर बातें कर रही थीं। जय कौर के समर्थकों ने उसे पंचायत बुलाने पर जोर दिया, मगर वह चुप रही।

"बहन, पंचायत भी तो ताकतवरों की ही है। मेरी कौन सुनेगा!" फिर एक लंबी आह भर कर, जय कौर ने कहा, "तू जानती है, बूढ़ा तो बिस्तर पर पड़ा है और जिसका मुझे सहारा था, उसकी कोई खबर ही नहीं।"

"कोई खत-पत्र नहीं आया, गिंदी का?" भप्पो की बुआ नंद कौर ने पास बैठते हुए

पूछा। जय कौर ने सिर हिला दिया। दोनों हाथों से सिर पकड़े बैठी जय कौर ने यूं सिर हिलाया, जैसे उसका सब-कुछ बिखर गया हो। फिर अपने-आप ही बोलने लगी, "हां, मुझे विश्वास है कि वह चीनियों के कब्जे में है। जब उन्हें दया आयेगी, तभी छोड़ेंगे।"

"फिर भी,सरकार कुछ तो कहती होगी !"

"सरकार क्या कहेगी !" मोड़ वाली भजनो ने मुंह बना कर कहा, "जिसका लहू होता है, दुख भी उसे ही होता है। लड़ाई में, न जाने कितने मरे हैं, पर उन्हें क्या? यह तो बेटी-बेटों वालों का ही दिल जानता है।"

"लुधियाने से एक पत्र-सा आया तो है।" जय कौर ने टंडी आह भरते हुए कहा। "अच्छा तो क्या कहते हैं? वह जिंदा है?"

"हां, लिखा है वे कुछ पूछताछ करेंगे, परसों सुबह जाऊंगी।"

काम-काज में लगी गुरबंशो के कानों में जब यह खबर पड़ी, तो उसे लगा जैसे उसके अंदर कुछ टूट रहा हो।

पिछले रोज से ही उसका दिल डूब रहा था। वह सोच रही थी कि हमारे सिर पर आदमी नहीं है, इसलिए दुनिया ऐसे कर रही है। इस तरह की मुसीबत में, उसे नगिंदर की जरूरत महसूस होती। तीन वर्ष हो गये थे उसे अंदर ही अंदर जलते। कभी-कभी उसे लगता कि उसकी देह अधपके, अधकच्चे सेब की तरह गदरायी हुई है। बेशक नौहणा उसकी टंडी रातों को गर्म कर देता था। परंतु उसका मन हर पल घबराता था। उसे मालूम था कि वह लोगों के बीच आंखें ऊंची करके नहीं चल सकती। लेकिन वह कच्चे दूध की तरह उबलती अपनी उम्र का क्या करे! इसे काबू में रखना बस का रोग नहीं था ! पांच-छह महीने से उसका बहनोई 'देड़के' वाला गेबा, कई चक्कर लगा गया था। उसका बैटना-उटना बदमाशों के साथ था, और वह लफंगा-सा आदमी था। जब पहली बार गुरबंश ने उसके आगे टंडी आह भरी थी, तो उसकी बिजली जैसी आंख ने भांप लिया था, और उसने कहा था, "क्या बात है बंशो, लंबी आहें क्यों भर रही है?"

गुरबंश ने आंख उटा कर उसके गोरे और चमकते मुंह की ओर देखा। गेबा टेरीकोट के बिस्कुटी रंग के कुर्ते के बाजू चढ़ा रहा था। बांह में पीले रंग का कड़ा और गोदना चमक रहा था और कलाई पर सुनहरी घड़ी बंधी थी। गुरबंश के गोल और भारी चेहरे पर जर्दी छायी हुई थी। गेबे ने कटी हुई दाढ़ी के काले-स्याह बालों में हाथ फेरते हुए आंख मारी—

"ऐसे तो चुप रह कर जिंदगी नहीं कटेगी।"

'जैसे और लोगों की कट जाती है, मेरी भी कट जायगी।" नलके के हत्थे को, हाथ से हल्का-हल्का हिलाते हुए वह धरती को पैर के अंगूटे से खुरच रही थी।

"यही दिन खाने-पीने के होते हैं और तेरे मुंह पर से मक्खियां नहीं उड़ रही हैं !"

गुरबंश ने उसकी ओर देख कर नजरें नीची करते हुए आह भरी। फिर इधर-उधर उड़ती हुई नजरें घुमायीं। उसकी सास चाय के नीचे आग तेज कर रही थी।

"दो-ढ़ाई वर्ष गुजर गये हैं, दो-चार और गुजर जायेंगे। बस, तब तक समय निकल

जायगा।" गुरबंश हल्का-सा मुस्कराती हुई चूल्हे की ओर खिसक गयी।

शाम में गुलाबी ठंड घुल रही थी। गुरबंश ने रोटी लगाने से पहले हलवा बनाया। गुरबंश रोटी बनाने लगी और उसकी सास गेबे को गर्म-गर्म रोटी खिलाने लगी। चूल्हा-चौका समेट कर गुरबंश ने नयी बनी बैठक में बिस्तर लगा दिया। वह और उसकी सास दालान में सो गयीं। बूढ़ा अपनी कोठरी में ठंड से दुबका पड़ा था। देर रात तक गुरबंश का ठंडा बिस्तरा गर्म न हुआ और वह करवटें बदलती रही। आज की बातों ने उसके पैर उखाड़ दिये थे। अभी उसकी आंख हल्की-सी लगी ही थी कि उसे बाहर पदचाप सुनायी दी। कोई दबे पांव आंगन की ओर गया था। उसकी नसें भी चटक रही थीं। उसने आहिस्ता से मुंह खोल कर जय कौर की चारपाई की ओर झांका। वह रजाई लपेट कर गहरी नींद सोई पड़ी थी। उसने चुपचाप दबे-पांव चारपाई से पैर नीचे रखे और खरगोश की तरह चलती हुई दरवाजे तक आ गयी। बाहर से नलका चलने की आवाज आयी। उसने झिरी में से बाहर देखा। आंगन में सफेद दूधिया चांदनी बिखरी हुई थी। फिर नलके की आवाज आयी और साथ ही किसी के खांसने की भी। दरवाजे के साथ लगी गुरबंश का दिल जोर-जोर से धड़कने लगा, सांस तेज चलने लगी, टांगों मे खून जमने लगा, पदचाप उसे अपनी ओर और तेज आती लगी।

आंगन के बीच, उसे गेबा नंगे सिर कुर्ता पहने दिखायी दिया। दूधिया चांदनी में उसकी गोल-गोल जांघें चमक रही थीं। दरवाजे के साथ लगी गुरबंशो के अंदर, जैसे आंच-सी उठी। उसने गर्दन घुमा कर बुढ़िया की चारपाई की ओर एक नजर डाली। उसके दबे-दबे से खर्राटे सुनाई दे रहे थे। गुरबंश ने लरजते हुए हाथ से कुंडी खोली और एक पल्ला थोड़ा-सा खोल कर उसने एक बार फिर पीछे मुड़ कर देखा और बिल्ली की तरह सरक कर आंगन में आ गयी। दायें हाथ से पल्लों को अंदर की ओर धकेलने लगी, पर डर कर पीछे हट गयी। कुछ क्षण वह यूं ही खड़ी रही। फिर भय के मारे तख्ते अंदर को धकेल दिये।

"कौन है?" तख्तों के चरमराने की आवाज सुन कर गेबे ने मुंह पर से रजाई उतार कर पूछा। उसके शब्द सरदी से ठंडे हुए पड़े थे।

"मैं हूं।" गेबे ने बैठी हुई बारीक सी आवाज सुनी और फिर पल्लों के बंद होने की आवाज सुनायी दी।

"आ, बैठ जा।" गेबे ने उठ कर ठीक होते हुए, रजाई का पल्लू उठाया। उसके अंदर लहू का चक्कर तेज हो गया था।

"टांगें रजाई में कर ले, ठंड लग जायगी।"

,इस बार गुरबंश निधड़क होकर रजाई का पल्लू उठा कर बैठ गयी। उसने मुंह घुटनों में छुपा लिया। फिर गेबे ने उसे कस कर अपनी बांहों में जकड़ लिया।

उनकी सांसें धौंकनी की तरह, तेज-तेज चलती रहीं।

"नगिंदर का कुछ पता चला?" काफी देर बाद गेबे ने पूछा।

"ऊं . . .हूं . . .।"

"मुझे तो चिंता है . . .तेरा क्या बनेगा?"

"मेरा क्या बनना है, बस . . ." उसने धीरे से, हल्की आह भरते हुए, उसके कान में कहा।

"क्या पता . . .।" गेबे ने रजाई को जोर से लपेटते हुए कहना शुरू किया, "पता नहीं गिंदर जिंदा भी है या . . .। अगर जिंदा भी हुआ तो कहते हैं कि चीनी तो साले बड़े कसाई हैं . . .आदमी को उसी समय पार कर देते हैं।" गुरबंश उसकी बात सुन कर सुन्न हो गयी उसका दिल घबराने लगा। कुछ समय चुप रहने के बाद वह बोली, "यही गम तो मुझे खाये जा रहा है !"

"फिर तुझे कोई तरीका सोचना चाहिए।"

"मैं क्या सोचूं, मुझे तो कुछ सुझाई नहीं देता!"

गेबे के मन पर बोझ बढ़ गया। सर्दियों की रात में भी उसका गला खुश्क हो गया। "अगर तू मेरी माने, तो अपनी जवानी यूं ही बरबाद न कर; यहां आदमी क्या खाक छानने के लिए जन्म लेता है . . .। आदमी ने अगर चार दिन मजे से न काटे तो . . .!"

बंशो कुछ बोली नहीं।

"बंदा तुझे मैं ढूंढ़ दूंगा, बढ़िया . . .। एक नंबर . . .!"

गुरबंश का शरीर जैसे बर्फ सा ठंडा हो गया। उसकी कसी हुई बांहें ढीली पड़ गयीं। उसका मन फिजूल की सोचों में उलझ गया। मन में अनेक छोटे-छोटे विचार उभर आये, "क्यों यूं ही सोने-जैसी जवानी वह खाक में मिलाने लगी है। पता नहीं वह जिंदा भी है या नहीं। यदि जीवित होता तो . . .तीन वर्ष पूरे होने को आये—उसकी कोई खबर न आती?" फिर उसने अपने मन को धीमी-सी आवाज में कहा, "बंशो ! वह तो इस संसार में है नहीं! हाय रे भगवान ! तूने कैसी तकदीर लिख दी ।" उसके बोल स्वाभाविक ही ऊंचे हो कर 'आह' बन गये।

"यूं परमात्मा को दोष देकर, कितनी देर तक चलेगा !" गेबे ने, उसका दूसरी ओर मुड़ा मुंह अपनी ओर कर लिया, "तू दुनिया की ओर न देख। लोग तो चार दिन, कुत्ते की तरह भौंक कर चुप हो जाते हैं, उन्हें याद ही नहीं रहता कि कब, क्या हुआ था। और देख, अगर चार पैसे पास में हों तो मान-सम्मान भी होता है, नहीं तो कोई कौड़ियों के भाव नहीं पूछता।"

दूसरे दिन जब गेबा रोटी खाकर चलने लगा तो उसने गुरबंश को "सत् श्री अकाल" कहते हुए बुढ़िया से बचाकर धीरे से पूछा, "फिर तेरी क्या सलाह है?"

"सलाह ! तू फिर आ जाना कभी !"

"सोच ले . . .!"

"कोई बात नहीं, तू आ जाना . . .।" जब बंशो ने मीठी-मीठी आंखों से गेबे की ओर देखा, तो वह मुस्करा कर चला गया था।

गेबे के चले जाने के बाद, गुरबंश ने बहुत सोच-विचार किया, "अगर चली ही जाऊं, तो क्या होगा? लोग कहेंगे कि फलां आदमी की बहू निकल गयी . . .! जंहां जाऊंगी वहां की औरतें ताने कसेंगी . . .नहीं भगवान ! मुझसे नहीं होगा यह काम, तू उसे ही कुशल-मंगल रख।" जब दूर पड़े पति के बारे में सोचती, तो कलेजे में एक हूक-सी उठती—वह कहां है?—अरी, वह है ही नहीं, पगली ! अगर होता तो, तीन वर्षों में कहीं न कहीं से तो कोई

खबर आती। जब कभी किसी जवान नव-विवाहित को देख लेती, उसके अंदर से एक चीख-सी उठने को होती। 'भाड़ में जायें लोग, मेरी जूती . . .परवाह करे बदनामी की। ध्यान सिंह का लड़का लाया ही है निकाल कर, पटाखे जैसी। उसे तो कोई कुछ नहीं कहता कि बुरा किया है। और गेबे के कहे अनुसार, पैसों से ही आदमी अकड़ सकता है। वैसे तो कोई किसी को नहीं पूछता . . .। अब कौन-सी कम बदनामी होती है! कमबख्तों के तो छोटे-छोटे बच्चे भी ऐसे हैं कि मत पूछो . . .उनके कीड़े पड़ें . . .।'

कुछ दिनों बाद ही गेबा फिर आ धमका। उसके साथ कोई शौकीन-सा, ऊंचा-लंबा, सांवले रंग का भरे-भरे शरीर वाला युवक था। देखने में वह भी ऐबी ही लगता था। भरे-भरे चेहरे पर तीखी-तीखी नोकदार मूंछें बड़ी रौबदार लग रही थीं। किरमिची रंग की पगड़ी और गजरे जैसा युवक देख कर गुरबंश का मन डोल गया। उसे शक हो गया, शायद वह चूल्हे पर चाय बनाने लगी। पानी लेने के बहाने गेबे ने दीवार के ऊपर से हंसती आंखों से गुरबंशो की ओर देख कर पूछा, "क्यों, पंसद है?" उसने इर्द-गिर्द देखते हुए, तहमद दोनों हाथों से उठा कर कमर के गिर्द लांगड़-सी मार ली, "गुलाब के फूल-सा जाट पकड़ कर लाया हूं।"

गुरबंश होंठ भींच कर मुस्करा दी और पानी का गिलास भर कर उसे पकड़ा दिया। गिलास पकड़ते समय गेबे ने उसके हाथ पर चूंटी काट ली, "देख ले, सारे दुख दूर हो जायेंगे जाट के सामने, कोई चूं तक नहीं करता।"

"देड़क्यां का है?" गुरबंश ने उसकी शेखी की ओर से ध्यान हटाते हुए पूछा।

"नहीं तो। 'खाड़े' का है।"

गुरबंश के मन में आया, 'इतना खूबसूरत लड़का छोटे घर का कैसे हो सकता है।' ईंधन लेने के बहाने उसे देख आयी। पतीले का ढक्कन उठा कर देखा, चाय अभी उबली नहीं थी। अंदर जा कर दर्पण के सामने खड़ी हो गयी। तेजी से बिखरे बालों को कंघी से संवारा। लंबी चुनरी अच्छी तरह सिर पर ले ली। और एक बार फिर अपने-आप को दर्पण में निहारा। आहिस्ता से चौंके में आ गयी। चाय पी कर वे रुके नहीं, आगे चले गये। गुरबंश ने गेबे पर रात ठहरने के लिए जोर दिया, मगर वह कोई जरूरी काम बता कर चला गया। जाते समय उसने धीरे-से गुरबंश के कान में कहा, "गुलजारा तुझे देख कर बेहद खुश हुआ है।"

गुरबंश को लगा जैसे वह आकाश में उड़ रही हो।

सुबह मुंह-अंधेरे ही नौहणे ने हल्के हाथों जय कौर के पल्ले अंदर को धकेले। आज उसने चाची को मंडी की ओर जाते देखा था। आंगन में कोई नहीं था, पतले मैले प्रकाश के अलावा। नौहणा पल भर के लिए आधे-खुले दरवाजे में खड़ा रहा। इतने में पशुओं वाले कोठे में से, लालटेन का प्रकाश चौंके की ओर लपका। प्रकाश का गोल-सा घेरा, चारों ओर दीवारों पर बन रहा था। जब लालटेन आंगन में आ गयी तो नौहणे को पूरी औरत दिखायी देने लगी। जब उसने चौंके की ओर कदम बढ़ाये, तो उसकी पापलीन की नीली तहमद हल्की-सी सरसराहट पैदा कर रही थी। सिर पर काली पगड़ी पूरी तरह दिखायी नहीं

दे रही थी, पर उसका रंग लाल हीरे की तरह चमक रहा था।

"क्या कर रही है, सरदारनी?" नौहणे ने दीवार के पास जाकर, हल्की पर रौबदार आवाज में कहा। चूल्हा-चौंका संभाल रही गुरबंश ने नजदीक से मर्दाना आवाज सुन कर, कान खड़े कर लिये, फिर पल भर यूं ही शून्य में देखती रही।

"क्या बात, अब पहचान ही नहीं रही !" और साथ ही नौहणे की टन-टन करती हुई हंसी सुनाई दी।

"आहो . . .! आ जा, मैंने कहा, पता नहीं कौन अजनबी है ! मैं तो डर ही गयी थी!"

"हां, अब तो तुझे डर लगेगा ही!" नौहणे ने यह कह कर तुरंत मन में सोचा। "उसे यह अटपटी बोली मारने की क्या जरूरत थी?"

"जीता कहां है" और आहिस्ता से नौहणा आकर उसके साथ बैठ गया। गुरबंश का शरीर न जाने क्यों लरजने लगा ! उसने अपने पांव थोड़े से परे हटा लिये और फिर नौहणे के चेहरे की ओर देखा। उसी समय नौहणे ने भी उसके चेहरे पर निगाहें गड़ा दीं।

"अंदर, बूढ़े के पास है।" थाल को मांज कर, टोकरी में रखते हुए गुरबंश ने मरी हुई आवाज में कहा। उसकी खुश्क आवाज सुनकर नौहणे का दिल डूबने लगा। उसने अपने दोनों हाथ जोड़ कर सिर के पीछे किये हुए थे और कोहनियां घुटनों पर रखी हुई थीं। और वह साफ-समतल आंगन की तरफ देख रहा था।

"चाची आज कहां गयी है?" नौहणे ने हाथ आग के सामने फैलाते हुए कहा, जैसे ठंड उसका जिस्म तोड़ रही हो।

"लुधियाने गयी है। जीते के भाई का कोई खत-पत्र आया है।"

"किस लिए भई . . .?"

"कोई पूछताछ करने के लिए . . . ।" गुरबंश चुपचाप अपने काम में लगी रही। उसका ऐसे सिकुड़ कर बैठना और दबी-घुटी सी हालत देखकर नौहणे का शक यकीन में बदलने लगा। और उसने मन मार कर पूछ ही लिया, "क्या बात है, गेबा बहुत चक्कर लगाता है आजकल।" और साथ ही उसने गहरी नजर से उसके हाव-भाव परखने का प्रयास किया। वह अपने ध्यान में खोयी बर्तन मांजती रही।

"खाली बैठने वाले को भी कोई काम होता है !"

"तो भी . . .?"

"चूहड़ों की बेगार पटान करने लगें, तो काम क्या होगा !" इस बार गुरबंश ने जरा हंस कर उत्तर दिया, "तेरे और उस कंजरी की तरह, एड़ियां चमका-चमका कर गांव-गांव घूमता फिरता है।"

नौहणे को गुरबंश की बात में बनावटीपन की गंध आयी, पर वह कुछ बोला नहीं। क्षण भर के लिए गुरबंश भी चुप साधे बैठी रही। रात के टिड्डे "टीं . . .ई . . .टीं ईं" कर रहे थे। दूध में मीठा मिला कर नौहणे को गिलास पकड़ाते हुए उसने हंस कर पूछा, "धन्नो के साथ तो अब ठीक निभ रही होगी या फिर पहले की तरह झगड़ा ही होता रहता है?"

"तुझे क्या . . .ठीक हो न हो, तूने कौन-सा दुख पूछना है?" जैसे उसकी बात नौहणे को बुरी लगी हो।

"पूछ तो रही हूं, और कैसे पूछूं?"

"दुख तो, अब तू उसके ही पूछना!"

"किसके . . .?" गुरबंशो ने एकदम उसकी ओर देखा। वह चुपचाप हाथ सिर पर जोड़े बैठा था।

"गेबे के . . .।" नौहणे ने दूध का घूंट भर कर कहा, जैसे कलेजे में ठंड पड़ गयी हो। गुरबंश ने नजरें झुका लीं। उसके मन में कितनी ही बातें एक साथ उभरीं, यह कौन-सा बुरा है . . .जान न्यौछावर करता है . . .पर लोग तो कमबख्त दहलीज से बाहर नहीं होने देते। यहां कौन बसने देगा? चोरी-छिपे तो दिल हमेशा ही धड़कता रहता है।

"क्या बात है, अब एकदम से चुप कर गयी?"

"तुझे भ्रम हो गया है!" गुरबंश ने उसकी ओर देखकर धीरे से कहना शुरू किया "वह मेरा बहनोई, अगर वह मेरे घर आ जाता है तो तेरे दिल में है कि . . .। यह, कैसे होगा . . .बहनोई क्या सालियों के पास आते नहीं!" बंशो का दिल तेजी से फड़फड़ा रहा था।

उसने दो-चार बातें शांति से कीं। उत्तर में नौहणा बिलकुल नहीं बोला। लालटेन के पीले प्रकाश में गुरबंश ने आंखें उठा कर देखा। नौहणा चुप साधे बैठा था।

"भाभी। बापू ने तसले में आग मंगवायी है।" जीते ने चौंके के पास आ कर ठिठुरते हुए कहा। नौहणे को निकट बैठे देख कर वह अवाक रह गया। उसने डर कर पहले नौहणे और फिर भाभी की ओर देखा।

"चल, मैं लाती हूं।"

लड़का भूरी-भूरी आंखें झपकाता तुरंत चला गया। गुरबंश तसले में आग डाल कर उसके पीछे उठने लगी और नौहणे की ओर देखकर चल दी। कोठरी के दरवाजे के सामने जरा पैर दबा कर उसने अंदर की आहट ली। जीता धीमी आवाज में, अपने बापू से कह रहा था।

"बापू! ओ बापू! भाभी के पास नौहणा बैठा था, करतारे का।"

गुरबंश को सर्दियों की ठंडी रात में भी पसीना आ गया। पीछे लौट जाने को जी चाहा, लेकिन वह मुड़ी नहीं। धीरे से उसने पल्ले को अंदर की ओर धकेल कर आग वाला तसला अपने ससुर की चारपाई के नीचे कर दिया और दूध वाली गड़वी और गिलास ले कर उल्टे पांव बाहर आ गयी। जब वह चौंके के पास आयी तो नौहणे ने उठते हुए कहा—"अच्छा, मैं चलता हूं।"

"तू बैठ, जा कर क्या करना है?" गुरबंश ने दबी जुबान से कहा।

नौहणे ने फिर उसके मुंह की ओर देखा लेकिन पतले गहरे अंधेरे में, उसे कुछ दिखायी न दिया।

घिसी हुई आवाज में "जाता हूं . . .।" कह कर, नौहणा खट्-खट् करता, गली के दरवाजे की ओर हो लिया।

गुरबंश फिर नहीं बोली। वह उसे आंगन के बीच में से जाते हुए देखती रही और उसकी तहमद का हल्का-हल्का शोर सुनती रही। मन में विचार आया कि आवाज दे कर रोक ले, लेकिन इर्द-गिर्द की बात सोच कर हिम्मत न हुई। फिर ख्याल आया कि दौड़ कर बांह पकड़ ले। दिल ने उठने की हिम्मत तो जुटाई, मगर टांगें बर्फ हुई पड़ी थीं। दरवाजे से बाहर होते हुए, नौहणे ने पीछे मुड़ कर देखा, तो उसे किसी के गला साफ करने की आवाज सुनाई दी, जैसे गुरबंश के गले में कुछ फंस गया हो। जैसे ही नौहणे ने दरवाजे को पार किया, गुरबंश तेजी से बाहर दरवाजे में आ गयी। वह आधा पल्ला खोलकर, गली में जाते हुए नौहणे को देखती रही। उसे लगा उसकी जैसे छाती में कुछ जल रहा हो। बाहर न निकले, इसलिए उसने नाक-मुंह कस लिया, पर कड़वाहट आंखों में से बाहर आ गयी। आंखें बंद कीं तो गालों पर से आंसुओं की धार बहने लगी। आंखें खोल कर गली में देखा। गली के कोने पर, उसे कोई कांपती-लरजती आकृति दिखाई दी। क्षण भर में चारों ओर जैसे अंधकार-सा छा गया, जैसे काला गहरा धुआं उसकी आंखों में भर गया हो। बेमतलब ही वह दरवाजे में खड़ी परछाई की तरह कांपते और गहरे होते काले अंधेरे को घूरती रही। फिर आहिस्ता से पल्ले बंद करके, कुंडी लगा दी।

उसके भीतर से एक सोई पड़ी ठंडी आह उभरी। उसने बर्तन उठा कर अंदर रख दिये। लालटेन उठा कर अंदर जाने लगी तो सिरफिरों की भांति, पशुओं वाले कोठे की ओर चल दी। भूसे वाले कोठे के सामने जाकर, उसके मुंह से 'ओह !' की आवाज निकली। वह अंदर आकर चारपाई पर पड़ गयी। कितनी ही देर तक मन घाटियों में भटकता रहा। फिर न जाने मन में क्या उबाल-सा उठा, कि वह बाहर आंगन में निकल आयी। उसने गली के दरवाजे की ओर संदेहपूर्ण दृष्टि से देखा। उसे ऐसे लगा जैसे कोई आहिस्ता-आहिस्ता दरवाजे पर दस्तक दे रहा हो, लेकिन जब उसने टकटकी लगा कर देखा और कान लगा कर दस्तक सुनने की कोशिश की, तो उसे लगा जैसे भ्रम हुआ हो। वह आंगन में न जाने कितनी देर तक यूं ही खड़ी रही। फिर सहसा उसके कदम अपने-आप ही सीढ़ियों की ओर चल पड़े और क्षण भर में वह सीढ़ी के अंतिम डंडे पर थी। उसने छत पर एक चक्कर लगाया। फिर पश्चिम की ओर के एक ऊंचे कोठे की तरफ निगाह फेरी। अंधेरे के सिवा उसे कुछ दिखाई न दिया। नीचे आंगन में से कभी-कभी पीला प्रकाश ऊपर उठ रहा था, जैसे अभी तक कोई चूल्हे के पास बैठा आग जला रहा हो। फिर अचानक ही उसकी दृष्टि पड़ोसियों के आंगन में उतर गयी। सर्दी से आंगन की मिट्टी ठंडी बर्फ हो रही थी। पड़ोसी कब से अंदर गहरी नींद में सोये पड़े थे। गुरबंश ने छत की मुंडेर पर खड़ी हो कर, अंधेरे में झांका। जब उसने झुक कर नजरें फाड़ कर बाहर देखा, तो मुंडेर से एक पुरानी ईंट उखड़ कर सेहन में जा गिरी। ईंट के गिरने की आवाज सुन कर, उनकी भूरे रंग की कुतिया बाहर निकल कर भौंकने लगी—"अरी, तुझे क्या हो गया सुसरी को ! जरा आंख नहीं लगने देती।" छप्पर के नीचे से भप्पो के फूफा के बोल सुन कर गुरबंश मुंडेर से परे हट गयी। शरीर को सर्दी चढ़ गयी। फिर धीरे-धीरे टूटे हुए मन से सीढ़ी उतर कर, वह अंदर दालान में चली गयी।

लुधियाना से लौटी जय कौर का उतरा हुआ मुंह कई लोगों ने रास्ते में देखा। उसके लाल सुर्ख चेहरे पर कालिमा फैली हुई थी। चाल उसकी यूं लगती थी, जैसे वह टांगें घसीट रही हो। उसने बायें हाथ में, ऊपर से गांठ दे कर कबूतरों की कढ़ाई वाला थैला पकड़ा हुआ था। रास्ते में उसका दिल डूब रहा था। हर दूसरे क्षण वह सूखते हुए गले को पानी से तर करती। लारी में बैठी, जब दूसरी सवारियों की सरसरी निगाहें फेंकती, तो भीतर से आग की लपटें-सी उभर आतीं, दिल डोलने लग जाता। गांव की ओर देख कर तो उसका मन और भी डूबने लग गया। दरवाजे में से अंदर आकर थके-हारे हाथ से, उसने थैला खूंटी पर लटका दिया। धूल-भरी जूती उतार कर, बड़ी मुश्किल से वह चौकी तक गयी। बहू को पानी लाने के लिए कह कर, वह दोनों हाथों से सिर पकड़ कर बैठ गयी। सोये हुए मन में एक हूक-सी उठी।

"हाय रे भगवान ! तूने यह क्या कर दिया . . . !"

बहू के हाथ से पानी का गिलास पकड़ कर, उसके गोल सिंदूरी चेहरे की ओर देखने लगी। टकटकी लगा कर देखती हुई वह सिर हिलाने लगी। खुश्क आंखों में कहीं अटकी हुई एक चमक उतर आयी। उसका गला भर आया और एक आह गले में आ कर अटक गयी।

"बेबे, पानी तो पी ले, देख तू तो घबरायी हुई है !"

आहट पा कर नंद कौर और भप्पो भी आ गयीं। दो-चार और लोगों को भी पता लग गया। पास-पड़ोस की स्त्रियां नगिंदर के बारे में पता करने के लिए आ गयीं। जय कौर उन्हें देख कर और भी परेशान हो गयी। उसकी आंखों में अकड़न-सी चढ़ती हुई प्रतीत हुई। भीतर की बात वह किसी को बताना नहीं चाहती थी। लुधियाना में कही गयी बात पर उसे जरा भी विश्वास न था।

"जय कौरे! मेरे पुत्तर का कुछ पता चला?" नंद कौर ने निकट हो कर पूछा।

जय कौर ने सिर हिला कर हाथ का पंजा हिलाया। सभी स्त्रियों के मुंह से "हाय!" की लंबी आवाज एक साथ निकली। यह बात सुनकर गुरबंश के मुंह से भी एक दर्दनाक चीख निकल गयी। बहू को रोता देख कर सास से भी न रहा गया। वह भी फूट-फूट कर रोने लगी। नंद कौर बार-बार जय कौर का कंधा हिला-हिला कर पूछ रही थी। जय कौर की जुबान से बस इतना ही निकल सका, "कहते हैं कि गुम है !"

चीखती-चिल्लाती बहू को देख कर, उससे सहन न हो सका। वह उसे अपने बगल में लेकर दिलासा देने लगी।

"न रो री बदकिस्मत ! न रो। उसकी खैर मना—दो वक्त सच्चे पातशाह के आगे हाथ जोड़ कि हे परमात्मा ! हमारे साथ इतना जुल्म न कर !"

"दोहाई है भगवान !" नंद कौर के भीतर से आह निकली, "ऐसी कोई मुसीबत न पड़े इन पर। यह तो बेचारी पहले ही परेशान हैं— मर्दों के बगैर तो मिनटों में अंधेरा छा जाता है !"

"उसे तो कितने ही वर्ष हो गये घर में कदम रखे !" फूट-फूट कर रोती जय कौर को

नंद कौर फिर ढांढस देने लगी, "जय कौरे, तेरे दिल को यकीन है कि रब बिलकुल ही मुकर जायगा ! नहीं, उसके घर देर है, अंधेर नहीं। यदि तेरा उस पर विश्वास है, तो वह तुझे अपने दर से खाली नहीं लौटायेगा।"नंद कौर की सहानुभूति देखकर, उसे कुछ धैर्य हुआ और वह दुख-सुख की बातें करने लगी।

"अगर परमात्मा ने यही दिन दिखलाने थे, तो तभी छीन लेता। बड़ी मुश्किल से दंगे-फसादों में छुपा-छुपा कर लायी थी। कहती थी, यही पेट की आंत है, अगर इसे कुछ हो गया तो मैं क्या करूंगी।"

"मैं क्या करूंगी . . .!" नंद कौर ने विरह के दुख में सिर हिलाते हुए आह भरी।

"तब तो सब्र भी आ जाता था, अब सहन करने की बहुत कोशिश करती हूं, लेकिन आग लगे इस दिल को, इसे चैन ही नहीं आता !— अगर पता होता इस भावी का, तो परायी बेटी को इस तरह छलनी क्यों करती।"

"भावी का कैसे पता चले? जो दुख भोगने हों, उनसे बंदा भाग नहीं सकता।" नंद कौर ने अपनी बहती आंखों को पोंछते हुए कहा, "तू धीरज रख। अगर तू ही यूं दिल छोटा करके बैठ गयी तो . . .। यह तो कमसिन है, तुझसे पहले गिरेगी !"

"दिल को बहुत समझाती हूं, लेकिन मानता ही नहीं। बस, मछली की तरह तड़प रहा है, तड़पे ही जा रहा है!"

"अरी, अगर दिल संभल जाय, तो बात ही क्या है!" नंद कौर ने मीठे स्वर में कहते हुए अपने मायके वालों के दुख की बात छेड़ी, "देख ले, तेरे सामने जवान भाई शरीकों ने मिट्टी में मिला दिये— मां, मेरी के लिए तो सारी दुनिया अंधेरी है। हमने क्या सब्र नहीं किया है ! किया है, बहुत किया है। फिर तू ही बता, किस कुएं-तालाब में डूब मरें . . .ज़हां हमें टौर मिल जाये . , .तो . . .! लेकिन आग लगे उस वक्त को . . .वह नहीं हाथ आता।" एक दूसरी का दुख-सुख बांटती स्त्रियां जय कौर को धैर्य दे कर उठ खड़ी हुईं। जीते को देखकर उसके कलेजे में कुछ टंडक-सी पड़ी। उसे बुलाकर बगल में ले लिया। वह अभी नादान था, कमसिन था। रोती हुई औरतों को देखकर वह भी रोने लगा था।

"पुत्र ! तू रोया तो नहीं था?"

"ऊं-हूं !"

"भाभी को तंग तो नहीं किया? रोटी तो समय पर खा लेता था?"

"हां , . .।" लड़के ने आंखें उठा कर सिर हिलाया। "बेबे . . .मेरे लिए क्या लायी है?"

"बहुत कुछ।" कहकर जय कौर ने फिर पूछा, "रात को पैर धो कर बिस्तर में लेटता था?" लड़के से बातें करके उसने अपने दुख को भुलाना चाहा।

"हूं . . .बापू के पास ही सोता था।"

"तो . . .क्या तू अपनी भाभी के पास नहीं सोता था। बेचारी अकेली सोती होगी?"

"नहीं तो . . .उसके पास तो बाई नौहणा सोता था !"

गुरबंश ने चौंक कर उनकी ओर देखा। बगल में बैठा हुआ जीता उंगलियों में फंसाये

हुए लाल धागे से खेल रहा था। सास ने गुरबंश की ओर देखा, लेकिन बोली कुछ नही! इसके बाद जय कौर ने भी लड़के से कुछ नहीं पूछा। जीता भी इधर-उधर की हांक कर खेलने चला गया।

14

ओलों जैसी ठंडी रात में केवल रजाई में दुबका पड़ा था। पूस का अणु-अणु जैसे बर्फ बना हुआ था। अकेले में उसे पहाड़-सी रातें राक्षस की तरह डराती थीं। कभी-कभी उसे रात के गहरे अंधकार में दीवारें और कोठे छलावे की भांति भेस बदल-बदल कर भयभीत करते। बाहर निकलता, तो सूने-सूने खेत उसके दिल को दहलाते। अंदर वाली दालान में रजाई किनारों से कस कर सोता, फिर भी न जाने सरदी कहां से अंदर घुस आती और शरीर को ठंडक चढ़ जाती। उसका अंग-अंग नीला हो जाता। दीपो तीन-चार दिन में चक्कर मार जाती। वह वही पुरानी बात छेड़ देती और बीते वक्त को कोसती। केवल के अंदर मंद होती हुई आग फिर से धधक उठती। केवल उसके चेहरे की ओर देख कर चुप हो जाता। पहली रात का लगभग एक पहर गुजरा था। केवल को जोर-जोर से दरवाजे पर धक्के लगते सुनायी दिये। उसने रजाई मुंह से निकाल कर, कान लगाकर ध्यान से सुना। सचमुच कोई उसी का दरवाजा खटखटा रहा था।

"कौन है, भई?"

"मैं हूं . . .।" बाहर से ठंड में सिकुड़ी हुई नारी की आवाज आयी।

केवल के कान दालान में ही हिम हो गये। उसे पहले संदेह हुआ, फिर यकीन आ गया कि हो न हो दीपो है। उसने रजाई में से निकल कर जल्दी से नंगे पांव ही जाकर दरवाजे की चिटखनी हटायी और दरवाजा खोल कर झांका। खिली चांदनी में उसने देखा, हाथ में एक थैला लिये और बच्चे को कंधे से लगाये दीपो खड़ी है। अंदर आ कर, दीपो ने अपने ऊपर वाला खेस उतार कर चारपाई पर रखते हुए लड़के को रजाई में लिटा दिया।

"तू, इस वक्त?"

"जब परमात्मा ही बुरा वक्त दिखलाने पर आ जाय, तो उसके आगे कोई जोर चलता है !" दीपो की आवाज में कुछ कटुता-सी थी। केवल ने ठिठुरते हुए बाहर चूल्हे के पास से दियासलाई की डिबिया ढूंढकर चिराग जलाया।

"तेरा क्या इरादा है, मैं तो आज सब निपटा कर आयी हूं।"

केवल ने दीप जला कर सलाई को जोर से झटक कर बुझा दिया और नीचे फेंक दिया। दीपो ने पहले की भांति सख्त और कसे हुए स्वर में कहा, "मैं नहीं उस घर में रह सकती। दोहाई है तेरी, चाहे 'ची' कर, चाहें 'पी' कर , मुझे यहीं पड़ी रहने दे।"

"आज, बात क्या हो गयी आखिर . . .?"केवल ने कांपते हुए घुटनों पर रजाई कसते हुए थरथराती हुई आवाज में पूछा।

"बात क्या होनी थी . . .। जब भी कोई बात होती है, सारा परिवार कुत्तों की तरह पीछे पड़ जाता है . . मैं तो सोचती थी, चलो, दब-घुट कर दिन गुजर जायेंगे, लेकिन वेलोग कहां जीने देते हैं? उनके विचार में तो मैं 'कानी' हो गयी, मुंह भी नहीं खोल सकती।"

केवल टकटकी लगाये दीपक की पीली लौ की ओर निहारता रहा, जिसका धुआं सीधा छत से जाकर टकरा रहा था।

"लो, वह तो किसी के काबू में ही नहीं है। तब तो जोर-जोर से रो-कलप रहा था। अब जब भी बोलता है, तो जैसे सीधा जालंधर से बोलता है। कहता है, तब तो मुंह उठा कर निकल गयी थी, फिर कुतिया तुझे रखा क्यों नहीं किसी ने . . .!"

"तुझे कहना चाहिए था कि तुम्हारी मां मर गयी थी तब।" केवल को भी क्रोध आ गया।

"जब यूं कहती हूं तो फिर मिर्चें लगती हैं?"

बीरा हल्का-सा हिला। दीपों ने उसे कस कर अपनी छाती से लगा लिया। दिल में एक टीस-सी उटी, लेकिन किसी-न-किसी तरह उसे अंदर ही अंदर दबा लिया। दीपो ने लड़के को रजाई से अच्छी तरह ढ़ांपते हुए, फिर कहा, "कपड़े पहन ले मुझे नहीं रहना अब यहां, तू अब 'चिड़चिड़' न करना—भई, यह होता है, वह होता है। अगर तभी से कुछ किया होता, तो इस बदनामी से तो बच गये होते !"

केवल को चुप बैटा देखकर दीपो अंदर की बात तो समझ गयी, लेकिन उसने कुछ और कहने की बजाय उससे सहानुभूति दिखाना ही उचित समझा —

"उट, पहन ले कपड़े, अब बातों में समय बर्बाद न कर !"

"पर जायेंगे कहां?'

"जाने को क्या है, जहां बैट गये, वही घर बन जाता है; आदमी में हिम्मत हो तो, उजाड़-बीरान स्थान पर भी घर खड़ा कर लेता है . . .तू अब गिनतियों में न पड़ . . . जब बात जरा टंडी पड़ जायगी, तो हम फिर यहीं आ जायेंगे। तब कोई मुआ बोलेगा भी नहीं, और सगे-सबंधियों की तरह मिलेंगे . . .तू देख लेना !"

केवल ने दीपो की ओर देखा। उसे किसी उत्साह-उमंग में आयी देखकर उसे ढांढ़स हुआ। वह हाथ से रजाई पर बनाई हुई चिड़ियों-फाख्ताओं पर हाथ फेर रहा था। "उट भी खड़ा हो, मुझसे बदले न ले?" दीपो ने उसे कंधे से झकझोरा, "ला कहां हैं तेरे कपड़े? मैं ढूंढ़ कर दूं !" दीपो ने खुद दीया उटा लिया। वह ढूंढ़ कर झोली वाला पाजामा ले आयी। केवल पाजामा ले कर पहनने लगा। उसने कुर्त के ऊपर से काली जैकट पहन ली। संदूक खोल कर जो थोड़ा-बहुत रुपया-पैसा था, जैकेट की अंदर वाली जेब में डाल लिया। जब वह डिब्बियों वाला कंबल ऊपर डाल कर, हाथ में गंडासा उटाये हल्के-से खांसा, तो दीपो को देखकर, उसकी कटी हुई काली मूंछें मुस्करा पड़ीं। थैला केवल ने खुद उटा लिया और आगे-आगे चल पड़ा।

सर्दियों की रात होने के कारण, गली में कोई परिंदा भी पर नहीं मार रहा था। उनके कदमों की चाप टंडी-टंडी थी। जब वे मुड़ कर 'बिशने' के घर वाली गली में दाखिल होने लगे, तो बिशने के दरवाजे पर एक काला पिल्ला 'चूं-चूं' करता, किवाड़ों की दरारों में पंजे फंसाता हुआ, कांप रहा था। पिल्ले ने चांदनी रात में आदमियों को देख कर 'चूं-चूं' करना बंद कर दिया। पर उसकी कंपकंपी दुगुनी-चौगुनी हो गयी। दरवाजे के पास गुजरते हुए, उन्होंने भीतर किसी के खांसने की आवाज सुनी। उसके बाद आवाज ऊंची उटी, "पहले बहिन-देने, पतंदरों को रख लेते हैं, बाद में जमाइयों को कोई संभालता नहीं।"

केवल ने गर्दन को हल्का-सा घुमा कर दीपो की ओर देखा। वह उसके पीछे-पीछे आ रही थी। तभी दूर से लंबे घने बालों वाला भंगियों का कुत्ता भागता आया और उन पर टूट पड़ा। उन दोनों के अंदर जैसे बर्फ जम गयी हो। केवल ने कुत्ते को हटाने के लिए हुश-हुम किया, लेकिन कुत्ता जैसे कह रहा हो, "तुमसे क्या लेना है मुझे।" वे दोनों थोड़ा बच-बचा कर आगे निकल गये। वे शोर से डर रहे थे। खामोश चांदनी रात में केवल उनके कदमों की आहट सुनायी दे रही थी। चांद आकाश के बिल्कुल बीच में था। और दो घंटों में, वह नजरों से गायब हो जाने वाला था।

वे चौड़ा रास्ता पार कर के, 'लताले वाले' राह पर पहुंचे। अचानक केवल वहीं का वहीं ठहर गया। उसे लगा जैसे मटमैली चांदनी में कुछ उसकी ओर बढ़ता चला आ रहा है। उसने ध्यान से देखा, कोई आदमी सिर पर कुछ उठाये, उनके पास से होता हुआ रास्ते से जरा हट कर आगे निकल गया था। केवल ने उसे पहचान लिया। वह 'बाकीमानों' का सीता था। सीता कोई चार-पांच कदम ही गांव की ओर गया होगा कि, हवा में फैलती कच्ची शराब की बदबू केवल और दीपो के नथुनों से आ टकरायी। इससे केवल को विश्वास हो गया कि वह सीता ही था। मटमैली चांदनी में सीते को तेज-तेज़ चाल देखकर वह दीपो की ओर देख कर मुस्करा पड़ा। दीपो ने भी दूर निकल गये सीते की ओर देखा। केवल चलते-चलते रुक गया। बगैर कुछ बोले, वह खाली पड़े खेत में से होता हुआ गेहूं वाली नाली में हो लिया। ओस से उनके जूते गीले होने लगे। एक-दो बातों को छोड़ कर, उन्होंने कोई खास बात न की। तभी चलते-चलते केवल एक झटके से रुक गया। निकट से फर्राटा-सा सुन कर, उसे भय ने घेर लिया। उसने गौर से देखा, तो पाया खेत में एक भैंसा तेजी से सरसों चर रहा था। केवल के मन में अचानक कोई ख्याल आया और उसने पीछे मुड़ कर दीपो से कहा—

"जरा, तेज-तेज कदम उठा !—ला बीरे को मुझे पकड़ा दे।"

"नहीं, तू चलता चल।" दीपो हिम्मत से तेज चलने लगी।

केवल उसकी चाल को ध्यान लगा कर देखने लगा। उसने सहसा ऊंची आवाज में पूछा— "काकू कहां है?"

"घर में ही है !"

"घर में ही . !"

"हां। . . .फिर हमें वापस गांव ही तो आ जाना है, बात के जरा ठंडी पड़ते ही।"

केवल ने कोई उत्तर नहीं दिया। 'लताले' के बाहर से, खेतों में से होते हुए, वे सीधे 'जुगेड़ियों' की ओर हो लिये। रास्ते में वे फंस सकते थे। पल-पल में केवल का ध्यान गांव में सोये पड़े लड़के की ओर चला जाता । दीपो दबी आवाज में बातें कर रही थी और केवल उसकी बातों का जवाब 'हां, हूं' में ही दे रहा था।

"क्या बात है? तू ऐसे क्यों बोल रहा है, जैसे तुझे बुखार चढ़ा हो !" केवल के शोकाकुल चेहरे की ओर देखते हुए दीपो ने थोड़ा गिला करते हुए कहा।

"कुछ नहीं . . .।"

"नहीं . . .क्यों ! बात जरूर है कोई !" चलती जा रही दीपो ने आंखें फाड़-फाड़ कर इधर-उधर देखा। स्तब्ध माहौल में महज उनके जूतों की 'टप्प-टप्प' ही सुनायी पड़ रही थी।

"मेरा मन ठीक नहीं है . . .!" केवल ने धीरे-से कहा।

"तेरी यही बात मुझे बुरी लगती है।" दीपो ने थोड़ा रंज दिखलाते हुए कहा, "लोगों से हमें क्या लेना है? पहले तू मुझे यह बता कि कोई किसी को मुफ्त में कोई चीज देता है क्या?"

"दे कहां से? अगले का अपना ही पूरा नहीं पड़ता।"

केवल हल्की-सी आवाज में हंस पड़ा। फिर उसने डूब रहे चांद की चांदनी में दीपो के चेहरे को देखा। उसे गुस्से को कोई आसार दिखायी न दिया, लेकिन उसे लगा जैसे दीपो बिफरी हुई भैंस की भांति नथुने फरका रही हो।

"तू तो यूंही नथुने फरकाने लग जाती है!" केवल ने जरा दुखी हो कर, आवाज बिगाड़ कर कहा।

"तू तो, मैं कहती हूं, केवड़ा बांट रहा हो जैसे। दो घंटे गुजर गये खेतों में खाक छानते हुए, तूने टूटे घड़े-सा मुंह बना रखा है। नहीं बना रखा तो बता?"

"अच्छा !" उसकी ओर देख कर हंस दिया। "तो यह बात है।" केवल रुक कर, उसकी ओर देखने लगा, "मैंने सोचा, न जाने कौन-सी बिजली आन गिरी है, जो बिच्छू की भांति उछले जा रही है।" फिर उसने निकट हो कर उसके कानों में कुछ खुसुर-पुसुर की, "मेरी मोरनी ! मैं तो इस बात से डरता हूं कि कहीं आस-पास में कोई सुन न ले। और कोई झंझट ही न खड़ा हो जाय, बेकार ही।" उसने गौर से दीपो की ओर देखा तो उसके अंदर एक झरना सा फूट पड़ा और उसने दीपो को कस कर अपने सीने से लगा लिया, "मेरी बिल्ली, तू गुस्सा न किया कर !" केवल के बोल भीगे-भीगे से थे।

"चल, आगे चल, तेज-तेज ! ऐसा न हो कि खेतों में ही दिन चढ़ आये।" लेकिन ज्यों ही उसके कदम आगे बढ़े, सामने कुछ देख कर वह सहसा ही घबरा कर केवल के साथ सट गयी और डर से कांपती हुई मुर्गी की तरह सिमटती गयी।

"क्या बात है . . .?" केवल ने उसे संभालते हुए पूछा।

"वह देख . . .!" दीपो ने डरी-सहमी-सी आवाज में पूर्व की ओर उंगली उठायी। केवल को सामने कुछ नजर न आया। जोर के तूफान में किसी कमजोर पिल्ले की तरह उसे कांपती देख कर केवल दहल गया था।

"वह देख . . .!" दूर खड़े एक डरावने आकार की ओर उसने केवल का ध्यान आकर्षित किया। केवल ने खिलखिला कर हंसते हुए दीपो को बाजू से पकड़ कर घसीटते हुए ऊंची आवाज में कहा—

"ओह, धत्तेरे की ! वह तो झाड़ी है . . .यूं ही डरा दिया मुझे भी।"

"नहीं तो . . .। लगता है कोई छलावा है!"

"नहीं, छलावा काहे को है!" और फिर वह उसे बांह से घसीटता हुआ आगे चल पड़ा।

कांपती हुई दीपो अभी भी भौंचक्की सी उस डरावने आकार की ओर देखे जा रही थी। केवल उसका भय दूर करने के लिए उसे गांव की एक घटना सुनाने लगा।

"छलावा ऐसा नहीं होता। वैसे, जो कभी घर से बाहर न निकला हो, वह झाड़ी को देखकर ही डर जाता है। हम तो आधी-आधी रात तक खेतों को पानी लगाते रहे हैं, हमें तो ससुरा छलावा कहीं नहीं मिला।"

"कहते हैं, वह तो मिनटों में भेस बदल लेता है।"

"बदलता तो है! —देखा नहीं . . .एक बार अपने गांव के बाकीमानों के बूढ़े किशने को 'आंडलू' वाले रास्ते में मिला था। इधर उन दिनों झाड़ियां-सी बहुत हुआ करती थीं। उसके हाथ में लाठी थी . . .कहीं तो वह भैंसा बन जाय, कहीं कुत्ता, कहीं बैल . . .। बूढ़ा वैसे ही उल्टे पांव लाठी चलाता आया . . .घर जाकर ऐसा बुखार चढ़ा कि फिर उठ ही न सका . . .। कई लोग कहते हैं कि होता कुछ नहीं है, आदमी के मन के डर के सिवा!"

दीपो की कंपकंपी जाती रही, लेकिन अभी तक भी वह इर्द-गिर्द संदेह-भरी नजरों से देख रही थी। मन में 'वाहेगुरु-वाहेगुरु' करने लगी । उसे विश्वास था कि इस तरह से डर कम लगता है। जब वे नहर के नजदीक आये, तब केवल ने दीपो को बाजू से पकड़ कर रोक लिया। केवल की निगाहें सीधी नहर की पटरी पर लगी थीं।

"क्या है?" दीपो उसके कान में फुसफुसायी।

"लोग हैं!" केवल ने आहिस्ता से उसका हाथ कस कर कहा।

"तो अब फिर . . .?" दीपो की सांसें तेज-तेज चलने लगी थी।

केवल ने दीपो को हाथ दबाकर बैठ जाने के लिए संकेत दिया और स्वयं भी आहिस्ता-आहिस्ता ओस-भीगे गेहूं के खेत में बैठ गया। चाहे उसके पास गंड़ासा भी था पर साथ में स्त्री होने के कारण उसके हाथ-पैर बेकार हो गये थे। पटरी पर अजनबी आदमियों को देख कर, उनके हाथ जैसे हिम हो गये। गीली-गीली घास में बैठे-बैठे उनके बोलने की 'गुन-गुन और फिर साईकिल के 'छनकने' की आवाज आयी। दीपो ने मौन नजरों से केवल की ओर देखा, बोली कुछ नहीं। वे उन आदमियों के आगे निकल जाने की प्रतीक्षा करने लगे। उन आदमियों को वहीं आसन जमाये बैठे देख कर उन्होंने, खुद रास्ता बदल कर निकल जाना चाहा। जब उन्होंने पश्चिम ओर की मुंडेर पर से होते हुए नहर पार करने की बात सोची, तब वे अजनबी आदमी भी पश्चिम वाली मुंडेर पर से ही चलने लगे थे। और केवल को यह भी लगा, जैसे खड़े होकर वे उनकी ओर देख रहे हों। केवल वहीं का वहीं छुप कर बैठ गया और उसने दीपो को भी हाथ से खींच कर बिठा लिया। कुछेक क्षणों के लिए वे हांफते-से रहे। फिर केवल ने सिर उठा कर देखा, पटरी सुनसान पड़ी थी। धीरे-धीरे खरगोश-चाल चलते, वे पटरी पर आ गये।

"ये मुए आधी रात को क्या करते फिरते हैं?" दीपो ने पटरी कें दोनों ओर देखते हुए, आहिस्ता से केवल से पूछा।

"हम क्या कर रहे हैं?" केवल की महीन-सी हंसी निकली, "बलैकिए बलूकिए होंगे!"

जुगेड़िओं के निकट पहुंच कर केवल ने सुखदेव के पास जाना ही उचित समझा। नहर

बंद होने के कारण फासला कम हो गया। उनको चक्कर काट कर नहीं आना पड़ा। वर्षा की तरह गिरती हुई ओस साथ-साथ कोहरे में बदलती जा रही थी। ध्यान देने पर कोहरा घास-फूस और गांव के गोबर के ढेरों पर दिखायी पड़ता था। चांद कब का लोप हो चुका था। पराये गांव में वे सांस रोके 'बच-बच' कर चल रहे थे। क्या पता कोई 'चोर-चोर' का शोर ही मचा दे। सुखदेव का घर बाहर वाली गली में ही था। दीपो को उसने बाहर बेरी की आड़ में खड़ा कर दिया। अंधेरा होने के कारण आदमी आसानी से नजर नहीं आता था। दबे-पांव जा कर उसने भीतर के घर का दरवाजा खटखटाया। कितनी ही आवाजें देने पर दरवाजे पर धक्के मारने के बाद, दरवाजे के अंदर की ओर से बुआ का सरदी से ठिठुरा हुआ बोल सुनायी पड़ा।

"अरे ! कौन है?"

"मैं हूं बुआ, केवल।"

बुआ के मन में संशय चक्कर काटने लगा। उसका दिन-प्रतिदिन जर्जर होता जा रहा शरीर कांपने लगा। अंदर से चाबी ला कर उसने दरवाजे का ताला खोला और केवल के सिर पर प्यार से हाथ फेरा।

"तू? इस वक्त? . . .खैर तो है?"

"खैर ही है।" केवल ने अंदर दाखिल होते हुए बुआ के चेहरे की ओर तिरछी नजर से देखा। बुआ का झुर्रियों-भरा चेहरा आशंका से काला हो रहा था। "गोरी के पास से मोमनाबाद होते हुए आया है क्या?"

"अरे पगले, जरा जल्दी चलना था। यह कोई टैम है? रास्ते में तो ऊद-बिलाव लगे रहते हैं!"

"खाने-पीने के बाद मेरा यहां आने को मन कर गया।"

"कहीं लड़-झगड़ कर तो नहीं आया?"

"नहीं तो . . .बाई कहां है?"

"बाहर वाले घर में सोया पड़ा है?" खूंटी से लटक रही लालटेन की रगड़ खाता हुआ घोड़ा, ऊपर उठता हुआ, केवल ने सुना। दियासलाई के घिसने की आवाज आयी, लालटेन भड़कने लगी। चिमनी ऊपर उठाते हुए बुआ मुंह में बड़बड़ायी, "क्या हो गया, औंतरे की?"

"बुआ मैं बाहर वाले घर को चलता हूं!"

"अरे बैठ जा न, मैं चाय बनाती हूं, दो घूंट पी ले। ऊपर से गजब की सरदी पड़ रही है।" बुआ ने चूल्हे की ओर जाते हुए कहा।

"अगर जरूरत हुई तो वहीं मंगवा लेंगे" कहते हुए केवल बाहर वाले घर की ओर चल दिया। बुआ उसे "अरे रुक न . . .रुक न" कहती रह गयी। दीपो को लेकर केवल ने बाहर वाला घर जा खटखटाया। दो-तीन आवाजें लगाने के बाद, अंदर से सुखदेव ने जांच-पड़ताल करके दरवाजा खोला। पीछे एक औरत को खड़ी देखकर, सुखदेव की आंखें खुली की खुली रह गयीं।

"ठीक हो सुखदेव?" जब उसने जानी-पहचानी आवाज सुनी, पीछे मुड़कर अच्छी तरह

देखा, तो उसे विश्वास हो गया। वैसे ही चुपचाप अंदर जा कर उसने लैंप जलाया। बगैर चौखटे के दीवार में लगी खिड़की में लैंप के पास कई पुस्तकें पड़ी थीं। दालान की एक ओर भूसा पड़ा था । दूसरी ओर खूब पेट-भरे पशुओं की सांसें फुफकार रही थीं। दीवार के साथ खड़ी चारपाई सुखदेव ने बिछा दी। दीपो लड़के को लेकर रजाई में बैट गयी। सुखदेव ने केवल वाला कंबल लपेट लिया।

"आधी रात कहां घूम रहे हो?" वैसे सुखदेव को संदेह हो गया था।

"जब परमात्मा ही धक्के खिलाये !" दीपो ने बीरे को रजाई में लिटा दिया था। सारी राह लड़के को कभी दायें कंधे से तो, कभी बायें कंधे से लगाकर ढोते-ढोते वह थक गयी थी। केवल ने शुरू से लेकर सारी कहानी सुखदेव को बता दी। दीपो सुखदेव के गंभीर होते, और अधिक गंभीर होते चेहरे की ओर निहारती रही। जब सारी बात खत्म हो गयी, तो केवल ने सुखदेव से जैसे फरियाद की, " . . .अब बात यह है कि हमें कलकत्ता जरनैल के पास भेज दे; जैसी कमायेंगे, वैसी खा लेंगे।"

सुखदेव उसकी तरह कंबल में सिमटा बैटा, घुटनों पर टोड़ी टिकाये सोच रहा था। उसके चाचे का पुत्र जरनैल कलकते में ड्राइवर था। सुखदेव यूं ही कभी पशुओं की ओर, तो कभी उन दोनों के चेहरों की ओर देख लेता।

"क्या कहता है तेरा मनीराम!" केवल ने रजाई में टेढ़ा होते हुए सुखदेव के गंभीर चेहरे की ओर देखते हुए कहा। सारी राह सरदी ने उसके अंग सिकोड़ कर रख दिये थे। दीपो का दिल डूब रहा था कि सुखदेव कभी उनके पक्ष की बात नहीं करने वाला ! जब रास्ते में केवल ने सुखदेव का नाम लिया था, तब उसने उसे बहुत रोका था, लेकिन केवल ने उसकी एक न चलने दी। सारी बातों में कलकत्ता जाने वाली बात दीपो को धैर्य बंधाती थी। अब सुखदेव को गिनतियों में पड़ा देख कर, उसका दिल डूब-डूब जा रहा था। सुखदेव ने जरा जोर से खांस कर कहना शुरू किया—

"जरनैल के पास भेज भी देंगे; वह रख भी लेगा; वह हमें इनकार नहीं करेगा . . . काम पर भी लगा देगा . . .।" उनकी ओर देखते हुए सुखदेव ने लैंप की धीमी-सी रोशनी में उनके चेहरों के प्रभाव देखना चाहता था। पर रोशनी उनके चेहरों पर नहीं पड़ रही थी . . ."न जाने, अगला ड्राइवर कब बनाये, क्योंकि ड्राइवर-वर्ग में बदले की भावना बहुत प्रबल होती है। उन्होंने खुद तीन-तीन, चार-चार साल खाल उतरवायी होती है। नये आदमी को ड्राइवर कहां बना देंगे इतनी जल्दी? चाहे जरनैल कहने को कुछ भी कहता रहे, पर मैं तो उनकी रग-रग को जानता हूं, कहना कुछ,करना कुछ!—सौ की एक कि भाई को भाई जल्दी काम नहीं सिखलाता . . .।" सुखदेव की बातें सुन कर, उन दोनों की आंखों में शोक की परछाइयां उतर आयीं। दीपो ने मुंह पर हाथ फेरा और उसके भीतर से एक आह-सी निकल गयी। केवल ने रजाई में टांगें लंबी करके एक अंगड़ाई ली, जैसें उसका सारा शरीर बिखरता जा रहा हो, टूटता जा रहा हो !

"घर का आदमी तो तीन महीनों में बना सकता है ड्राइवर !"

"बना तो सकता है . . .लेकिन बनाता नहीं है न। उसे क्या पड़ी है कि मुफ्त का नौकर

हाथ से जाने दे। कम-से-कम दो साल लगवाये बगैर घर का आदमी भी स्टेयरिंग सीधा करना नहीं सिखलाता, सिखलाने की बात तो दूर रही . . .। वह गाड़ी ही नहीं पकड़ाता। टायर धोने पर लगाये रखेगा ! बाकी दो साल वे तुझे देंगे भी कुछ नहीं। रोटी-कपड़े पर काम करवायेंगे, तो यह पीछे क्या खायेगी ! हैं . . .? वैसे तो अगले चार-चार साल घसीटते हैं, पर दो साल भी कोई थोड़ा समय तो नहीं होता। . . .जब खाने वाला परिवार हो, तो दो दिन भी काटने मुश्किल हो जाते हैं !"

"फिर . . .?" केवल की आवाज कमजोर-सी थी।

"फिर क्या . . .! तुम्हें सलाह करनी चाहिए थी, पर सलाह भी क्या करते। यह बात गांव में रह कर ठीक बैठती थी या तूने गाड़ी चलाना सीखा होता। मुझे पता है कि तू तो खेती का काम भी भुलाये बैठा है !"

"चल, न सही ड्राइवरी, मेहनत-मजदूरी करके दिन काट लेंगे।" दीपो का मन रहट की खाली हंडियों की भांति झटपट उल्टा मुड़ने लगा था।

"तो फिर कोई और राह निकाल !" केवल को शरीर यूं हो गया जैसे उसमें से सारा लहू बह गया हो, "अब गांव तो वापस जाने से रहे।"

"अभी गिरे हुए बेरों का कुछ नहीं बिगड़ा; किसी को खबर भी नहीं हुई होगी . . ! छोड़ मैं आता हूं, दिन चढ़ने से पहले-पहले !"

यह बात सुन कर दीपो का दिल बैठने लगा, उसने लड़खड़ाती हुई आवाज में कहा—

"गांव अब क्या लौटना है? वहां तो अब अस्थियां ही जायेंगी।"

"दलीप कौरे ! तू मेरी बात मान ! . . .जरा सयानी बन ! मैं चाय बना लाता हूं हम साझे किल्लों पर अभी जा पहुंचते हैं !" सुखदेव ने उठकर कंबल को अपने ऊपर ठीक-ठीक किया और छड़ी उठाते हुए उन्हें समझाता हुआ, वह बाहर की चटखनी लगा कर चला गया। केवल नजरें नीची किये बैठा था, "पैसे के बगैर, फूटी कौड़ी के भी नहीं।" उसने जब यह सोचा, तो उसके दिमाग को टंड चढ़ने लगी। केवल को चुप्पी धारण किये देख कर, दीपो ने हल्की-सी आवाज में कहा, "इसने तो वही कह दिया, जो मैं कहती थी!" उसे केवल की खामोशी, उसकी काहिली देख कर दुख होता था, पंरतु केवल बोला नहीं।

थोड़ी देर बाद सुखदेव चाय ले आया और अपने साथ पड़ोस के छात्र दलजीत को साइकिल पर तैयार कर लाया। जब कामरेड ने उन्हें चलने के लिए कहा, तो दीपो ने टूटे दिल से कह दिया:

"मैंने तो जाना नहीं, यह बेशक मुड़ जाय लाख बार !"

"तू कहां जायगी?"

"मांग कर खा लूंगी, लेकिन उस नामुराद घर में कदम नहीं रखूंगी। जले-मुंह वालों के माथे नहीं लगूंगी।" यह कहते-कहते उसका दिल भर आया था। ऊपर वाले कपड़े से आंखें पोंछती वह लगातार शोकमय बातें करती रही।

"पागलपन न कर, दलीप कौर। जैसे तू सोचती है, दुनिया उस तरह की है भला—आप कलकत्ते जाने को तो कहे जा रहे हो . . .वहां भी सारे ऐरे-गैरे, नत्थू-खैरे ही बसते हैं।

उनके दिमागों में भूसा भरा होता है। तुम्हें वे लोग आदर-सम्मान से नहीं देखेगे . . . .। फिर एक बात और भी है, पीछे वालों को चिंता होगी। वे थाने में रिपोर्ट लिखयेंगे, साथ ही डाके का केस बनायेंगे। चैन से फिर भी नहीं रह सकते तुम। बात कचहरी तक पहुंचेगी, बेइज्जती अलग से होगी।" सिरहाने के नीचे से जर्सी निकाल कर बांहों में डालते हुए, उसने कहना शुरू किया, "पीछे लड़का भी छोड़ आयी हो, तेरा जी उसके बगैर नहीं लगेगा। दूसरे, वह बच्चा उपेक्षित रह जायगा—आप दोनों अपनी खातिर इतने लोगों का वध क्यों कर रहे हो? . . .कुछ तो सोचो?" मौजे पहन कर, बूटों के फीते कस कर सुखदेव साइकिल लेने चला गया। उसे इस बात की अधिक चिंता थी कि ये अनजान, अजनबी जगह पर रहेंगे कैसे? पुलिस पूछताछ जरूर करेगी और इससे सुखदेव की बदनामी हो सकती है। आखिर सहमति के पश्चात, केवल और दीपो सुखदेव के साथ चल पड़े। लेकिन वे अधमरे कुत्ते की भांति टांगे घसीट रहे थे। सुखदेव ने केवल को साइकिल चलाने के लिए कहा, तो केवल ने रूखाई से सिर हिला दिया, "मुझमें तो भाई जान ही नहीं रही। मुझ से साइकिल नहीं चलेगी !"

"अच्छा ! तू दलजीत के पीछे बैट जा।"

सुखदेव ने दीपो को अपनी साइकिल के पीछे बिठा लिया। अभी दो-ढाई घंटे का अंधेरा शेष था। दिन चढ़ने से पहले वे गांव पहुंच सकते थे। दीपो अनमनी-सी बैट तो गयी, पर उसका सारा शरीर ही मिट्टी होता जा रहा था।

रास्ते की टंडी-शीत रेत पर टायरों की धसर-धसर ही सुनायी पड़ती थी। उन चारों के मुंह इस तरह बंद थे जैसे सिले गये हों। सुखदेव रात के समय, सुनसान राह में खुद ही ज्यादा बातें नहीं करना चाहता था। दीपो और केवल के तो जैसे औसान ही मारे गये थे। इस बार वे घर से इतनी हिम्मत करके चले थे कि वे कभी गांव नहीं लौटेंगे। नहर का पुल आ गया था। धारों का शोर जोरों पर था। न जाने क्या हुआ, दीपो छलांग मार कर साइकिल से उतर गयी और सुखदेव ने साइकिल रोकते हुए पूछाः

"क्या बात है?"

"कुछ नहीं, तू जा।" वह पटरी पर बनी पक्की सड़क पर हो ली।

सुखदेव को कुछ नहीं सूझा तो उसने दबी आवाज से केवल को रोक लिया। जब उसे सारी बात का पता चला, तब उसके भीतर से जैसे कुछ निकल कर हवा में समा गया था। "जा वापस ले आ !"

केवल ने दौड़ कर चुपचाप चली जा रही दीपो की बांह पकड़ ली। दीपो ने बांह छुड़ाते हुए कहा, "मुझे छोड़ दे केवल। तू जा, बस ! हां !"

"क्यों पागलपन कर रही है?"

"मैं तो पागल हूं, तू सयाना है, सयाना बना रह।"

दीपो वैसे ही क्रोध और दुख से भरी चलती गयी। केवल उसके साथ-साथ चलता गया। आज पहली बार वह मिनमिनाया था।

"तू अब जायगी कहां?"

"कहीं भी जाऊं ! तुझे क्या? और कोई सहारा नहीं देगा, तो यह नहर तो मुंह नहीं मोड़ेगी।"

"यूं मर कर क्या किसी को जीत लेगी?" केवल ने फिर उसकी बांह पकड़ कर, उसे रोक लिया, "तू पैरों पर पगड़ी रखवा ले बेशक . . .।"

"केवल . . .!" वह सिसकती हुई उसकी ओर देखने लगी। उसकी चुंधियाई हुई आंखों में, एक रोशनी चमक रही थी—"मैंने तुझे . . .।" उसकी लंबी आह एक चीख-सी निकल गयी।

सुखदेव उनके पीछे थोड़े फासले पर आ गया था। केवल के मन में कोई ख्याल आया। सिर हिला कर उसने अपने दिल को ढाढ़स बंधाया।

"चल, मैं भी तेरे साथ ही चलता हूं। तेरे साथ ही मरूंगा, जहां तू मरेगी।" फिर उसने पीछे की ओर सिर घुमा कर सुखदेव से कहा, "बाई ! तू मुड़ जा, हम खुद ही चले जायेंगे।"

चांदनी रात में इर्द-गिर्द से पाला चढ़ रहा था। नहर के पानी के ऊपर से आती हुई ठंडी हवा आरी की तरह चीर रही थी। सड़क के दूसरे किनारे सरसराते हुए सरकंडे सीटियां बजा रहे थे और भय पैदा कर रहे थे।

"क्यों पागलपन कर रहे हो। . . .तुम्हें क्या पता है? यह दुनिया बहुत खोटी है!"

कोई बात नहीं, जैसे-तैसे होगा,काट लेंगे।" केवल का बोल ऐसे लगता था, जैसे उसका गला भारी हो गया हो।

उन्हें आगे ही आगे बढ़ते देख कर, सुखदेव ने साइकिल मोड़ कर, उनके सामने लगा दी, "दलीप कौरे! तू समझती क्यों नहीं ! मुझे आपसे सहानुभूति है, लेकिन लोगों की समझ में अभी यह बात नहीं आयगी। सभी ऐसा चाहते हैं, परंतु दूसरे पल ही बदल भी जाते हैं!" वे सुखदेव की बातों की ओर कोई ध्यान दिये बगैर आगे चलते गये। उनकी जिद देखकर, सुखदेव ने अपनी दाढ़ी खींचते हुए गुस्से से कहा, "मेरी दाढ़ी में क्यों धूल डाल रहे हो? कल को तुम्हें कोई कुछ नहीं कहेगा, सारे यही कहेंगे कामरेड तू तो सयाना था, तूने क्यों नहीं समझाया।"

"तो बाई, तुझे अपनी इज्जत की पड़ी है?" केवल को जैसे मनों क्रोध चढ़ गया। उसकी आंखों में सुर्खी उतर आयी।

"इज्जत की पड़ी क्यों न हो, जब हम रहते ही ऐसे सामाजिक ढांचे में हैं। दूसरे अगर तभी बात बन जाती, तो उसका कोई मुकाबला ही नहीं था। अब तो डाका बनेगा . . . तुम्हारी क्या सलाह है ? . . .दिन चैन से नहीं गुजरेंगे। दस दिन भी नहीं बीतेंगे . . . थाने-कचहरियों में खींच-तान होगी—सोच लो!"

"चल यार!" केवल ने उसे साइकिल तेज करने के लिए कहा। उसने फिर साइकिल तेज चलाना शुरू कर दिया। वे भी छोटी-छोटी बातें करने लगे।

"बात क्या हो गयी बाई ?" दलजीत ने पीछे गर्दन घुमा कर झिझकते हुए धीरे से पूछा।

'हैं?"आगे से कोई जवाब न आने पर उसने दोबारा पूछा।

"बात कुछ भी नहीं, बाई . . .। जब किस्मत बुरी हो तो!"

"यह तेरी घरवाली है?"

"हैं ! नहीं तो . . .हां।" केवल की आवाज कांपने लगी। "यार ! तू कुछ न पूछ, बस साइकिल चलाता चल।"

मुर्गे के बांग देते-करते, वे बडूंदी के परिसर में प्रवेश कर गये। अब मुश्किल यह बनी कि दीपो को किस युक्ति से घर छोड़ कर आया जाय। सर्दियों के दिन होने के कारण, साढ़े चार बजे के करीब, अभी कोई करवट भी नहीं ले रहा था। लोग घरों के अंदर रजाइयों-गुदड़ियों में गहरी नींद सोये पड़े थे। दीपो का गांव में आ कर फिर जी घबराने लगा था। उसने फिर जिद की। उसे लगातार रोते देख कर, सुखदेव ने एक बार झिड़की भी दी। दीपो उसके साथ गांव की ठंडी शीत और सुनसान गलियों में डगमगाते कदमों से चलती गयी। दीपो का जी चाह रहा था कि ऐन गांव के बीच में खड़ी हो कर दोहत्थड़ें मार-मार कर रोये-पीटे और चिल्ला-चिल्ला कर कहे कि उसके साथ यह जग-जहान से अलग और नयी बात हुई थी ! सुखदेव थोड़ा पीछे हट कर खड़ा हो गया था। दीपो ने पहले तो टूटे-से हाथ से किवाड़ टटोले, जो रात के ही बंद किये हुए वैसे के वैसे पड़े थे। उसने आहिस्ता-आहिस्ता किवाड़ अंदर को धकेले। कीकर के पुराने भारी फट्टे चूं-चूं करके चीखने लगे। दीपो ने अंदर दाखिल होने से पहले, गली में गौर से देखा। कामरेड उसे दूर खड़ा एक वृक्ष जैसा लगा या जैसे अंधेरे में कोई खंभा खड़ा हो। उसके भीतर से एक आह निकल गयी और वैसे ही अधखुले किवाड़ों के साथ सिर टिका कर वह खड़ी हो गयी। फिर डर कर उसने पीछे देखा। उसे महसूस हुआ, जैसे उसके पीछे कोई खड़ा हो। सुखदेव का आकार उसे वैसे का वैसा ही दिखायी दे रहा था। और फिर कुछ सोच कर वह आंगन में चली गयी।

15

दीपो ने केवल से दूर-दूर रहना चाहा, लेकिन वह अधिक समय तक दूर न रह सकी। उस रात की घटना के बारे में, किसी को कुछ पता न चला। आधी रात को उठ कर कैलू ने दीपो की चारपाई खाली देखी थी, लेकिन उसने उठकर दरवाजे को देखने का कष्ट नहीं उठाया था। दोनों का गुजारा न हो सका, इसलिए फिर पहले की तरह घी-शक्कर हो गये। कैलू को जैसे ही कोई बरगला देता, वह घर में क्लेश खड़ा कर देता। आस-पड़ोस वाले और अन्य उंगली देने वाले, कैलू को भड़काते रहते। दूसरी ओर दीपो भी कैलू को "कुत्ता भौंकता है" कह देती थी। कभी-कभी वह कैलू की गालियों के बारे में सोचती "गालियों से भला क्या होता है? जब कभी हाथ उठायेगा, तब देखा जायेगा।"

और फिर एक दिन कैलू ने तंग आकर दीपो पर हाथ उठा दिया। बात यूं हुई कि दीपो केवल की ओर गयी हुई थी। फागुन का आखिरी पक्ष था। दिहाड़ीदार खेत में सरसों तोड़ रहे थे। शाम की चाय को देर हो गयी। कैलू हार कर खुद ही खेतों से चाय लेने आया। दीपो को घर में न पाकर वह क्रोधित हो उठा। चाय चिंती ने बना दी। जब वह चाय लेकर चलने लगा, तब दीपो भी आ गयी।

"आ गयी, खाक छान कर?"

"कैसी खाक . . .?"दीपो ने तीखे स्वर में कहा, "काम से गयी थी।"

"मुझे मालूम है कुतिया, जहां तू जाती है खाक छानने को। बड़ी चतुर बनती है, कमजात!"

"मुंह संभाल के बात कर . . .!" दीपो कैलू की लाल-लाल, छोटी-छोटी आंखें देख कर कांप गयी, लेकिन उसने झुकना अपना अपमान समझा।

"फिर क्या कर लेगी तू बहन-देने की !"

"जो कुछ होगा, करूंगी . . .!"

"तो ले कर, तेरी मां की . . .।" कैलू एक मोटी-सी गाली देते हुए उसकी ओर तेजी से लपका,"छुट्टड़ कहीं की? तुझे मैं जानता हूं, भली-मानस को।"

"वह कमजात कंजरी नहीं है!" दीपो ने बुढ़िया की ओर इशारा करते हुए जरा गिले और दुख से कहा, "जिसने इस तरह का दोगला . . .।" बात अभी उसके मुंह में ही थी कि कैलू ने पैरों में से गुरगाबी खोल कर, जोर से उसकी पीठ पर दे मारी।

"अब मार . . .।" दीपो ने भी आगे से गुरगाबी हाथ में उठाकर कहा।

"हो खड़ी जरा, तेरी बहन की . . .।" गाली देते हुए कैलू ने चाय वाला डोलचा नीचे रख दिया। उसके कमजोर से शरीर में क्रोध की ज्वाला भड़क उठी। उसने दौड़ कर दीपो को चोटी से जा पकड़ा और मुक्कों-घूंसों से अपना गुस्सा उतारने लगा। दीपो ने चुपचाप मार नहीं खायी। जितना उससे बन पड़ा उसने किया। उन्हें आपस में उलझे देखकर, चिंती भागती हुई आयी। पड़ोसियों ने आकर उन्हें छुड़वा दिया।

कैलू गालियां देता चाय ले कर चला गया। दीपो ने गुस्से में आ कर पड़ोसियों को खूब जली-कटी सुनायी। वह जानती थी, ये लोग पीठ पीछे कैलू को उकसाते थे। पड़ोसी गरम-गरम 'श्लोक' सुनकर बड़-बड़ करते हुए चले गये--"चलो ! इससे क्या बात करनी, इसने कोई शर्म-लाज रखी है। कंजरों के साथ तो कंजर होना!" लेकिन इतना कुछ होने के बावजूद दीपो केवल से टूटी नहीं।

. . . और बंतो की स्थिति दिन-प्रतिदिन कमजोर होती गयी। अजैब को अफीम खाने की लत पड़ गयी थी। उसका अकेले खेतों में काम करने को, बिलकुल जी नहीं चाहता था। बच्चे अभी छोटे थे। पिछले वर्षों में कमाई न होने के कारण, उनके सिर पर कर्ज हो गया था। उधार देने वाले हर रोज दरवाजा खटखटाते थे। आखिर तंग आकर बंतो ने एक किल्ला जमीन गहने रख कर कर्ज उतार दिया। चलो। कोई बात नहीं ! बच्चे जब अपने पैरों पर खड़े हो जायेंगे, तो खुद ही छुड़वा लेंगे। गुजारा चलाने के लिए वे आधी बंटाई पर जमीन लेते थे। अच्चरवाल वाला काका उनके यहां शाम सवेरे चक्कर मारने लगा था, पहले लोगों ने सोचा, शायद उसे पैसे लेने हो , लेकिन जब अजैब का हल अच्चरवाल वाले काके की जमीन में जुता हुआ देखा, तो लोगों ने अलग अलग अनुमान लगाये । काके के बंडूदी में तीन किल्ले थे । खेत का चक्कर मारने गये केवल ने, जब देखा,तो उसने नजदीक जाकर पूछ लिया– "क्यों बाई! अच्चरवालिए की जमीन ठेके पर ले ली?

"हां ? . . ठेके पर ही समझ!" जैबे ने हल रोक कर उसकी ओर देखते हुए कहा।

ठेकेपर ही समझ, माने!" बात केवल की समझ में न आयी।

"हूं . . . !" कह कर जैब ने फिर हल चलाना शुरू कर दिया।

और फिर लोगों ने देखा, काका कई-कई दिन जैबे के घर रोटियां तोड़ता रहता। बाहर लोग बातें करते, "भई, बात यूं है; देख, जाट को काबू किया हुआ है या नहीं—साली का जवाब नहीं, जाट को ऐसा चाट पर लगाया कि फिर हिला तक नहीं।"

दूसरा बात को और चबा कर जोर से सिर हिलाता।

"अरे, यह भी कोई बात है! बाई, पैसे दे कर तो, कोई किसी भी थान पर उंगली रख सकता है।"

"पर यहां तो अच्चरवालिया साला, मैले लट्टे पर ही मर मिटा।"

"अरे, जा यार । तू तो बिल्कुल बुद्धू है! . . .वैसे तो कहेगा कि मेरे बराबर वकील नहीं ठहर सकते। पर यहां तेरे दिमाग ने बात नहीं पकड़ी।"

"पकड़ी क्यों नही, यार!" पहला ऊब कर कहता।

"अरे छोड़ यार! जितना गुड़ डालोगे, उतना ही मीठा होगा न? और यहां तो खुली छुट्टी है !"

"हां! यह बात तो है ही !"

"बस फिर ! तेरी भी वही बात है कि तीन आने का बछड़ा और तेरह आने का रस्सी।" बाकी की टोली खिलखिला कर हंस पड़ी। बंतो अपने बारे में तरह-तरह की बातें सुनकर तड़प उठती। वह बिना सोचे-समझे गली में खड़ी होकर, गालियां देने लगती और

बांहें उछाल-उछाल कर मन की भड़ास निकालती।

"इनके मर जायें नये खसम! . . .जो मेरी बातें करेगा उसका मैं तो पेट फाड़ कर रख दूंगी। मेरे मुंह पर कहे कोई ! मुओं की अपनी स्त्रियां यूं ही सौदे करती होंगी !"

बंतो खीझती-चिढ़ती रहती, लेकिन जो कुछ वह करती, उसे लोग इधर-उधर से सूंघ लेते। मजबूरियों के दो पाटों के बीच आकर उसे कुछ याद न रहता। एक दिन सवेरे-सवेरे, मुंह-अंधेरे वह गली वाले दरवाजे पर झाड़ू लगा रही थी। गली के पूर्व के तरफ से किसी के पैरों की भारी चाप सुनायी दी। उसने 'गुन-गुन' सी सुनी, जैसे कोई मंत्र पाठ करता हुआ चला आ रहा हो। जब पदचाप और निकट आयी, तब बंतो ने ऐनकबाज सरदारे को पहचान लिया। साठवें साल में, खूब भरी-भरकम देह, तन पर कच्छा और लाहौरी कुर्ता पहन सरदारे ने ऐनक उठाकर धूल उड़ाती बंतो की ओर देखा और वह पीछे ही रुक गया।

"आ जाओ भाई जी ! निकल जाओ।" बंतो ने झाड़ू देना बंद करके हंस कर कहा।

सरदारा उसकी ओर वैसे ही ऐनकें उठा-उठा कर देखता हुआ चलने लगा।

"तू यह सवेरे-सवेरे अमृतबेला में क्या मिट्टी उड़ाने लगी है। लोग इस समय परमात्मा का नाम लेते हैं और तू आने-जाने वालों पर धूल डाल रही है?"

"आ जाओ, तुम्हारी पोशाक मैली नहीं होती।" बंतो ने छोटा-सा घूंघट निकाल कर कहा, "मुझे पता है जी . . .जो तुम गुरुद्वारे नाम जपने जाते हो!"

"तो और क्या . . .?" सरदारे ने बंतो की हल्की-सी हंसी को देखकर हैरानी से पूछा।

बंतो ने पहले तो उसकी ओर देखा, फिर हंस पड़ी।

"खैर है, महंतिन बहुतेरा तीन मेल का खाती है !"

सरदारे को जवाब में कुछ न सूझा। उसने मुंह को बना-संवार कर कहा—

"घर से दुखी बंदे को तो डेरे ही जाना होता है, जबकि तेरे जैसी तो पहचानती ही नहीं।"

"ले . . .ले . . .भला यह भी कोई बात है!"

तभी पीछे से किसी के खांसने की आवाज आयी, तो सरदारा, ऐनकों को हल्के-हल्के हाथ से ठीक करता और खांसकर गले को साफ करता हुआ आगे निकल गया।

बंतो फिर झाड़ू देने लगी। वह इन दिनों, अत्यंत दुखी थी। घर का नोन-तेल ही ठीक से नहीं चल रहा था। पैसे की तंगी से बचने के लिए, बच्चों के मुह से छीन कर बूंद-बूंद दूध बेच देती थी। सरदारे के पास से पांच-पांच रुपये करके कितने ही पैसे पकड़ चुकी थी, जिनके वापस करने का प्रश्न ही पैदा नहीं होता था ! सरदारे के पुत्र और बहू बंतो की तरफ कड़वी नजरों से देखने लगे थे। बहाने सरदारे की बड़ी बहू बंतो पर व्यंग्य कसती, "बेबे! आज-कल के मर्दों को कोई लाज-शर्म नहीं है। खाने-पीने के पीछे स्त्रियां भी इज्जत मिट्टी में मिलाती हैं।"

बंतो का वश नहीं चलता था। वह दांत भींच कर उनकी जला देने वाली बातें सुनती रहती, पर आगे बढ़कर कोई उत्तर न देती। वे समझ जाती, "भाइयों-खानी, दोषी है, इसीलिए तो होंट सी कर रखती है। हम भी इसे डांटा करेंगी, यह भी क्या जानेगी? बड़ी चतुर बनी

फिरती है . . .कुतिया ने सारा गांव ही खुरच कर खा लिया है।"

एक दोपहर को बंतो उनके कुंए पर ही कपड़ें धोने चली गयी। साथ ही सरदारे की बड़ी बहू भी धोने आ गयी। सरदारे ने दबी जुबान से, बहू को यह कह कर हटा दिया कि वह शाम को धो ले पर बंतो को मुलाहजेदारी के कारण वह मना नहीं कर सकता था। सरदारे के घर में कलह शुरू हो गयी। सरदारे ने पुत्रों के सामने अपनी लाज बचाने के लिए बात को इस तरह घुमायाः

"मैंने कहा, बेचारी धूप में कपड़े धो रही है। शाम को जरा ठंडा हो जाने पर धो लेगी।" सरदारे की घर वाली संत कौर ने कह-सुन कर बात खत्म की। लेकिन उसी दिन बंतो के घर जा कर, उसे ऐसी जली-कटी सुनायी कि जैब और बंतो को कुछ बोलने की हिम्मत न पड़ती। जाते-जाते संत कौर ने चीख कर कहा—

"अरी, तू हमारे बूढ़े को उंगलियों पर न नचा। हम हैं घर-गृहस्थी वाले लोग। तू बूढ़े को कंजर न बना। घर में बहू-बेटियां हैं, कल को उन पर हाथ डालेगा। तूने तो किसी की लाज न रखी। शर्म उतार कर रोटी के साथ खा ली है।"

बंतो चुपचाप रोटी पकाती, उसके कटु बोल सुनती रही।

"यह जोड़े तेरे आगे हाथ।" बसंत कौर ने उसके आगे झुककर हाथ जोड़े, "तू हमारे घर में पैर न रखना। हम बीबी, तुझसे हारे। तुझे तो मिल जायगा कोई ज्यादा खिलाने वाला।"

बच्चे टकटकी लगाये संत कौर के सुर्ख हुए चेहरे को देख रहे थे। रोटियां थाप रही बंतो ने बुढ़िया के चेहरे को देखा। उसकी सांस उखड़ी हुई थी, गर्दन की नसें उभरी हुई थीं। जब संत कौर बोलती ही गयी तो बंतो ने अपने खप्पर जैसे मुंह को मरोड़ा।

"माई तू अपने घर जा ! यहां ज्यादा गला फाड़ने की जरूरत नहीं . . . मुझे तो सारा जहान जानता है, लुच्ची-लंफगी को . . .साथ ही तुझे भी . . .।"

"अच्छा तो . . ." संत कौर पूरा जोर लगा कर चिल्लायी, "मुझे तो गला फाड़ना बताती है। इलाके भर में जो तेरी शोभा है, वह तुझे नहीं याद !"

"मेरी तो जूती के भी याद नही!" बंतो ने वैसे ही कहा, "जा तू ! आयी है बड़ी उपदेश देने वाली। लोगों से झाग गिराती, लड़ने को आती है। तू अपनी मैली झोली पोंछ . . . बातें करती है, न तीन में न तेरह में, न टोकरी के बेरों में।"

"अरी, मैंने तुझसे क्या लेना है, जली-भुनी औरत से . . . ।"

संत कौर ने उसकी ओर अपने दोनों हाथ उठाये, "तेरे जैसी कमजात तो . . .! और बांहें हिलाती वह बड़े मिजाज से मुड़कर चल गयी। पीछे बंतो कितनी ही देर तक मन की भड़ास निकालती रही !

16

"चाची, राजी-खुशी है न?" नौहणे ने चौके की ओर चोरी-चोरी ताक कर जय कौर के पास बैठते हुए जरा गिले से पूछा। गुरबंश राख से बर्तन मांज रही थी।

"क्या खुश हूं, नगिंदर ने तो कुछ ज्यादा ही खुश कर दिया है।"

बुढ़िया को उदास देखकर नौहणे ने भी वैसा ही मुंह बना लिया।

"कुछ पता चला?"

"कुछ पता नहीं . . .अब तो उसी पर भरोसा है।" एक टंडी सी आह भर . . .जय कौर ने ऊपर की ओर देखा। काफी समय तक नौहणा चुपचाप बैटा रहा। कभी-कभी नगिंदर की चर्चा कर लेता। आखिर उटते हुए उसने कहा, "चाची, कोई काम-धंधा हो, किसी चीज की जरूरत हो, तो मुझे बताना !"

बुढ़िया ने हल्की-सी आंखें खोल कर नौहणे के चेहरे की ओर देखा। सुंदर, शरीफों जैसा उसका चेहरा देखकर उसे जीते की कही बात याद आयी। उसका मन फीका पड़ गया।

"कोई नहीं पुत्र। पहले भी तो तुझसे ही कहते रहे हैं, अब भी तुझी से कहेंगे।"

"मुश्किलें और मुसीबतें आदमी पर ही तो पड़ती हैं, चाची ! मिलकर काटेंगे, यही तो पड़ोसी का फर्ज होता है।" नौहणे ने फिर चौके की ओर देखा। गुरबंश नजरें नीची किये चूल्हे में से राख निकाल कर तसले में डाल रही थी।

"शाबाश पुत्र! शाबाश! जीता रह। परमात्मा तुझे लंबी उमर दे। तूने कह दिया, इतना ही बहुत है।"

और नौहणा हौले-हौले पैर रखता बाहर वाले दरवाजे की ओर चला गया। उसने मुड़ कर सेहन में नजरें घुमायीं। भायं-भायं करता खाली सेहन, उसे वीराने-सा लगा और फिर वह तेजी से गली का दरवाजा पार कर गया। सगे-संबंधी ढ़ांढ़स देने आये, तो गेबा भी अपनी घरवाली के साथ आया। बंशो बहन को देख कर, दौड़ कर उसके गले लग गयी। अग्निशिखा जैसी बहन को तड़पते देख कर उसका दिल भी दुखी हो गया। वह उसे कितनी ही देर तक धैर्य बंधाती रही, इस पर गुरबंश और भी ज्यादा सिसक-सिसक कर रोने लगी। गेबा मौसी के पास बैटा ढ़ांढ़स बंधाने वाली बातें करता रहा।

"अब फिर बंशो?" नलके पर पानी भरने आयी साली को, नहा रहे गेबे ने रोआंसा-सा मुंह बनाकर पूछा।

"मुझे भला क्या सोचना है ! तुझे दिखायी दे ही रहा है।" और गुरबंश आहिस्ता-आहिस्ता पानी भरने लगी।

"क्या नगिंदर की कोई उम्मीद है?"

"बेबे तो कहती थी !"

चुनरी से शरीर पोंछते हुए गेबे ने कहा, "मुझसे तो मौसी कुछ और ही कह रही थी!"

"क्या कहती थी?" नलका चलाना बंद करके वह उसकी ओर देखने लगी। एक पल

बाद आह भर कर फिर पानी भरने लगी। जब उसने बाल्टी का कुंडा पकड़ कर खींचा, तब गेबे ने दबी जबान से कहा, "गुलजारा जब भी कहीं मिलता है तेरे बारे में जरूर पूछता है !"

गुरबंश एक लंबी सांस छोड़ कर दबे-पांव चल दी, उसने जवाब नहीं दिया और न पहली बात ही फिर से पूछी।

"गुस्सा न करना।" गेबे ने कलियोंवाला कुर्ता पहनते हुए गुरबंश की मौन रजामंदी देख कर काली गुरगाबी में पैर फंसाये—"नगिंदर की प्रतीक्षा तू लाख बार कर . . .पर वह . . .।" उसके मुंह की ओर देख कर एक पल रुकते हुए उसने ताक में रखी चमकती चेन वाली घड़ी उठाते हुए कहा, "तेरी पहाड़ जैसी लंबी उमर भला कैसे कटेगी? अगर आदमी को फूल-सी जवानी धूल-मिट्टी में ही गंवानी हो, तो फिर हुआ, न हुआ, सब बराबर है . . .अगर तेरा मन मानता हो तो . . .।" गेबे ने चेन का खटका बंद करते हुए, उसकी तरफ देखा। गुरबंश उत्तर दिये बगैर चौके की ओर चली गयी।

उसकी बहन चारपाई पर उसकी सास के साथ बैठी जवान बहन के बारे में चिंता करती हुई अपना खून पानी कर रही थी। गुरबंश ने पानी की बाल्टी रख कर बर्तनों वाली टोकरी में से पतीला उठाया और चाय बनाने लगी। दोपहर के खाने के लिए आटा गूंथने की परात उठा कर, मिट्टी के घड़े में से आटा निकालते हुए उसके कानों में बहन की आवाज पड़ी।

"देखो, मौसी जी। इस बेचारी ने खाने-पहनने का चाव भी पूरा नहीं किया। यह तो भरे बर्तन की भांति वैसे पड़ी है . . .हम अपने-अपने घर सुख शांति से रह रही हैं, लेकिन इसकी ओर देख कर दिल डूबता है . . .तुम सयानी हो। वह नादान है, सौ गलती हो उससे, आपको तो छिमा करना है।"

गुरबंश का हाथ छलनी चलाते-चलाते रुक गया। छाती में से एक लंबी आह निकली। लगा जैसे उसे अपने-आप में एक घुटन-सी हो रही है।

"बेटी, मैं तो दिन-रात इसी चिंता में सूखती जा रही हूं।" गुरबंश की सास ने माथे पर हाथ मारा। उसे सुख-शांति से रह रही हैं वाली बात बुरी भी लगी थी, लेकिन वह कुछ सोच कर मौन रही।

गुरबंश कितनी ही देर तक सोच में डूबी रही।

रात को बहन ने गुरबंश को सयानी सलाह दी— "गुरबंशो! अपने घर में ही रहते हैं . . . अब तेरे सिर पर तेरा मर्द नहीं है।" बुढ़िया ने उसकी ओर रुखाई से देखा, लेकिन उसने उसका ध्यान अपनी तरफ खींचते हुए फिर कहा, "वह न जाने, कहां भटकता फिर रहा है? . . . शायद . . .? तूने न जाने कैसे काले लेख लिखवाये हैं, बाकी तो अपने-अपने घरों में, सोने में खेल रही हैं, एक तू ही अभागिन है !"

दूसरे दिन चलने से पहले गेबे ने फिर मौका पा कर अपनी बात की, "बंशो ! मैं कहता हूं कि तू अपनी अनमोल जवानी गिद्धों के खाने के लिए न छोड़।"

टकटकी लगाये गुरबंश उसकी ओर देखती रही, लेकिन भीतर की बात को कोई शब्द न दे सकी। गेबा और उसकी घरवाली जरूरत पड़ने पर मदद के लिए कह कर चले गये।

गुरबंश बहन को आंडलू के रास्ते तक छोड़ने आयी। बहन उसे विदा होने तक समझाती रही। गुरबंश उन्हें छोड़ कर मुड़ी, तो नौहणे के बारे में सोचने लगी।

नौहणे को भी गुरबंश के रूखे व्यवहार से बेचैनी बनी हुई थी। उसने बहाने-बहाने से उसके घर के आगे चक्कर भी मारे, "क्या पता, मेहरबान हो ही जाय। इसकी बहन की...,सयाने यूं ही तो नहीं कहते, औरत का मन चंचल होता है।" लेकिन गुरबंश और भी बुरी उलझन में फंसी हुई थी। जब जीते ने बेबे से एक स्वाभाविक बात कही थी, तभी से गुरबंश के कान खड़े हो गये थे और बाहर-भीतर आते-जाते उसने लोगों को अपने बारे में बातें करते हुए सुना था। एक दिन सामने के घर की भिन्नतो भजनो के साथ बातें कर रही थी। जब गुरबंश टोकरा लेकर उधर से गुजरी तो भिन्नतो चौंक कर माथे पर बल डाल कर खड़ी हो गयी। वह अभी पंद्रह-बीस कदम ही गयी थी कि उसके कानों में सायं-सायं सी हुई। लग रहा था, वे उसे सुना कर बातें कर रही थीं।

"अरी, इन्होंने तो यहीं अमरीका बना रखा है।" गुरबंश के पैर अपने आप ही रुक गये; सिर पर वजन था। आंखों में से गर्म-गर्म तपिश-सी निकली, दिल वापस चले जाने को हुआ, पर धीरे और धीरे होते हुए पैर पीछे मुड़ने से संकोच कर गये— "बुआ!" भिन्नतो ने भजनो के कंधे पर हाथ मार कर चुनरी मुंह पर करते हुए गुरबंश की पीठ की ओर देखा, "आदमी की कोई खबर नहीं मिली, जिंदा है या मर-खप गया और यह है कि . . .! देख ले, तेरे सामने एड़ियां कितना चमका कर रखती है !"

"अरी, ताने भी तो फिर तेरे-मेरे जैसी ही कसती हैं!' भजनो ने दांत निकाले।

गुरबंश का तो गुस्से से तालू जल उठा। मन हुआ टोकरा नीचे पटक दे, लेकिन पटक न सकी। परंतु इस बार हिम्मत करके उसने पीछे मुड़ कर देखा। दूर से ही जलती हुई आंखें देख कर, भिन्नतो से पल्ला छुड़ाती हुई भजनो मुड़ कर चल दी, "अरी बहन ! मेरा तो बहुत काम पड़ा है।" और चोर नजरों से गुरबंश की ओर देखती भजनो गली का मोड़ मुड़ गयी।

दूसरे ही दिन भिन्नतो गुरबंश को गांव के बाहर गोबर के ढेरों के पास मिल गयी। उसे देख कर भिन्नतो ने मुंह फेर लिया। गुरबंशो के दिल में टीस उठने लगी। उसने मुंह फेर कर जाती हुई भिन्नतो को आगे से रोक लिया।

"माथा टेकती हूं, बेबे जी !" भिन्नतो चलते-चलते रुक गयी। गुरबंश ने ऊपरी मन से उसके घुटनों को छुआ।

"गुरु भला करे; परमात्मा और ज्यादा दे। सिर का साईं जीए, दूधों नहाओ, पूतों फलो।" भिन्नतो ने मीठे स्वर से आशीष देते हुए कहा, "और सुना, मेरे देवर का कोई चिट्‌टी-पत्र नहीं आया?" और उसने चुनरी के साथ मुंह रगड़ कर पोंछते हुए चलने के लिए एक कदम आगे बढ़ाया।

"कहां !" बंशो के दिल में आया, "इस मुई कमजात को यह पूछूं कि तब क्या बक रही थी?" पूरी ताक-झांक से उसके मुश्की रंग को देखते हुए बंशो ने कहा, "चिट्‌टी-पत्री क्या आनी थी, औंतरे दुनियावाले तो वैसे ही जीने नहीं देते !"

भिन्नतो उससे पल्ला छुड़ाना चाहती थी; गुरबंश की बात सुनकर ठंडी-बर्फ हो गयी,

लेकिन अपने पैर जमाने के लिए हल्की-सी आवाज में कहने लगी, "ले बहन लोगों की तो बात ही छोड़ दे!

"कोई कसर छोड़ी है!" बंशो को गजब का क्रोध चढ़ गया और उसके गोरे चेहरे का मांस तन गया, "इस गांव की औरतें तो खुद पाक-पवित्र बनती हैं। ये पता नहीं कि खुद तो घर में दो-दो खसम रखे बैठी हैं।" उसने बात उसे लगा कर कही थी।

भिन्नतो उसे क्रोधित होते देख कर हल्के-से हंसती हुई चली गयी।

"कोई नहीं! इसमें तेरा क्या जाता है !"

"कोई नहीं क्या? जिस किसी भी मेरे बाप की जोरू ने बात करनी है, मेरे मुंह पर करे। मुंह न फाड़ कर रख दूं तो कहना। कमजातें कहीं की . . .!"

भिन्नतो को गुस्सा तो बहुत आया, लेकिन झगड़ा होने के डर से और दोषी होने के कारण चुप रही। फिर भी जाते-जाते कहने लगी, "ताली तो बहन दोनों हाथों से बजती है। ऐसे ही तो कोई नहीं कहता, हां!" और यह कहती हुई भिन्नतो काफी दूर चली गयी।

बड़े रास्ते के नजदीक पहुंच कर भिन्नतो के कानों में बंशो की गरजती हुई आवाज पड़ी, "अपना नहीं पता ! घर में छोकरियां क्या गुल खिल रही हैं।"

भिन्नतो उसकी ओर से मुंह फेर कर घर की ओर चल दी। अगर वह सामने से वार रोकती, तो बात बढ़ जाती, पर बढ़ी नहीं।

गुरबंश कुछ लोगों के कारण और कुछ घर में अकेली चर्खी की तरह इधर-उधर घूमती रहने के कारण बहुत दुखी रहती थी। सास ने खुलकर तो कुछ नहीं कहा था, लेकिन उसके बात करने के ढंग से दूरी लगती थी। नौहणे को बुलाने का मन भी होता पर गेबे की ओर से किये गये संकेत, ऊपर से नगिंदर की नाउम्मीदी, उदास पतझर-सी खामोशी उसे भीतर जलाती थी। गोबर-कूड़ा करते हुए, एक दिन पीछे आ रहा नौहणा हल्के से खांसा। बंशो जान-बूझ कर अनजान बनी रही, जैसे उसे कुछ पता ही नहीं था। लंबी गली में आगे-पीछे ताक-झांक करके नौहणे ने दबी-जबान व्यंग्य किया, "क्या बात है, अब बोलना भी गंवारा नहीं?"

वह चुपचाप चलती गयी। पास से कोई बरसीम का गट्ठर उठाये गुजर गया। नौहणे ने फिर पूछा, "यूं, यारों के साथ दगा करना अच्छा नहीं होता।"

गुरबंश फिर भी नहीं बोली। वह दिल ही दिल में कुढ़ती थी, "इस बेशर्म को तो लोगों की भी जरा भर शर्म-हया नहीं।" और वह तेज-तेज कदमों से, कुछ अंतर रखने के उद्देश्य से, हिम्मत करके चलने लगी।

"या तो तब पतंदर से दिल न लगाती . . .!" नौहणे ने तेजी से उसके साथ मिलते हुए कहा। उसका जी चाहा बंशो की बांह पकड़ ले, जो भला-बुरा होगा, देखा जायगा।

"जरा मुंह संभाल के बोल, कैसे भौंकता चला जा रहा है, हरामजादा।"

"अच्छा . . .!" नौहणे ने लंबी काजल-अटी आंखें दिखायीं, "अब यार हरामजादा हो गया? अब और किसी को गांठ लिया होगा?"

"ज्यादा बोलने की जरूरत नहीं।" डरती हुई गुरबंश ने इर्द-गिर्द देखा। नजदीक कोई

नहीं था।

"अब मैं ज्यादा बोलने लग गया हूं। तब तो खसम को बुला-बुला कर अंदर ले जाती थी। कोई बात नहीं। . . .तेरी मां की . . .। तुझे दिखाऊंगा, दिन में तारे !"

"गाली मत निकाल . . .यह जूती दिखाई देती है न !" वह घबरा गयी थी। "कंजर कहीं का . . .घर में ही हर एक पर रौब डालने की आदत होगी तेरी ! मैं तो दाढ़ी उखाड़ कर हाथ में दे दूंगी।" वह शुक्र-शुक्र करती चली जा रही थी कि किसी ने उन्हें आपस में उलझते हुए तो नहीं देखा लिया।

"जब पतंदर को इशारों से बुलाती थी, तब नहीं था बदमाश?" कहते हुए नौहणा जरा पीछे ही खड़ा हो गया। गुरबंशो कूड़ा ढेर पर फेंक कर दूसरी गली में से होती हुई घर को चली गयी। नौहणे के मन में क्रोध की एक लहर-सी उठी। शोक और उदासी ने उसे चारों ओर से घेर लिया। गुरबंश का भी घर पहुंचने तक दिल धक्-धक् करता रहा। टोकरा नांद में फेंक कर वह चारपाई पर लेट गयी।

एक दिन संध्या के समय जय कौर ने बाहर से आकर चारपाई पर बैठते हुए 'बुरे समय' की बात की।

"ले यह भी कोई जीना है दुनिया में !" वह चारपाई पर बैठी सहसा अपने-आप ही बोलने लग पड़ी, "हर किसी के सिर में राख पड़ी हुई है !"

"क्या बात हो गयी?" गुरबंश सेहन में झाड़ू लगा रही थी।

"बात क्या होगी? अच्छा-भला नौहणा लोगों को गालियां देता, शराब पीकर गलियों में गिरता फिर रहा है।"

"शराब कहां से?" दीवार के साथ बोरी बिछा कर बैठा पट्टी लिखता जीता बोला, "उसने तो गोलियां खायी हुई हैं। नशेवाली।"

"अरे तुझे कौन बताता है?" जय कौर ने उसकी ओर गर्दन घुमायी। उसके कानों में पड़ी बालियां डोल रही थी।

"संधूरे से लेकर खायी हैं।" जीता हाथ हिला-हिला कर बातें कर रहा था।

"अरे जा, हट।" जय कौर उसे छोकरा समझ कर उसकी ओर हाथ हिला कर होटों से पुच्च की आवाज निकाल कर हंसी, जैसे लड़का बेसिर-पैर की बातें कर रहा हो।

"तुझे बड़ा पता है? यहां बैठे-बैठे मारे जा रही है।" लड़का गुस्से से बोल पड़ा।

"और तूने जैसे गांव का चौकीदारी ले रखी है? बातें देखो इसकी।"

बंशो का चेहरा उतर गया। उसने एक लंबी आह भरी और धरती को निहारती धूल उड़ाती रही।

"पगड़ी गले में पड़ी-है।" जय कौर ने माथे पर हाथ मारते हुए बात शुरू की, "कड़ी जैसा सुंदर जवान है, चादरे का एक पल्लू कीचड़ से लथ-पथ था। जूतों पर इतना-इतना गोबर! लोग तालियां बजा-बजा कर हंस रहे हैं !"

उसकी सास कितनी ही देर तक माथे पर हाथ मारती रही। पल भर को गुरबंश खुश हुई, "अच्छा हुआ! कमबख्त ने तब इज्जत उतारने में जरा भी संकोच नहीं किया।" फिर

आह भरते हुए, उसे नौहणे के नशे की गोलियां खाने वाली बात पर पश्चाताप भी हुआ। हर रोज कोई-न-कोई आकर बताता कि नौहणे ने आज यह किया, वह किया। गुरबंश अपने दिल को लाख समझाती पर मन जबरदस्ती नौहणे की बुरी हालत के बारे में अफसोस करने लग जाता। परंतु उस दिन वाली बात याद आते ही वह होंट अटेरने लग जाती। यूं ही एक दिन वह उदास सोचों में डूबी हुई थी कि भप्पो हंसती-हंसती आ गयी। गुरबंश को लगा, वह खामखाह हंसे जा रही है।

"भाभी, तुझ एक हंसी वाली बात बताऊं।" भप्पो हंसी से लोट-पोट होती, उसके पास बैट गयी। बात करते हुए वह ऊंची-ऊंची हंस रही थी, "तुझे पता है न भंगियों का बूढ़ा मर गया। भाभी, आज तड़के उनकी लड़की विलाप करती आ रही थी। अम्मां सद्दी बाहर निकल कर कहने लगी,"अरी हट, तू यह क्या कहे जा रही है ?"

"तो मैं और क्या कहूं?" भप्पो ने मजहबियों की नकल ली।

"अम्मां सद्दी ने झिड़कते हुए कहा, 'अरी हट, कुत्ती कहीं की! तू कह-मेरे राजे बावला! मुझे रखने वाले बाबला !"

"ले भाभी! उसे चुड़ैल ने आज यह चांद चढ़ाया है।" भप्पो कितनी ही देर तक इसी बात पर हंसती रही, लेकिन गुरबंश किसी और ही प्रवाह में बह रही थी। और ऐसे ही सोचों के प्रवाह में बहती हुई बंशो को एक दिन गेबे ने आ कर फिर भंवर में फंसा दिया।

"बंशो! तू क्यों सोने जैसी जवानी बरबाद कर रही है?"

"तुझे क्यों इतनी चिंता खाये जा रही है?" उसने दूध जैसे सफेद कुर्ते-चादर में निखरे युवक को गौर से देखते हुए पूछा।

"और किसे खाये?" गेबे ने यूं ही आंगन में मथनी की तरह घूमते हुए चादर ऊपर उटा कर कमर के इर्द-गिर्द लपेट ली "जिसने जवानी का मजा लेकर देखा होता है, कदर भी उसी को होती है। मुझे तो यह डर है कि तेरी खाने –पहनने की उम्र यूं ही गुजर जायगी।"

"पर मैं इनका क्या करूं?" उसने घर की ओर इशारा करते हुए, उसके उस्तरे से चिकने किये गालों और खतों वाली दाढ़ी को देखते हुए कहा, "शायद वही जीवित हो . . .!"

"जीवित होता, तो अब तक कोई खबर तो आती। अगर चीनियों के कब्जे में हुआ, तो फिर कौन-सा वे उसे जिंदा छोड़ देंगे। अपनों ने कौन-सी कसर उटा रखी होगी?"

गुरबंश नजरें नीची किये सोचने लगी।

"देख ले . . .। वक्त बीत जाने पर पछतायेगी!"

बिना जवाब दिये वह काम-काज निपटाने में जुट गयी। गांव को लौटते हुए गेबे ने फिर कहा, "अगर सलाह बन गयी . . .।" और बाकी बात उसने गुरबंश के कान में ही कही। गुरबंश को कुछ सूझ नहीं रहा था कि क्या कहे ! सर्दियों के दिन छोटे होने के कारण काम जल्दी खत्म नहीं होता था। बहुत सवेरे उटने पर भी काम जमा पड़ा रहता। इतवार वाले दिन उसने काम शीघ्र समाप्त कर लिया। सूर्य ने बाहर जमा हुआ कोहरा अभी तोड़ा ही था। सवेरे-सवेरे वह जीते को लेकर बरसीम काटने चली गयी। एक छोटा-सा गट्टा

बांध कर जीते के सिर पर रख दिया। वह जीते को सारी राह तेज-तेज चलने के लिए कहती रही, क्योंकि केश धोने के बाद बाकी काम इकट्ठा हो जाना था। गांव के निकट उन्होंने कुछ लोग जमा हुए देखे। कभी-कभार हंसी ऊंची उठती। बच्चे 'हो-हो' करके लंबी-लंबी आवाजों से शोर मचा रहे थे। ज्यों-ज्यों गुरबंश भीड़ की ओर बढ़ती गयी, शोर और नजदीक आता गया। दूर से उसने देखा कि नौहणे के गले में पगड़ी पड़ी हुई है। धूल से अटी पापलीन की नीली चादर उसकी गुरगाबी में अटक रही है। वह कभी रास्ते के इधर और कभी उधर लुढ़क जाता था। बच्चे उसके पास खड़े थे। बाकी भीड़ पंद्रह-बीस कदम पीछे खड़ी उसके डगमगाते कदमों और लड़खड़ाती हुई जबान पर खिलखिला कर हंस पड़ती। ठिप-ठिप करता नौहणा गुरबंश की ओर ही आ रहा था। उसे अपनी धुंधली आंखों में गुरबंश दिखायी दी और वह बायें हाथ को हवा में फैला कर, उसे देखते हुए लड़खड़ाती आवाज में बोलता हुआ चला आया।

"क्यों . . .! आ गयी?"

गुरबंश उसे देखकर डर गयी। दिल में कंपकंपी-सी हुई। वह भयभीत होकर रास्ते की दायीं ओर हो गयी।

"यूं . . .छु-प-क-र-तो- काम-न-हीं-च-लेगा !"

नौहणा गिरता-पड़ता गुरबंश के सामने आ गया। आगे-आगे जाता हुआ जीता रुक गया। उसके आगे सिर घुमाते हुए और डगमगाती टांगों को अपनी बिखरी हुई शक्ति से संभालते हुए, उसने हाथ का पंजा बरसीम के गट्ठे में फंसा लिया—

"यह जाट को दगा देकर . . ." और उसे इतनी जोर से चक्कर आया कि वह गुरबंश के गट्ठर सहित नीचे जा गिरा। दूर खड़े लड़कों के दल ने लंबी आवाज में बोलना शुरू कर दिया, गुरबंश ने उतर गयी अपनी चुन्नी को जल्दी से संभालते हुए उसे आंखें दिखायीं—

"कुछ अकल कर . . .।" भीड़ को देखकर उसकी जबान लड़खड़ा गयी और घबराहट में नौहणे सहित सब कुछ उसे घूमता हुआ-सा दिखाई दिया। नौहणे ने झूमते हुए फिर उसकी तरफ हाथ चलाया तो उसके हाथ में उसकी चुनरी आ गयी। गुरबंश सहम कर पीछे हट गयी।

"तुझे शर्म नहीं आती हरामजादे।" गुरबंश ने जल्दी से अपने आपको संभाला।

"तुझे आती है कुतिया। इस जाट को बरबाद करके अब और यार बना लिये हैं।" और उसने दांत पीसते हुए चुनरी दूर फेंक दी। उसे पकड़ने के लिए पूरी ताकत से बढ़ा और वह पीछे हट गयी। नशे के कारण वह गट्ठर पर औंधे मुंह जा गिरा। इतने में दो-तीन बुजुर्गों ने आकर नौहणे को पकड़ लिया और रौबदार आवाज में उसे कंधे से पकड़कर झकझोरते हुए डांटा। गुरबंश उसी तरह तमतमायी हुई गालियां देती बुड़बुड़ाती हुई गट्ठर उठा कर घर की तरफ चल दी। थोड़ी दूर जाने पर उसके कानों में हंसी भरी आवाज पड़ी।

"पहले तो रासलीला रचाती रही है, अब जवाब भी नहीं देती अपने यार को।"

गुरबंश डरकर चुप हो गयी। उसे एक और व्यंग-बाण आन लगा—

"तो क्या हुआ जो रास्ते में पकड़ लिया? पहले जो सब कुछ होता था !"

गुरबंश का शरीर सुन्न हो गया। उसने कानों में उंगलियां डाल लीं। लोग झुंड बनाकर दरवाजों के पीछे से हंस रहे थे। घर आकर गुरबंश ने चारा आंगन में पटक दिया और भीतर जाकर लेट गयी। जीते ने बेबे को एक-एक कर सारी बातें बता दीं।

उस दिन गुरबंश दिन भर भीतर ही पड़ी रही, दूसरे दिन भी, तीसरे दिन भी। सास से जैसे भी कच्चापक्का बन पड़ता, वह भीतर पड़ी बहू को पकड़ा देती। गांव में घटना की जोरदार चर्चा हो रही थी। बंदे-बंदे की जुबान पर यही बात। जय कौर हर किसी के पास से कन्नी काटकर निकल जाती थी। उस दिन से गोबर-कूड़ा आंगन में ही इकट्ठा रखा हुआ था। दस दिन बीत गये पर गुरबंश की हालत नहीं सुधरी। वह सारा दिन भीतर उदास पड़ी रहती। सास बहुत समझाती, पर वह उठने का नाम नहीं लेती।

"उठ बेटी, काम धंधा तो कर।"

"मेरा जी नहीं चाहता।"

"जी कैसे करेगा।" जय कौर को उसकी बहानेबाजी पर गुस्सा आ गया "तूने किसी कंजर की मानी है। मैं तो बहुत रोयीचिल्लायी—मजाल है, इस पर कोई असर हुआ हो ! अरी इन करतूतों से कहीं शोभा मिलती है। कहते हैं, जिस चीज की दुनिया से चोरी की जाय, वह पास में रह कैसे जायगी? अब भीतर पड़ी है औंधे मुंह। और साथ में मुझ बुढ़िया के सिर में राख डाली है— पहले क्या इस घर में बहू-बेटियां नहीं थीं, किसी को पता भी नहीं चलता था—अरी तूने तो इस खानदान की मिट्टी ही पलीद कर दी ! . . .तुझे काट डालें।" जोर लगाने के कारण जय कौर को सांस चढ़ गयी। उसकी रगें गुस्से में हिलने लगीं, जो उसके संतप्त मन को दर्शा रही थीं . . ."तब उस पतंदर को आठों पहर भीतर घुसाये रखती थी, अब फिर? क्यों पड़ी है भीतर औंधे मुंह?"

गुरबंश ने कोई उत्तर नहीं दिया। सास जाने कितनी देर गुस्सा-गिला करके चली गयी। शाम का काम जैसे उससे बन पड़ा, कर लिया। टूटी हांडी की तरह बकझक करते जय कौर रोटी उसे भीतर दे आयी। अंदर भूख लगी थी, जैसे-तैसे चार निवाले निगल लिये। जाने कितनी रात जगती रही। मन कैसे-कैसे ख्यालों में खोया रहा। कभी उठकर भीतर चक्कर लगाने लगती, जब हड्डियों में थकान महसूस होती, चारपाई पर पड़कर बावलों की तरह बिटर-बिटर झांकती। नौहणे की करतूत पल-पल याद करती। नौहणे को उसने बेपनाह गालियां दी। पर जब गंभीर होकर सोचा, अपने-आप पर ग्लानि होने लगी— "तब अगर उसे ढंग से बुला लेती, तो यह झंझट काहे को होता? पर हर समय आदमी का मन ठीक तो नहीं रहता।" सारी रात इसी तरह बीत गयी, नगिंदर याद आता तो उसे भला-बुला कहती, उसे 'कंजर', कहती।

और फिर उस दिन वाली घटना को याद करके गुरबंश को पसीना आ गया। नौहणे के साथ हाथापाई होना, बच्चों और बड़ों दोनों के लिए मजाक बन गया।

गुरबंश पल्लू में मुंह छुपा कर रोने लगी। बुढ़िया दूसरे कमरे में पड़ी थी। कहीं से मुर्गे की लंबी-गहरी बांग सुनायी पड़ी। उसके मन में एक तूफान-सा मचल उठा। गेबे की कही बात याद आयी। एकदम से उसकी आंखों के सामने, सरू जैसा बक आकार दिखायी

दिया। 'हूं' कहते हुए हिम्मत के साथ वह चारपाई पर से उठी। इधर-उधर कुछ तलाश किया। काफी समय तक चीजें ऊपर-नीचे करती रही। दरवाजा खोलकर देखा। बुढ़िया 'पाट' करते हुए, डिब्बा उठाये बाहर जा रही थी। दिन निकलने ही वाला था। हल्का-सा अंधेरा था। एक बार उसने फिर दरवाजा खोला। तारों की छांवों के सिवा कुछ नहीं था। फिर एक बार अपने-आप पर निगाह डाली। दूसरा डिब्बा उठा कर तेजी से गली के दरवाजे के पास आ गयी। हाथ बढ़ाकर बंद किवाड़ खोले और बाहर निकल आयी।

17

जय कौर ने बाहर से आकर चाय रख दी। एक सरसरी नजर दालान की ओर डाली। कोई हलचल न देख कर नहाने चली गयी। नहा कर आयी तो देखा, चाय उबल-उबल कर बाहर गिर रही है। दूध डाल कर चाय नीचे उतार ली। खुले-मुंह वाली बाटी में डाल कर ठंडी करके चाय पीती रही। पड़ोसिन नंद कौर ने दूध बिलोने के लिए चाटी में मथनी डाल दी थी। नंद कौर का घरवाला पशुओं को गालियां देता, चारा डालता, ऊंची-ऊंची आवाजें दे रहा था। वह थम्मण को कोठरी में चाय दे आयी। दिन काफी चढ़ आया था। उसे बहू पर गुस्सा आया, जो अभी भी उठने का नाम नहीं ले रही थी। मन-ही-मन कुढ़ती, दीवार के पास से झाडू उठाकर वह सफाई करने लगी। कभी-कभी झाडू की 'सरकम्सरक' के बीच 'हे वाहे गुरु' की ध्वनि ऊंची उठती।

उसी तरह क्रोध में जलती हुई जय कौर ने, चमकते हुए लोटे में चाय डाली और गुरबंश वाले कमरे की ओर चल दी। दालान को खाली भायं-भायं करते देखकर वापस लौट आयी। "बाहर दफा हो गयी होगी!" बड़-बड़ करते उसने चूल्हे के आगे चिमटे से आग सरका कर लोटा उसके ऊपर रख दिया। 'खुद ही झुलस लेगी; जिसे जरूरत होगी। मेरे तो नयन-प्रान ही टूटते जा रहे हैं। पहले पति का रौब बर्दाश्त किया, अब बहू-बेटों का भी करूं? कोई लिख कर दे रखा है भला—कई दिन हो गये, कमरे के अंदर मुंह ढंक कर पड़ी है। उस बात पर तो खाक भी पड़ चुकी है। भई ,उठ कर हाथ-पैर हिला। इस तरह कैसे काम चलेगा? यूंही मुंह सुजा कर पड़ी है। कहते हैं कि जिसका घर में बैटे-बिठाये गुजारा चल जाय, वह भला बाहर क्यों जाय?—अंदर पड़ी-पड़ी दोनों वक्त पा जाती है चुपड़ी हुई ! फिर यह क्यों करे !' मन में कड़वाहट-सी भर गयी और आंखों में कड़वा पानी उतर आया। आवाज भारी हो गयी—'अगर घर में इसका आदमी होता, तो यह इस तरह न करती। मार-मार कर खाल उधेड़ देता • • • ! और सरकार है कि . . .प्लेग पड़े . . .।'

बड़बड़ाती हुई वह पशुओं को बाहर निकालने लगी। जरा कराहते हुए टोकरी में थोड़ा-थोड़ा हरा चारा ले जा कर नांदों में मिलाया। अंदर गोबर के अंबार लगे हुए थे, जिन्हें पशुओं के खुरों ने काट-काट कर बुरी हालत कर रखी थी। फिर झल्ला कर गोबर वह इकट्ठा करने लगी। जीता सोकर उठा और चाय के लिए मां के पास आ कर चूं-चूं करने लगा।

"अरे मुए, वहां से डाल कर पी ले न ! क्यों सारे ही मेरा लहू पीने लगे हो।" उसने जीते को कभी झिड़की नहीं दी थी।

"तू दे न, गोबर भाभी इकट्ठा कर लेगी।"

"उसे क्या सांप सूंघ गया है? काला नाग? 'भाभी भाभी' की रट लगा रखी है !"

गोबर के टोकरे उपले पाथने वाले स्थान पर फेंक आयी। ठंड ज्यादा नहीं थी। सारा काम खत्म कर के दालान के दरवाजे पर आकर थोड़ा गिला करती हुई बोली—

"अरी बहू, तूने तो बिलकुल ही शर्म-हया छोड़ दी है!"

अंदर से कोई उत्तर न आया, तो कमरे के अंदर जा कर देखा, चारपाई खाली पड़ी थी। "अभी तक बाहर ही खत्म नहीं हुआ?" ध्यान से दालान में पड़ी चीजों पर नजर डाली। रस्सी पर लटके हुए कपड़े आधे नीचे पड़े थे। कुढ़ती हुई जय कौर ने कपड़े नीचे से उठा कर फिर से रस्सी पर लटका दिये। फिर उसकी नजर खुले मुंह वाले ट्रंक पर पड़ी। जो बूटियों वाला सूट गुरबंश ने कल पहना हुआ था, वह खूंटी पर लटक रहा था। धूप चढ़ आयी, लेकिन गुरबंश नहीं लौटी। लोग अपने काम-धंधे में लग गये। जय कौर के मन में संदेह जाग उटा 'गयी कहां?' मन को चैन न आया तो मुकंदे की बहू की ओर चली गयी। उसने कहां, "पंद्रह दिन हो गये, मुझसे मिले!" दिल में एक तूफान सा मचल उठा! बहाने-बहाने पास-पड़ोस में भी पूछ-ताछ कर आयी। सूरज आधे आकाश में आ चुका था। जय कौर का चेहरा उतर गया; रंग उड़ गया, कहां लोप हो गयी? थम्मन के पास जा कर हाथ मलने लगी; "सिंदी के बापू! अपनी बहू तो घर में दिखायी नहीं देती!"

"हैं! वह भला कहां जायगी?"

दोपहर होने तक सारे गांव में चर्चा शुरू हो गयी। लोगों ने न जाने कहां से बात सूंघ ली थी? जय कौर सिर थामे बैटी थी। वह किससे कहे? किसे उसके पीछे भेजे? तभी दबे पांव नंद कौर आ गयी।

"अपनी बहू कहां है?"

जय कौर फिर भी न बोली। उसके दात जुड़े हुए थे। नंद कौर उसके नजदीक चारपाई पर आ बैटी। बायें हाथ से सिर पकड़ कर, दायें हाथ को हवा में हिलाते हुए उसने बात शुरू की—

"बात क्या है? मैंने सुना, तो मैं तो टंडी बर्फ हो गयी। इतनी जल्दी क्या आंधी आ गयी? कोई बात तो नहीं हुई?"

जय कौर ने कमजोर आंखों से उसकी ओर देखा और अचानक सिर हिलाते हुए कहने लगी, "बात भला क्या होनी थी? मैंने बड़े तड़के उट कर घर का सारा काम किया। जब अंदर चाय देने आयी, तो वहां कोई भी न था ! मैंने सोचा, बाहर गयी होगी, आ जायगी। पर नहीं आयी। एक पल देखा, दो पल देखा . . .और फिर मैं देखती ही रह गयी ! ऊपर से यह वक्त होने को आया, वापस ही नहीं आयी . . .।" फिर वह सिर नीचा कर के बैट गयी। सेहन में खामोशी छायी हुई थी। भीतर से एक लंबी आह निकली—"हाय मेरे रब्बा! तुझे जरा भी दया नहीं आती? मैं तो पहले ही निढाल हुई पड़ी हूं।"

"परमात्मा किसी के बुरे नसीब न लिखे। भई बस ! पहले कौन-सा सुखी थी, एक बेटा उटा ही था, उसकी ओर से अंधकार पड़ गया था और अब इस अच्छी-भली बहू को उल्टा चक्कर दे दिया। भला उसके आगे कोई जोर है बहन!" फिर उसके कंधे पर हाथ रखते हुए कहा—"तू यूं सिर झुका के न बैट। किसी को कह-सुन ! मैं भप्पो के फूफा से कहती हूं . . . न जाने लाज-शर्म की मारी किसी कुएं-तालाब में न डूब मरी हो ! बाहर निकलने योग्य नहीं छोड़ा कंजरी ने!"

नंदो के घरवाले ने दो-चार आदमी लेकर सारे कुएं-तालाब देखे, पर कहीं से कुछ

पता न चला। पास-पड़ोस वालों से जो कुछ बन पड़ा, किया। आ कर घुटने झुकाये, धैर्य बंधाया। सवेरे-सवेरे नौहणा आ गया।

"क्या बात हो गयी, चाची?"

"पुत्र, तुझे पता ही है।" जैसे वह उस पर गुस्सा उतार रही हो।

धैर्य देने वाले अन्य लोग भी जय कौर के पास बैठे थे। नौहणे को अपना संदेह विश्वास बनता प्रतीत हुआ। उसने चाची के पास जाकर कहा, "चाची ! गुस्सा न करना। मैं तुझे बताऊं, यह शरारत 'देड़कियां' वाले गेबे की है!"

"पता नहीं पुत्र किसकी शरारत है। सच्चे पातशाह को ही पता होगा !"

"मैं पेशाब से अपनी दाढ़ी मुंडवा दूंगा अगर यह काम उसके हाथों न हुआ हो !"

नौहणे ने दूसरे आदमियों की ओर देखते हुए कहा।

"हां, हां। पता करने में क्या हर्ज है।" कई आवाजें एक-साथ उभरीं, "अगर बहन-भाई की इज्जत बचती है, तो बचानी चाहिए।"

"अच्छा, तो फिर मैं चलता हूं।" नौहणे ने उठते हुए कहा, "मुझे एक आदमी दे दीजिए।"

"तू अकेला क्या करेगा? तेरी तो अगलों के हिस्से में एक-एक बोटी भी नहीं आयेगी!" नंद कौर के घरवाले ने, थोड़ा गिले से कहा। फिर सभी ने सलाह करके कुछ आदमियों को भेजने की योजना बनायी।

उन्होनें आपस में तकरार करते-करते दोपहर कर दी।

अच्छे-खासे आदमियों को इकट्ठा कर के वे 'देड़कियां' को रवाना हो गये। ज्यादा लोग तो तमाशा देखने गये थे। एक-दो को यह बात बुरी भी लगती थी—बहू-बेटियां सब की बराबर होती हैं! रास्ते में नौहणा, गेबे के चक्कर मारने के बारे में उन्हें बताता रहा।

"वह साली, भाग किसलिए गयी?" नंबरदार ने नौहणे को हंसती हुई आंखों से देख कर पूछा—"साले, तू मर गया था?"

नौहणा खिसियानी-सी हंसी हंस कर चुप रह गया।

"नंबरदारा ! दर्द भी तो इसी को है!" पास ही से मीके ने मुस्करा कर कहा, जो बदमाश कहलाता था।

हंसी मचाते हुए वे सब 'देडकियां' की सीमा के अंदर पहुंच गये। नंबरदार ने अपने रिश्तेवालों के छोटे लड़के को भेज कर पता किया। लड़के ने बताया कि चौबारे में कोई चादर तान कर लेटा पड़ा है। सेहन काफी लंबा-चौड़ा था। बड़े दरवाजे में अंदर से कुंडा लगा हुआ था। जरा हट कर खड़े छकड़े को धकेल कर उन्होंने दीवार के साथ लगा लिया। खुला सेहन सूना पड़ा था और एक लंबी-सी सीढ़ी चौबारे से लगायी हुई थी। मारे डर के कोई अंदर नहीं जा रहा था। नौहणे ने गांव सवेरे ही पी ली थी। उसने म्यान में से कृपाण खींचते हुए कहा—"मुझे चढ़ाओ दीवार पर, देखा जायगा।"

मीका शरारती हंसी हंसता हुआ बोला—"हां,हां ! इसी का हक भी है, भई !"

नौहणे ने दीवार पर चढ़कर, पैरों के बल हो कर कृपाण की नोक दीवार में चुभा कर

ताड़ती हुई नजरों से अंदर देखा। उसे इस प्रकार शिकारियों की भांति आहट लेते देख कर मीके ने हल्का-सा धक्का मारा—"अब पानी में मथनी न फेर मिर्जे!" तभी नौहणे के पैर उखड़े और वह सेहन में गिर पड़ा। कृपाण उसके हाथ से छूट कर परे जा गिरी।

"यार, तूने तो बंदा ही हलाल कर दिया था !" नंबरदार ने उचक कर अंदर देखा। वह उठ कर मिट्टी झाड़ रहा था और चोट लगने से बच गया था। पहले नौहणे ने दरवाजा खोला और फिर सीढ़ी की ओर बढ़ा। सूरज नीचे ही नीचे होता जा रहा था जिस कारण मटमैला प्रकाश फैलने लगा था। बाहर की खड़खड़ाहट से सचेत होकर सामने दालान में से एक युवती निकली। उसने नौहणे की ओर गौर से देखा। फिर दौड़कर सीढ़ी के डंडे पर चढ़ने लगी। नौहणे ने भाग कर, बीच में पहुंची युवती को सीढ़ी-समेत नीचे गिरा दिया। युवती, "हाय री बेबे, मैं मर गयी!" कहती हुई नीचे आ पड़ी। अंदर से लगभग चालीस साल की एक और स्त्री निकली। लड़की दौड़कर उस स्त्री के साथ लिपट गयी।

नौहणे ने आंखें फाड़-फाड़ कर उन दोनों को देखते हुए, सीढ़ी फिर से चौबारे को लगायी। चौबारे में एक चादर गुच्छमगुच्छा हुई पड़ी थी। उसने दूसरे दरवाजे से लपक कर देखा, पड़ोसियों के घर को सीढ़ी लगी हुई थी। बाकी आदमी भी सेहन में आ गये थे।

"वह बहन-देना, उसे लेकर भाग गया !"

उन्होंने लड़की और उसकी मां को भाग निकलने से रोकने के लिए बंदे रखवाली पर बिठा दिये। सबने कोठे पर चढ़कर देखा। नौहणे ने पड़ोसियों के घर उतर कर देखने के लिए कहा। नंबरदार ने बेगाने और अजनबी गांव के बारे में याद दिलाया। तभी उन्होंने 'काड़-काड़' पड़ती लाठियों की खड़ाक सुनी। एक-दूसरे की ओर देखते हुए, पड़ोसियों के घर की तरफ ताकते रहे। जब पीछे से चीखें सुनाई दीं, तो मीका भाग कर चौबारे के पीछे वाले दरवाजे में आ गया। गांव के लोग जमा हो गये थे। रखवाली पर बिठाये आदमियों पर वर्षा की भांति लाठियां बरस रही थीं। मीके ने हवाई फायर कर दिया।

"खबरदार! अगर किसी ने हाथ उठाया। सभी को गोलियों से भून देंगे।"

गांव वाले घबरा कर रुक गये। वे सभी नीचे उतर आये। नीचे वाले आदमियों को ज्यादा मार नहीं पड़ी थी। गांव वाले चार-पांच बंदूकें देख कर ढीले पड़ गये।

"तू बता, कमजात ! तेरा खसम, उसे कहां ले गया है?" मीका दांत पीसता हुआ औरत पर टूट पड़ा।

"मुझे नहीं पता, भाई" गेबे की घरवाली ने डरते-डरते कहा।

"इस तरह नहीं बतायगी यह। नंगी कर के, इसकी पिटाई करो।"

मीके की यह घटिया बात सुनकर लड़की चीख मार कर अपनी मां के साथ चिमट गयी। नंबरदार ने नजरें इधर-उधर घुमाते हुए आहिस्ता से सभी को कहा, "यहां से निकलने की करो पीरो ! अगले पुलिस को बुला कर डाके का केस बना देंगे।" नंबरदार की चुनौती सुन कर सभी के पैरों तले से जमीन खिसकती प्रतीत हुई।

मीके ने युवा लड़की को बांहों से पकड़ कर घसीटते हुए लाल-लाल आंखें दिखाते हुए कहा, "न बता, तेरी बेटी को ले जाते हैं, कुतिया।"

"नहीं भाई। मेरी कंजक-सी बेटी को न ले जाओ।"

चीखें मारती हुई गेबे की बीवी, मीके के पैरों पर गिर पड़ी।

"परे हट! कमजात। पाखंड करती है !" मीके ने झटका दे कर औरत को परे धकेल दिया।

"नहीं भाइयो, कुंवारी लड़की की बेइज्जती न करो !"

मीका उनकी बात की ओर ध्यान न देता हुआ, लड़की को झटके मारकर खींचता हुआ लिये जा रहा था। गांव के लोग कुंवारी लड़की का इस तरह घसीटे जाना सहन न कर सके। नंबरदार ने आगे होकर उन्हें सारी बात समझायीं। उन सभी ने गेबे की बहू पर जोर डाला कि वह बता दे, नहीं तो उसकी लड़की को वे ले जायेंगे।

"मैं लाती हूं, भाई !" उसने चिल्ला कर कहा, "मैं तुम्हारे हाथ जोड़ती हूं ! मेरी बेटी को छोड़ दो !"

"पहले बता गुरबंश कहा है?" मीके की सांस फूली हुई थी।

वह तीन-चार आदमी ले कर, उसी पड़ोसी के घर चली गयी। आहट पाते ही गेबा एक तरफ हो गया। उसे अपने घर में मचे कोलाहल का पता लग गया था। गुरबंश अंदर चारपाई पर मुंह-सिर छुपाये बैठी थी। नंबरदार ने विनम्रता से उसे समझाते हुए कहा, "उठ भाई, घर चल।"

गुरबंशो ने कोई जवाब नहीं दिया।

"मैंने तुझसे कहा है, भाई !" नंबरदार ने खीझ कर कहा।

उसकी बहन ने उसे बांह पकड़ कर उठाते हुए तपे हुए स्वर में कहा, "उठ खड़ी हो पापिन चल पड़ घर को, क्यों हमें बदनाम करने पर तुली है। मैंने तेरे आने पर ही दुहाई दी थी कि तुझे घर के बाहर पैर नहीं रखना था, इस उजड़-जाने के पीछे लग कर . . ।"

अनमनी सी गुरबंश ने उठ कर, मुंह लटका कर चुन्नी ठीक की। सामने नौहणे को खड़ा देखकर, उसे अपना-आप मिट्टी होता प्रतीत हुआ। वह नजर नीची किये, अपनी किस्मत को कोसती चल पड़ी।

जब गुरबंश देड़की पहुंची थी, तो गुलजारा वक्त देकर भी न आया। गुरबंश को यूं भी लगा कि गेबा उसके साथ धोखा कर रहा है। गेबा गुरबंश को गांव में ही किसी के वहां बिठाना चाहता था। लेकिन गुरबंश ने सख्ती से कह दिया, "अगर वह आता है, तो ठीक है वर्ना . . .पर वह आयगा भी !"

गुरबंश की जिद देख कर गेबा ढीला पड़ गया। उसने गुलजारे के साथ दो हजार पर तय किया हुआ था। गुलजारा विधवा मां का बेटा, छड़ा-छड़ांग। कच्ची उम्र में ही उसका नशे बाजों के साथ उठना-बैठना हो गया था। अफीम की ब्लैक करता था। गांव के गरीब और कमजोर जाटों के सिर अफीम के पैसे चढ़ाये रखता था।

गांव वापस आ कर गुरबंश महीना भर घर से बाहर नहीं निकली। गांव वाले 'चपड़-चपड़' करने से तब बाज आये जब उनके जबड़े थक गये।

नौहणा हर रोज ही आता था। एक दिन गुरबंश ने उसे डांटा "तू अपने घर बैठ आराम से।"

गुरबंश समझती थी, नौहणे ने उसे कहीं का नहीं छोड़ा था। "कहा था, न आया कर, चला आता है, भैंसे की तरह 'हुएं-हुएं' करता। तू भी कोई आदमी है? जिस थाली में खाता है, उसी में छेद करता है।"

नौहणे ने निरादर करवा कर भी वहां जाना बंद नहीं किया। और गांव में बात फिर हवा में फैल गयी। जय कौर ने प्यार और मिठास भरे लहजे में एक दिन नौहणे को समझाया, "देख बेटा, अब तू यहां आना जरा कम कर दे। लोगों का मुंह बंद नहीं किया जा सकता। उन्हें तो मुंह खोल कर कुछ बक ही देना है। तुझे मेरी बात का गुस्सा तो लगेगा, पर जिस बात से बाद में खराबी पैदा हो उससे क्या लाभ . . .?"

"चाची, तुम मुझे बुरा आदमी समझती हो?" नौहणा जरा तल्ख होकर बोला।

"अरे बेटा ! मैं बुरा न समझूं, लोग तो समझेंगे।"

तब नौहणे ने क्रोध में आ कर आना कम कर दिया और नशा ज्यादा करने लगा। काम तो कोई करता नहीं था। धन्नो सुबह-शाम नौहणे से झगड़ा करती थी। बात यहां तक बढ़ गयी कि मार-पीट तक नौबत आ गयी . . . ।

18

नया वर्ष चढ़ा और सुख-शांति से बीत गया। और उससे अगला भी और फिर आधा और भी। दीपो और केवल टूटे नहीं। इस अर्से में बचना और गंडा तो एकदम कमजोर हो गये। चिंती और पंजाब कौर भी थक-हार गयी थीं। लीखे की बहू काम को ज्यादा हाथ नहीं लगाती थी। काम सारा पंजाब कौर के सिर पर था। बंतो की हालत और बिगड़ गयी थी। अजैब बारह में से साढ़े-ग्यारह महीने बीमारी की चपेट में आ जाता था। जमीन रेहन पड़ गयी थी। लोग आधी-बंटाई पर देने से हिचकिचाते थे, "इसके पास बैल नहीं, बछड़े नहीं, यह खेती करेगा कैसे?"

दीपो का घर में पहले जैसा रौब-दाब नहीं रहा, लेकिन उसने अहंकार नहीं छोड़ा था। परिवार के कुदरती नरम स्वभाव और केवल के कारण हुई बदनामी से लोग उन पर रौब डालना चाहते थे। हर ऐरी-गैरी औरत उस पर ताना कसती—"अरी, मैं तेरी तरह निकल कर केवल के तो नहीं गयी !" दीपो को गुस्सा इसलिए आता कि बदनामी तो उसने ली, लोगों के पेट में दर्द क्यों होता था ! बात कुछ भी होती, अगले झट केवल का ताना दे देते। जलौरे के साथ उनके खेत की मुंडेर साझी थी। साझी मुंडेर पर नीम के तीन-चार वृक्ष थे। इन वृक्षों की छाया ज्यादातर जलौरे की ओर रहती थी। कैलू ने पशुओं का बरामदा बनाने के लिए, नीम के वृक्षों को काट कर उनकी लकड़ी इस्तेमाल करनी चाही। जलौरा इन वृक्षों की घनी छाया गंवाना नहीं चाहता था। उसके पशु गरमी के दिनों में इन वृक्षों के नीचे आराम करते थे। उसने साझी चीज को साझे स्थान पर ही रखने की जिद की।

"जब हमें जरूरत है!" कैलू के कमजोर शरीर ने एक झुरझुरी-सी ली।

"तुझे जरूरत है तो फिर मैं क्या करूं?" जलौरे जाट ने अपना चप्पन जैसा मुंह खोला। उसके पीतल-रंगे चेहरे पर बैठी हुई चौरस नाक, छिदरी मूंछों के बालों को सांसों से हिला रही थी।

"मैं अपने हिस्से की नीमें काटे लेता हूं। यदि तुझे जरूरत नहीं, तो तू अपने हिस्से की खड़ी रहने दे।"

"जो चीज साझी है, उसे तू कैसे काट सकना है!" जलौरे ने चौड़े चप्पन जैसे चेहरे पर, गहरी खाई जैसी आंखों में गुस्सा भर कर कहा।

"मैं तो अपने हिस्से की बात कर रहा हूं।"

"यहां हिस्से-विस्से की बात नहीं है।" जलौरे ने उसे डांट कर डराना चाहा।

"हिस्से की बात कैसे नहीं है?" कैलू का पतला शरीर फिरकी की तरह लरज उठा।

"नहीं है भई! काट लेगा तू यह नीमें ! है हिम्मत?"

"मैं तुझे काट कर दिखाऊंगा; तू मुझे रोकना !" कैलू इस तरह तेज-तेज कदमों से घर की ओर चला, जैसे औजार-हथियार लेने चला हो।

"आ तो सही ! तूझे दिन में तारे न दिखाये तो कहना !" और फिर आवाज को कुछ

बिगाड़ कर मुंह को टेढ़ा करके चप्पन रौब से बोला, "काटेगा भई यह नीमें ! बीवी तो इससे संभाली नहीं जाती। उसके पास एक आता है, एक जाता है—साली कमजात कहीं की !"

मोड़ पर बैठे आदमियों को देख कर कैलू के शब्द गले में ही अटक गये। आंखों में कड़वा खारा पानी उतर आया। खुश्क हो रहे गले को संभालता घर चला आया और आते ही दीपो पर गालियों की बौछार शुरू कर दी।

"तेरी मां को . . .कुत्तिए ! अगर सही तरह रहती तो, शरीक तो ऊपर न चढ़ते !"

"क्या बात हो गयी? अच्छा-भला घर से गया था?" अंदर वाले दालान में झाड़ू लगा रही दीपो ने हैरान होकर पूछा।

"हो गयी तेरी . . .।तब बहन के यार के साथ निकल-निकल कर भागती थी छुट्टड़ की तरह। ताने सहने के लिए रह गया मैं !"

"तू बात तो बता . . .?" दीपो को उसके दुखी होने का कोई कारण समझ में नहीं आ रहा था।

"वह तेरा पतंदर नीमें नहीं उखाड़ने दे रहा—साथ ही अगले ऐसे रौब से बात करते हैं, जैसे जालंधर से बोल रहे हों ! बहन के खसम को अपनी करतूत नहीं याद ! सालों ने सारे छड़े खा लिये . . .!"

"कोई बात नहीं। मैं पूछूंगी उससे . . .!" दीपो ने बात टालनी चाही।

"तू क्या पूछेगी . . .? यह पूछेगी—कमजात! यह तब सोचती, अब क्या पूछेगी ! तू किस-किस का मुंह बंद करेगी? लोग तो बस कहे जा रहे हैं—लेकिन तुझे इससे क्या? मिर्चों की तरह लड़ती हैं, मुझे ये बातें . . .तू तो अपने खसम के पास जा बैठेगी।"

कुढ़ता-जलता कैलू बाहर चल दिया। दीपो भी मन में कुढ़ती रही—'न जाने लोगों के पेट में क्यों दर्द होता है? यदि मैंने इज्जत खराब की, तो अपनी की !' लड़की जाग पड़ी। झाड़ू बीच में ही छोड़ कर वह उसे दूध पिलाने लगी। शाम को काम-धंधा खत्म करके जलौरे के घर की ओर चल दी। उसे अधिक दुख इस बात का था कि बात नीम के वृक्षों की है और बोलता क्या है?

जलौरे की बीवी से दो-चार इधर-उधर की मार कर, उसने गरम पानी से हाथ-पैर धो रहे जलौरे से पूछा, "क्या बात है भाई जी। तूने अपने भाई से क्या झगड़ा खड़ा कर लिया?" जलौरा उसके जेठ समान था।

"झगड़ा मुझे क्या खड़ा करना है . . .! अपना कोई नाली का चक्कर तो है नहीं . . . .!" दीपो को लगा, जैसे जलौरे ने बात उसे लगा कर कही हो। चुपचाप वह उंगलियों से पैर मसलता रहा।

"फिर नीमों का क्या करना है?" दीपो ने उसे खामोश देख कर जरा सख्ती से बात की।

"करना क्या है? नीमें खड़ी हैं ! खड़ी रहने दो।"

"वह तो हमें भी पता है, पर हमने तो नीमें रखनी नहीं हैं। रोज-रोज का क्लेश एक दिन में ही खत्म कर देना है . . .।" उसने फिर बांह निकाल कर उंगली से धरती पर लकीरें

खींचते हुए कहा—"तू बता ! अगर तो बातचीत से ही झगड़ा खत्म करना है, तो इस जैसी तो बात ही नहीं! अगर तूने झगड़ा खड़ा करना है . . .।"

"मैं झगड़ा कब खड़ा कर रहा हूं . . .।"

"कर तो रहा है ! तूने कैलू को ताना नहीं दिया कि तुझसे तो अपनी बीवी नहीं संभाली जाती—कहां नीमें और कहां बीवी संभालने वाली बात !"

जलौरे ने कोई जवाब न दिया।

उसने फिर गिला करते हुए कहा, "मैं तो जमाने भर की लुच्ची हूं। तब जानूंगी जब कोई और लुच्चा बन दिखाये !—और अंदर ही अंदर बने हैं; परदेस गये हुओं के पीछे लड़के पैदा कर लेती हैं और कहती हैं उसी का है . . .।" दीपो ने उड़ती-उड़ती बात सुनी थी कि जलौरे की मां ने अपने आदमी के पीछे जलौरा किसी और से जन्माया था !

"तू हमारे साथ लड़ने आयी है?" जलौरे ने जरा दुख के साथ कहा।

"मैं लड़ने नहीं आयी हूं; तुझे जनवाने आयी हूं।"

जलौरे की पत्नी ने उसके आगे हाथ जोड़ते हुए नखरे से कहा, "हम तो बहन, कबीलदार हैं, हम तेरे साथ टक्कर नहीं ले सकते। तू आराम से अपने घर जा।"

"मैं तो लुच्ची हूं।" दीपो ने कड़क कर कहा, "लेकिन किसी के दबाने से दबने वाली नहीं हूं।"

"न दाबने देना तू . . .।" जलौरे ने उठ कर जूता पहनते हुए झाड़ा, "कैसे मुंह से झाग गिरा रही है !"

"झाग न गिराऊं ! तेरे दिल में होगा, यह चुप रहें, मैं ठगी कर लूं !"

"चल तू, नीमों को हाथ लगाकर तो देख !" जलौरे ने ठूंठ बनी टांगों को दरवाजे की ओर घुमाते हुए नीम के वृक्षों की ओर बांह फैलायी। दूसरे, दीपो को ऊपर ही ऊपर चढ़ती देखकर उसे क्रोध आ गया था।

"मैं तुझे काट कर दिखाऊंगी।" उठती हुई दीपो ने गरज कर कहा, "कैसे लूटने पर तुला हुआ है, जो भी है, यही चाहता है कि साबुत ही निगल जाय!"

"तूने क्या गांव को कम लूट कर खाया है, अब सच्ची बनती है?" जलौरा बिफरा खड़ा उसकी ओर देख रहा था।

"मैंने तो खाया है, तू लगा ले जोर, जो तेरे से लगता है। पर तेरी मां की तरह किसी का बेटा पैदा कर के किसी और के नाम नहीं लिखाया।"

"तू जा, चली जा, बहन देने की . . .कुत्ती औरत !" और जलौरा वाक्य का अंतिम शब्द मुंह में ही दबा गया था पर दीपो ने सुन लिया।

"तेरी मां कुत्ती ! तेरी बहन कुत्ती !—ये छोकरियां कुत्ती जिनका झुड इकट्ठा किये फिरता है . . .!"

गालियां देती और छाती थपथपाती दीपो तमकती हुई घर आ गयी। जलौरा मामला पंचायत में ले आया। सरपंच ने उसे हौसला दिया—"फिक्र न कर, हम इन कमीनों को इनकी औकात बता देंगे।" पंचायत ने कैलू को भी बुला लिया। पहले कैलू को बात करने

के लिए कहा। कैलू और जलौरे में खूब तू-तू, मैं-मैं हुई। पंचायत ने निर्णय दिया कि नीमें साझे स्थान पर ही खड़ी रहें। कैलू अपना-सा मुंह ले कर घर वापस आ गया।

"पंचायत क्या मां लगती है नीमों की?" दीपो ने घर आये कैलू से गुस्से में कहा। "पंचायत भी तो हमारी ही बनायी हुई है। यह कहीं आकाश से तो उतरी नहीं। दे दिया फैसला ! छाया गंवाने से क्या लाभ?" उसने मुंह टेढ़ा-सा करके उनकी नकल उतारी।

"अच्छा ! अब भौंकती न जा, पंचायत ने जो कर दिया, ठीक है।" कैलू अपने स्वभाव के अनुसार सोचता था।

दीपो दिल ही दिल में बहुत कुढ़ती रही। लेकिन फिर कुछ सोचकर उसने इस बात पर मिट्टी डाल देनी चाही। पर एक दिन बाहर रास्ते में पास से गुजरते हुए जलौरे का उसने खांसना सुना। उसने गर्दन घुमा कर उसकी टेढ़ी टांगों की ओर देखा, वह मोर की भांति कर कदम टिकाता चला जा रहा था। दीपो उसे तने हुए चेहरे से देखती रही। अचानक जलौरे ने गर्दन मोड कर पीछे देखा। उसकी रहस्यमय हंसी हंसती हुई मूंछें देख कर दीपो की छाती पर जैसे काला नाग लोट गया। उस दिन तो वह जख्मी नागिन की भांति विष घोलती हुई घर लौट आयी।

इसके चार-पांच दिन बाद जलौरे की बीवी गोबर फेंकती हुई दीपो को देख करअकड़ कर चलने लगी। उसने एक हाथ से टोकरा पकड़ रखा था। दूसरी बांह हिलाती 'हैं-हैं' करती दीपो के पास से फुंफकारती हुई गुजर गयी। जलौरे की औरत ने कूड़े-करकट के ढेर पर उठा कर के टोकरा फेंका और फिर दीपो की ओर यूं फाड़ खाने वाली नजरों से देखा जैसे उसका अंग-अंग तोड़ देना चाहती हो।

जरा दूर से मोड़ वाली भजनो 'टिप-टिप' करती हुई आ रही थी। उसने आते ही हंस कर पूछा, "अरी, क्या हाल है तेरा?"

"अपने हाल भी कभी खराब हुए हैं।" कहकर उसने नखरे से दीपो की ओर देखा। दीपो क्रोध में भरी चलती गयी। थोड़ी दूरी पर जा कर दीपो ने जलौरे की गोल-मटोल बीवी का स्वर सुना—"अपना हाल बुरा कैसे होगा? . . .कोई ताना नहीं मिला दुनिया से। हाल तो उनका बुरा है, जिनके बारे में कहा गया है कि मांग कर खाना और मसीत में सोना। ये काम चोरों-छिछोरों के हैं।" जलौरे की बीवी खुद भी महसूस करती थी कि उसकी बात पूरी जंची नहीं।

उसी दिन दीपो ने केवल से बात की। बेशक, केवल सब कुछ समझता था, फिर भी जलौरे और उसकी बीवी के बारे में सुनते ही क्रोधित हो गया—

"फिर तुझसे कुछ बन पाया?"

"मैं क्या कहती। रोये अपने भाइयों को, लोगों के बीच में सुना रही थी।"

"मेरे साथ लड़ने के लिए तो तू बीस के बराबर है।"

केवल के अंदर यह बात घूमती फिर रही थी कि उन्होंने लोगों से बदनामी ली, अपना आप खराब किया। लोगों को क्या अधिकार था कि वे इस बात के लिए उन पर रौब डालें।

सरदियों का सूर्य मकानों की ओट हो गया था और वह सेहन में दीवार के साथ चारपाई

डाले पड़ा था। क्षण भर पहले काफी गरमी-सी थी, अब चाहे ठंड उतर आयी थी।

"फिर अब . . .?" केवल ने सिर पर परना लपेटते हुए पूछा।

"फिर क्या . . .। न खेलना और न खेलने देना . . .! ये क्या याद करेंगे, नीमों को जरूर काटना है। यह तो चौड़े हो कर भैंसें न बांध पायेंगे—मुए जाट ने समझा है डरपोक परिवार है, चाहे सिर पर नाचते जाओ।"

"तू निश्चिंत रह ! हम तो मरे हुए हैं ही—पर पुत्रो तुम्हें नहीं छोड़ेंगे किलकारियां मारने लायक ! कल को यह तो न कह सकोगे कि नीमें नहीं काटने दीं।"

दीपो ने कैलू से बात नहीं की। कैलू और केवल बेशक रास्ता चलते आपस में बोल लेते थे, लेकिन थोड़ा-बहुत ही। और न ही पूछने पर कैलू ऐसा करने देता। केवल ने नौहणे के साथ सलाह-मशविरा करके दो आदमी और अपने साथ गांट लिये। बेशक नौहणे की हालत ठीक नहीं थी। वह देसी शराब पीता था और नशेवाली गोलियां भी हजम कर लेता था !

दूसरे दिन आधी रात को जब उन्होंने नीम के वृक्ष काटने शुरू किये, तो निस्तब्ध रात में आरे की घसर-घसर संगीत की तरह सुनायी दे रही थी, जैसे गुरुद्वारे में हारमोनियम बज रहा हो। उन सभी के शरीर नशे से बोझिल थे। घंटे-डेढ़ घंटे में उन्होंने सारी नीमें तीन-तीन फुट ऊपर से गाजर की तरह काट कर रख दीं। नीम के वृक्षों को 'काड़-काड़' करके धरती पर गिरते कईयों ने सुना, लेकिन सर्दी का मौसम होने के कारण कोई बाहर न निकला। दूसरे, लोग वैसे भी सयाने हो गये थे।

सूर्योदय होते ही सारे गांव में इसकी चर्चा थी। जलौरे को पता चला तो वह अंदर से जल उठा। वह क्या सोच रहा था, क्या हो गया ! उसे अपने हाथ-पैर ठंडे लगे। वह भागा-भागा सरपंच जैलदार के पास गया। उन्होंने उसे पुलिस में रपट लिखवाने को कहा, पर जलौरा कबीलदारी का मारा थाने जाने से डरता था। उसे मालूम था, बात कचहरी तक पहुंच गयी, तो बड़ी फजीहत और पैसे की बरबादी होगी। वह पहले ही कुछ टूटा हुआ था। पर पीछे हट कर भी गुजारा नहीं था । अगर आज वह थाना चढ़ कर नहीं लाया, तो कल को शरीक सिर पर चढ़ेंगे। दूसरे, आगे से पंचायत उसकी सहायता नहीं करेगी, क्योंकि वह उनके 'कहे' पर नहीं चला था। जैलदार ने उसकी झिझक देख कर यह सब कह भी दिया था। आखिर वह ब्याज पर रुपये उठा कर थाना ले आया। थानेदार ने आकर 'मौका' देखा, लेकिन दोषियों में से कोई हाथ न लगा। वे सारे ही इधर-उधर हो गये थे। कैलू पहले तो दीपो से लड़ा-झगड़ा, लेकिन जब दीपो ने उसे बात समझायी, तो वह भी उसके कहने पर कहीं आगे-पीछे हो गया।

थानेदार ने सभी का सामान उठा लाने का आदेश दिया। जब नौहणे का सामान उठाने गये तो घर आये थानेदार को करतारे ने कहा, "हमारा तो जी, उससे वास्ता नहीं। वह फिरंट है !" और बायें हाथ की छोटी-सी खस्ता हाल कोटरी की ओर इशारा करते हुए कहा, "यह है जी, उसकी जायदाद, जैसे सलाह हो, जनाब कर लें।"

केवल भी न मिला। दूसरी बात यह थी कि नीमें साझे स्थान पर थीं।

थानेदार ने जैलदार से कहा, "जैलदार साहब ! यह तो बात गलत हो गयी !"

"कैसे जी ! थानेदार जी?"

"आपको पहले सोच तो लेना चाहिए था ! साझी चीज है, और फिर इन्होंने अपनी नीमें ही तो काटी हैं—यहां तो लेने-देने को भी कुछ नहीं है।" और यह कह कर थानेदार उसके चेहरे की ओर देख कर हंस पड़ा।

"जनाब, आपने तो घाट-घाट का पानी पिया है, कोई राह निकालिए।"

"वह तो करेंगे ही। यहां से खाली हाथ थोड़े लौटना है। तू देखता जा ! सब दुरुस्त कर देंगे !"

यह कह कर वह नजरें नीची कर के सोचने लगा। थानेदार के चेहरे और शरीर पर चर्बी की मोटी परत चढ़ी हुई थी। ढलका हुआ, थुलथुल मांस ऐसे लग रहा था, जैसे जरा ज्यादा ही पक गया हो ! भरे-भरे चेहरे पर भरी-भरी, कटी-छंटी दाढ़ी, गजेब का सा भ्रम पैदा कर रही थी। तीखी मुड़ी हुई मूंछों को वह रह-रह कर चुटकी की दाब से मरोड़ रहा था। चौकीदार ने चाय ला कर रख दी थी। चाय की प्याली मुंह को लगाते हुए थानेदार ने जैलदार से आंख मिलायी।

"जैलदार साहब! अगर गांव में पैर जमाये रखना है, तो इन लोगों पर काठी डाले रखो!"

"वैसे तो जी, इन्हें औकात में रखते हैं !" जैलदार के खुरदरे चेहरे पर एक खिसियानी-सी मुस्कराहट थी।

"अब तो देख लो, आपके सामने दुलत्तियां मार रहे हैं ! दो-चार केस बनाये रखो ! एक तो हमारा काम चलता रहेगा, दूसरे तुम्हारा रौब बना रहेगा। क्यों, क्या सलाह है?" थानेदार ने चुटकी से बायी मूंछ को मरोड़ते हुए आंख मार कर पूछा।

"वैसे तो जी, किसी को कभी बोलने नहीं दिया! लेकिन यह बहन का यार केवल काबू में नहीं आ रहा !"

"इसके चूतड़ों पर कसके लगवा देनी थीं, ढील किसलिए की!"

"बहुत बार लगवायी है। पता नहीं साले की हड्डियां किस चीज की बनी हुई हैं?" जैलदार ने थोड़ा रुक कर कहा, "असल में इसकी यहां एक औरत से यारी है। वह कंजरी ऐसी खुर्राट और दिलेर है कि वही इसके पैर नहीं लगने देती !"

"ऐसी कौन-सी स्त्री है?" थानेदार की आंखें हंसने लगीं, "ला, दिखा तो सही!"

"वही, जिसने नीमें कटवायी हैं !"

"फिर तो बात बनी पड़ी है।" थानेदार ने प्रसन्न होते हुए टांग-पर-टांग रखते हुए कहा, "बहाना अपने पास है। इसे हम थाने ले जाते हैं—साली के दो दिन में सारे बल निकाल देंगे! अपने-आप 'रीं-रीं' करता हुआ आयगा!"

"ना जी!" जैलदार ने लंबी, लटकती हुई आवाज मे कहा, "इस तरह तो सारी बात ही बिगड़ जायगी। आपको जी, जाटों की मत का नहीं न पता जी ! आजकल तो जाटों का राज है। दूसरे ये लोग बहू-बेटियों की इज्जत के ज्यादा साझी होते हैं ! इस तरह से सारी बात मेरे ऊपर आ जायगी !—सारे ही टूट जायेंगे। यहां तो कोई और ही ढंग बरतना

पड़ेगा!"

"जैलदारा तू पुलिसिया नीति से काम नहीं लेता !" थानेदार ढीला-सा हो गया।

"अब जी, पुलिसिया नीति से काम नहीं चलता—यहां तो अब किसी और ही नीति से काम निकलेगा!"

दोषी हाथ नहीं लगे, तो थानेदार ने चक्कर में डालने के लिए यह कह दिया कि वह गंडे की बहू को थाने ले जायगा। बहू-बेटी की बात थी। गंडा गिरता-पड़ता हाथ जोड़कर मिन्नतें करने लगा।

"जनाब! क्षमा कर दीजिए। बहू-बेटी की इज्जत का सवाल है।" थानेदार दो कदम पीछे हट गया। गंडा और निकट गया। फिर थानेदार ने तैश में आ कर गंडे की दाढ़ी पकड़ ली और दांत पीसते हुए खीझ कर उसे झकझोरा, "कमबख्ता। तब नहीं रोक सकता था, अब चूतड़ों में जलन हो रही है!"

कई बुजुर्ग लोगों ने गंडे की दाढ़ी में हाथ पड़ते देख आंखें नीची कर लीं, जैलदार ने गंडे को छुड़वा दिया। गंडे ने क्षण भर बाद दो-सौ रुपए पकड़ाये। सौ रखकर उसने सौ थानेदार की जेब में डाल दिये। थानेदार ने सभी को झिड़का। जलौरे से उसने कहा कि अगर वह बात को और ज्यादा उलझायगा, तो बात और भी ज्यादा बिगड़ जायगी !

नीमें जैलदार और सरपंच बांट कर अपने-अपने घर ले गये और लोगों से कह दिया "क्लेश निपटाने के लिए ऐसा किया है।"

19

एक दिन अच्चरवालिया काका बंतो के घर में से निकला। केवल की त्योरियां चढ़ गयीं। दिल तेजी से धड़कने लगा। काके ने अंदर से निकलते ही मूंछों पर ताव दिया और थोड़ा खांसा। उसका मटमैला मखियाला रंग, अधपकी दाढ़ी पर राख पर पड़ी बरखा की बूंदों-सा लगता था। नीली बोस्की की चादर उसकी काली गुरगाबी पर गिरी हुई थी। और बीच में से गेहुएं रंग की सफाचट टांगें दिखाई दे रही थीं।

"सुना भई जवान, क्या हाल है?" पगड़ी को दोनों हाथों से हिलाते हुए और लंबे लड़ को ठीक करके छाती पर टिकाते हुए उसने पूछा।

"ठीक है!" केवल ने उसकी ओर एक बार देख कर नजरें नीची कर लीं। लगा जैसे काका मूंछों में मुस्कराया हो!

"क्या बात है, बड़ा रूखा बोल रहा है?"

"नहीं तो—हम . . .रूखा किसलिए बोलेंगे !" केवल ने आंख उठा कर काके के उतरे हुए मुंह की ओर देखा और फिर तेजी से दरवाजे के अंदर दाखिल हो गया। उसने दरवाजे के अंदर से ही दूर से चले आते मीके की आवाज सुनी। वह काके का मखौल कर रहा था।

"पंतदरा ! तेरी तो पांचों घी में हैं, पूरा ही खाता है !"

"घी कौन-सा यूं ही आ जाता है!" काका जैसे रहस्यमय हंसी हंस रहा था।

"ठीक है बाई ! खाल उतराये बगैर कौन नजदीक फटकने देता है?"

और आहिस्ता-आहिस्ता बातें करते वे परे सरक गये। केवल ने उनकी बातें सुनने के लिए कान लगाये, लेकिन दूर से आती आवाज की 'गुन-गुन' ही सुनाई देती थी। उसकी आंखों में से आग-सी निकलने लगी। तेजी से उल्टे पांव वह गली में आ गया और उसी चाल से बंतो के घर के अंदर घुस कर चौके के पास जा खड़ा हुआ। बंतो बरामदे में अपने ध्यान में चरखा कात रही थी।

"अच्चरवालिया क्या करने आया था?" केवल ने गुस्से को दबा कर पूछा।

बंतो ने चरखे की हत्थी रोक कर सिर ऊपर उठाया। सामने खड़े केवल के कसे हुए चेहरे को देख कर घबरा सी उठी। वह केवल का खासा दबाव मानती थी।

"मैंने पूछा, क्या करने आया था?" केवल फिर बोला।

"मीते के बापू के पास आया था।" शांति से जवाब दे कर बंतो चरखे की ढीली पड़ी डोरी को खोल कर कसने लगी। तभी उसके कानों में केवल का जला-भुना बोल पड़ा—

"मीते के बापू से या तुझसे?"

"मुझसे मिलने आया है !" बंतो के भीतर से एक जलन-सी उठी। यह मुझे मेरे घर पर दबाने आया है, मैंने इसका क्या बिगाड़ा है ! अंदर से आत्मसम्मान जागा—"तू जरा, मूंह संभाल कर बोला कर!"

"मुंह संभाल कर मैं बोलूं? कमजात! नित्य नये यार तू हंडाये!" और केवल दांत पीसता हुआ गुस्से में उसकी ओर लपका। बंतो चरखा छोड़ कर पीछे हट गयी। लेकिन गुस्से के मारे उसका सूखा हुआ शरीर धौंकनी की भांति हिल रहा था।

"लफंगे जाट !" बंतो जोर से गरजी, "तू मुझे अक्ल देने आया है, तेरी शोभा का ढोल जो गली-गली पीटा गया है, वह नहीं याद . . .!"

"तेरी मां की . . .। तूने . . .कुत्तिये हमारी हर जगह फजीहत करायी है !" केवल ने छूटते ही पैरों में से जूता उतार कर जोर से बंतो की ओर चलाया। जूता दीवार में लग कर कुछ दूर जा गिरा। केवल फिर दांत पीस कर बंतो पर झपटा और उसके एक धौल जमा दी। उसकी पतली-मैली चुनरी उतर गयी। नीचे से रूखे और उलझे हुए बाल नंगे हो गये।

"अपने-आप को संभाल ले . . .। अगर मुझे हाथ लगाया" बंतो ने चुनरी संभालते हुए, गरज कर कहा।

"ठहर जा, तेरी बहन की . . .।" केवल ने पास पड़ी जूती उठा कर उसके पांच-सात जड़ दीं। बंतो ने "मार दिया रे लोगो" का शोर मचाते हुए आसमान सिर पर उठा लिया। छोटे बच्चे मां को रोती-चिल्लाती देख कर चीखें मारने लगे। पड़ोसी छुड़ाने के लिए आ गये। जैब घर में नहीं था। स्त्रियों ने केवल को समझा-बुझाकर घर भेजा। बंतो चिल्ला-चिल्ला कर गला फाड़ रही थी।

"हरामजादा, लुच्चा ! तू बोलने को मरता है कुत्ते। तू रह जाय सोया पड़ा ही। तेरे कीड़े पड़ जायें . . .!"

स्त्रियों ने उसे शांत करते हुए कहा, "अरी, वाह गुरु बोल! आजकल मर्दों के सिर में तो राख पड़ी हुई है ! अरे भाई, तेरा क्या हक? तेरी औरत नहीं . . .न लेना, न देना तू खामखाह बेगानी औरत पर हाथ उठा रहा है। हैं ! दूसरे की बीवी है, वह पांच करे, पचास करे! तेरा क्या आता जाता है? लो करो बात !"

लेकिन तभी पास ही से नंबरदार ने बातें बनाते हुए कहा, "कोई बात नहीं ! देवरों-जेठों का भला हक नहीं समझाने-बुझाने का! मर्दों की बराबरी भला औरत कैसे करेगी? वह तो औरत ही रहेगी। भाई ! अगर मर्द न रोकें, तो यह तो शाम तक ऐसी की तैसी कर दें !—मर्दों से भला कोई बराबरी है, औरत की। हां तो . . .!"

शाम को घर आये अजैब के सामने बंतो दोहत्थड़ें मार-मार कर रोयी-धोयी। जैब खामोश ही रहा। उसमें लाठी उठा कर, भाई से लड़ने की हिम्मत नहीं थी। बंतो जिद किये बैठी थी कि वह पंचायत इकट्ठी करे या थाने जाय।

जैब ने बंतो को समझाते हुए कहा, "अरी पगली! उसके साथ सींग फंसा कर हमें क्या लेना है? . . .चार खेत हैं, उनसे भी हाथ धो बैठेंगे।"

"जमीन न, तुझे कुछ और देगा !" बंतो ने होंठ खोल कर 'पीले-पीले' दांत बाहर निकाले। गुस्से में उसका मुंह 'खप्पर' जैसा लग रहा था—"वह तो कहता है कि मैं उस कुत्ती को दे दूंगा और तू संभाल रहा है, उससे मुरब्बे !"

इस बात पर भी सभी में तकरार होती थी। लीखा और लीखे की बीवी अलग नाराज थे। उनका परिवार बढ़ गया था और पिछली शौकीनी सब भूल गयी थी। वे भी केवल के चार किल्लों पर निगाह लगाये बैटे थे। उन्हें इस बात का दुख था कि तीसरी गली की जाटनी उनका घर 'समेटती-संभालती' जा रही थी। बंतो भी जब कभी बातें चल पड़तीं, तो अपनी अक्ल के अनुसार उसे जतलाती, "अब तो बंद कर केवल को नोच-नोच कर खाना! कल तेरे घर बहू आ जायगी तो . . .!"

"बहन, तेरा मैंने क्या बिगाड़ा है। तू जब भी बोलती है, कहती है—यहां से मैं केवल को खा गयी, केवल मुझे खा गया, इसमें पेट क्यों दर्द करता है।"

बंतो उसकी जली-कटी सुन कर, चुप हो गयी, पर फिर मजाक में हल्की-सी आवाज में कहने लगी— "मैं तो यूं ही कह रही हूं। हमारे लिए भी छोड़ दे थोड़ा-बहुत ! तू तो सारा ही डकार जायगी !"

"तू क्या समझती है री, मुझे?" दीपो ने नथुने चौड़े करके हाथ उसके कंधे पर मारा, "भई, मैंने केवल को खाने के लिए ही तो फांसा है ! ऐसे खाने के पीछे जाती है, मेरी जूती। मैं कोई ऐसी-वैसी औरत नहीं हूं कि आज इस नांद में मुंह मारूं, कल किसी और में। तू सोचती है, मैं उसके चार खेत खा जाऊंगी। मैं क्या समझती हूं केवल की जमीन को। मैं मुरब्बों की मालकिन हूं। मैं थूकती भी नहीं इतनी सी जमीन पर।"

बंतो उसके चेहरे की ओर देखकर चुप हो गयी। मन में सोचने लगी,'किसलिए बात बढ़ायी!' दीपो ने फिर उसकी खबर ली।

"मैं तो अब तक केवल को खिलाती रही हूं। अगर मैंने उसे खाना होता तो वह यहां टिक सकता था क्या? वह तो यहां ढूंढने पर भी न मिलता।" दुप्पटे को ठीक करते हुए, नाक को उसी तरह नखरे से सिकोड़ते हुए उसने फिर कहा, "वह लीखा और लीखे की बीवी भी हर एक के पास मुंह फाड़ कर कह देते हैं, केवल को खा गयी। मेरे घर में किस चीज की कमी है री? मैं तो अपने घर की रानी हूं, रानी।"

"अगर तू रानी है, तो रानी बन कर रह न, नेकी काहे को फैलायी है?" बंतो ने लड़ाई से डरते-डरते कहा। वह उसकी बात सुनकर शांत हो गयी। फिर बात को टालते हुए छाती थपथपा कर कहा—"ले, अब तक तो मैंने तेरे साथ शरीका नहीं किया, अब करके दिखाऊंगी। घर के एक-एक सदस्य ने मेरी जो बदनामी की है—अब तुम केवल वाली जमीन में हल जोत के दिखाना !"

"जमीन तो हक वालों को मिलती है।" बंतो ने बड़े गर्व से कहा।

"केवल तुम्हें देगा, तब ही हक वाले बनोगे न !"

बंतो ने दीपो के साथ बराबर जबानबाजी नहीं की, क्योंकि दीपो जरूरत पड़ने पर बंतो की मदद कर देती थी, इसलिए बंतो चुपचाप कान बंद करके वहां से चली आयी। दीपो के दिल में इस बात से अपार क्रोध भर आया। उसने केवल से बात की। केवल ने मन ही मन, एक बेहद सड़ी हुई गाली, अपने घरवालों को दी।

"तूने चुप क्यों धारण कर ली?" दीपो ने उसे खामोश देख कर, गुस्से से भर कर पूछा,

"एक तो खुद धक्के खाता फिरता है, दूसरे मुझे भी धक्के खिलाता है। किसी किनारे लगे होते, तो शरीकों के ताने तो न सुनते !"

"फिर तू ही बता, मैं क्या करूं !" केवल ने उसकी ओर गुस्से से देखा। उसे दीपो की मीरासिनों जैसी बातें बुरी लगती थीं।

"तूने क्या करना है? तू मजे लूट, ऐश कर ! जूते तो मुझे पड़ते हैं न ताड़-ताड़। तुझे क्या . . .?"

"फिर मैं किस कुएं में डूब मरूं !"

"तुझे कुएं में डूबने की क्या जरूरत ?" दीपो के बोल आहों में बदल गये, "कुएं में तो मैं डूबूंगी,जिसने न आगा देखा न पीछा—पहले मां-बाप दुश्मन हो गये। जिससे नाक पोंछने की भी अक्ल नहीं थी उसके पल्ले बांध दिया मुझे—तेरे ऊपर क्या जोर है, जब रब ने ही बुरी रेखा खींच दी !"

सरदियों की धूप सेहन में पूरी पड़ती थी। सिसकियां भरती हुई दीपो को केवल ने चुप नहीं कराया, दिलासा भी नहीं दिया। उसका जी भी किया, लेकिन वह दिलासा न दे सका। उसके अपने मन में एक लहर-सी उठी। बोल गले में ही अटक कर रह गये। आंखें बोझिल हो गयीं।

"सौ बार तुझसे कहा है, मेरे साथ इन गंदे लोगों की बात न किया कर!"

"मैं भी जान-बूझ कर अपना दुख सुनाती हूं।" उसकी आवाज में अभी तक भी दर्द भरा था।

दीपो चारपाई की रस्सियों को नाखूनों से कुरेदती हुई, अपना मन हल्का करती रही। पल-पल बाद उसकी नाक का सुड़ाका सुनायी देता। केवल उसकी बातों का जवाब दबी जबान से देता रहा। वह कई दिनों से खुद ही, उखड़ा-उखड़ा-सा फिर रहा था। उसे बाहर कुछ अच्छा लगता था, न अंदर। दीपो ने आंगन के बीच में जा कर गरदन मोड़ कर, बटेर जैसी आंखें घुमायीं। उसे नजरें नीची किये बैठा देख कर, उसके भीतर से एक ठंडी आह निकली और उखड़ा मन लेकर दीपो चली गयी।

पिछले कुछ दिनों से केवल का कहीं जी नहीं लग रहा था। तीस को पार कर चुकी उम्र को देख कर, उसका दिल रेत की दीवार की तरह गिरने लगा था। और चार वर्षों में, उसे बूढ़ों में शामिल हो जाना था। बंतो के घर की गहमागहमी, बच्चों की 'चिल्लपों' और बंतो के गरजते बोल ! सेहन में खड़े पशु और शाम के समय आंगन के बीच में चारपाई डाल कर लेटे अजैब को देख कर उसका दिल और भी उदास हो जाता था। अपने आंगन की वीरानी देखकर छाती में टीस-सी उठती। आधे आंगन में घास काफी ऊंची हो गयी थी। कभी-कभी वह बच्चों की कतार देख कर कांप उठता था। एक बार फिर बंतो के चौके में 'धप्-धप्' सुन कर भीतर से एक कंपकंपी-सी उठी। सारा शरीर पीपल के पत्ते की तरह कांप उठा। चारपाई से उठ कर चादरा कमर के इर्द-गिर्द लपेटा, सिर पर काली पगड़ी बांधी, तो नजरें सहसा दरवाजे के सामने बने ईंटों के चबूतरे की ओर घूम गयीं। कच्ची दीवारों की पपड़ियां उतरी हुई थी और नीचे से दरारें सांपों की तरह झांक रही थीं। खामोश

आंखें बाहर वाले दरवाजे के पास लगे मिट्टी के ढेर की ओर उठ गयीं। उधर से बंतो की आवाज गरजी। आंखें फिर बोझिल हो गयीं। एक लंबी आह भर कर वह बाहर चल दिया। बारिशों से ढह गयी नांद, और कहीं-कहीं से टूटे कुएं की तरह उखड़ी हुई मुंडेर को देख कर उसके कलेजे में एक दर्द-सा उठा। गली में से उसे दो व्यक्तियों के बोल सुनाई दिये।

"यार, गरीबी भी मार देती है आदमी को।" यह ऐनक बाज सरदारे का बोल था।

"कुछ न पूछ यार ! मुर्गा बना देती है। ज्यादा दूर क्या जाना है, रेरू-घीसू की ही बात ले लो। चार दिन हो गये भैंस को ब्याये . . .। घर में बच्चे भूखे बैठे हैं, भैंस के लिए दाना कहां से लायें . . . ?"

केवल का मन रेरू-घीसू की ओर चला गया। दूसरे व्यक्ति का बोल पहचानने की उसने कोशिश न की।

लेकिन सरदारे की कच्ची हंसी उसने फिर सुनी।

"हमारी पड़ोसिन बंतो गरीबी की मारी ही, नित्त नया मुर्गा फांसती है . . .और . . .।"

केवल का चेहरा एकदम पीला हो गया। मन में एक कसक-सी उठी कि सरदारे को बालों से जा पकड़े। यह साला कौन होता है . . .ऐसा कहने वाला . . .!

लेकिन गली में पहुंचने तक सरदारा और उसका गुस्सा, दोनों ही गायब हो चुके थे। दरवाजे में खड़ा मूंछों को ताव देता, उन्हें खड़ी करता रहा और नजर नीची करके अपनी मूंछों की छाया को देखता रहा। खड़े-खड़े वह जैसे ऊब-सा गया था। पैर गांव की अंदर वाली गली की ओर चल पड़े। चौपाल मे चार-पांच बुजुर्ग बैठे बातें कर रहे थे। केवल मूंछें ऊपर चढ़ाता उनकी बातें सुनने लगा।

"आज-कल तो वक्त ही बुरा आ गया है, भाई। पहले हमारे जमाने में जवान लड़के-लड़कियां इकट्ठे खेला करते थे। अब तो, समझ बाद में आती है, इश्क-मुश्क पहले शुरू हो जाता है।"

"राम राम करो जी, आजकल के छोटे-छोटे बालक ही किसी की बातें नहीं सुनते !"

केवल का ठहाका 'हुंह' ही आवाज बन कर निकला। और वह मूंछों में ही हंस कर, शरीर को ऐसे झटक कर चल पड़ा जैसे बूढ़े लोग अपनी औकात समझ लें। बूढ़ों ने आंखों के मोटे-मोटे पपोटों पर हाथ रख कर देखा और देखते ही रहे। दूर से चादरे की 'खड़-खड़' के बीच, उसका बोल सुनायी पड़ा, "बूढ़ी-खूसट हर किसी से 'माई' कहलवाती है।"

और बूढ़े एक-दूसरे के मुंह की ओर उल्लुओं की तरह देखने लगे। केवल यूं शान से चलता गया, जैसे उन सभी को ठंडा कर आया हो। उसके पैर अपने-आप ही 'रेरू-घीसू' के घर की ओर उठते गये। सामने से संधूरे अफीमची की मां को आते देख कर, उसकी चाल धीमी हो गयी। बुढ़िया ने आंखों पर हाथ रख कर बड़े गौर से उसे देखा और पहचान लिया।

"अच्छी है ताई?"

करतारो ने उसका सिर सहला कर कहा, "मैं सोच रही थी, न जाने कौन लड़का है,

राजी तो क्या होना है पुत्र ! बस, जैसे परमात्मा घसीटता फिरता है, वैसे ही चलते फिर रहे हैं !"

करतारो ने एक ठंडी आह भरी और उसके कानों की बालियां हिलीं। उसकी चमड़ी में झुर्रियां पड़ी थीं। गरदन पर बूढ़े मांस में, नाड़ियां केंचुओं की तरह उभरी हुई थीं। आंखों की चमक कम हो गयी थी।

"संधूरे का क्या हाल है?"

"कुछ न पूछ ! उसने तो हमें बांस पर लटका रखा है, बेटा !" करतारो ने बड़े दुख के साथ, माथे पर हाथ मारा और इधर-उधर यूं सिर हिलाया, जैसे दलदल में फंसी बाहर न निकल पा रही हो।

"हर रोज कोई-न-कोई शिकायत आती है। सुन-सुन कर कान पक गये हैं। आज उसके भुट्टे तोड़ लाया, कल उसकी कपास चुन ली। बता भला . . .किस कुएं में डूब मरें हम। परमात्मा भी उसे नहीं उठाता। रोज-रोज का टंटा तो खत्म हो।"

"ताई, यह तूने क्या कहा?" केवल ने हैरान होकर पूछा।

"दिल की बात मुंह पर आ ही जाती है, बेटा ! जब बंदा दुखी हो, तब सब कुछ कह जाता है। मैंने तो जब से जन्म लिया है, सारी उमर एक दिन भी सुख की सांस नहीं ली।—न जाने सुख क्या होता है! पता नहीं, परमात्मा ने भाग्य-रेखा कैसी बनायी है, सारी उमर हालत खस्ता ही रही।"

"कोई बात नहीं ताई ! तू हौसला रख, मुश्किलें-मुसीबतें भी तो आदमियों पर ही आती हैं।"

"कहां का!" करतारो ने आंखें बंद कर के, इनकार में सिर हिलाते हुए हाथ हिलाया, "अब काहे का हौसला ! पुत्रों पर आस थी, उन्हें अफीम ने गला दिया।सोचा था, शायद बुढ़ापे में दिन बदल जायेंगे, पर नहीं। उनका मल-मूत्र भी मुझे ही साफ करना पड़ता है। वह मुआ, 'जाय-ख़ाने' का, बांस जैसा लंबा संधूरा है न, घर में ही टट्टी-पेशाब करने बैठ जाता है। काम करने से हाथ मैले हो जाते हैं उनके। हमारी जून तो भाई . . .!" बुढ़िया ने नाक-भौं चढ़ाकर मरी-मरी सी आवाज निकाली और माथे पर हाथ मारते हुए गहरी सांस ले कर कहा—"हाय,हाय, यह नरक भी भाग्य में लिखा था . . .!"

"ताई, आदमी को गरीबी मार देती है!" केवल को कहने के लिए कुछ सूझ नहीं रहा था।

"पुत्र !" उसने केवल के कंधे पर हाथ रखते हुए कहा, "ग़रीबी तो कट जाती है, आदमी थोड़ा खा ले। लेकिन पेट फाड़ देने वाली यह रोज-रोज की पीड़ा सहन नहीं होती! मुझे तो इस घर ने ले लिया ! पुत्र ! उन्होंने अपने पिता की ओर न देखा। रब के उस बंदे ने, मुझे सारी उमर सूली पर ही चढ़ाये रखा।"

केवल को ताई की बातें अच्छी न लगीं। संधूरे को कच्ची उमर में, जैलदारों के पशु चराने, उसी ने लगाया था। और फिर जैलदारों के साथ काम करते-करते वह नशे का आदी हो गया। घर में तंगी थी, जिसने उनकी हड्डियां पीस कर रख दी थीं ! पता नहीं क्यों,

केवल को ताई ज्यादा गिले-शिकवे करती अच्छी नहीं लगी थी।

"ताई, मैंने सुना है कि तुम्हारे पड़ोस में कोई भैंस है?" केवल ने उसे अपने-आप बोलते जाते देख कर, बीच में ही पूछ लिया।

"किसके?"

"रेरू-घीसू के।"

"हां, है!" ताई ने थोड़ा जोर से कहा—"खड़ी है! तीन-चार दिन हुए, ब्यायी है।" उसने आगे-पीछे देखते हुए, आहिस्ता से कहना शुरू किया "बेच रहे हैं। हमें तो अब पड़ोस में होते हुए, सब पता है न। लेने-देने वाले रोज तंग करते हैं। कमबख्तों पर हट्टियों-भट्ठियों का ही ढेर सारा कर्ज चढ़ा हुआ है। . . .तेरी लेने की सलाह है क्या . . .?"

"हां . . .है तो . . .अगर सौदा बन जाय . . .तो . . .।"

"मार ले हाथ . . .सौदा सस्ता ही बन जायगा। भैंस को, चार दिन होने वाले हैं सूए, घास के अलावा कुछ नहीं देते उसे। तू तो खुद सयाना है, पुत्र! पशु को तो दाना चाहिए, बिनौले चाहिए। फिर मेरे भाई, ज्यादा न सही धड़ी-पंसेरी गुड़ भी जरूर चाहिए . . . पर यहां तो . . .!" और उसने रेरू के घर की ओर से संदिग्ध नजरें घुमाते हुए केवल की छाती पर हल्का-सा हाथ मारते हुए कहना शुरू किया, "आप तो रेरू बिलकुल ही आलसी है। बच्चे अभी छोटे हैं—वही गिरती-पड़ती, थोड़ी-बहुत घास इधर-उधर खेतों-मुंडेरों पर से काट लाती है, तो कहीं जा कर भैंस का पेट भरती है।" और बात्त को समाप्त करते हुए करतारो ने, सिर पर से ढलक गयी मैली-कुचैली चादर को खींच कर फिर सिर पर कर लिया।

"क्या मांग रहे हैं?"

"यह तो पता नहीं . . .तू पता कर ले, हताश हुए पड़े हैं। उन्होंने बेचनी थोड़ी है, एक तरह से फेंकनी ही है।"

"तो फिर पूछते हैं, ताई।" कह कर केवल रेरू के घर की तरफ चल दिया।

केवल ने रेरू के घर में जरा लपक कर झांका। बच्चों के अलावा घर में कोई और दिखायी न दिया। बच्चों ने अजनबी आदमी आया देखकर अपनी मां को बता दिया। चौके में भारी-भरकम देह और मोटे-मोटे नक्शों वाली, अंदर से खोखली हुई रेरू की बीवी, सिर के ऊपर का मोटा मैल-भरा दुपट्टा ठीक करती हुई उठी और फिर बाहर वाले दरवाजे के पास आ कर कहने लगी, "आ भाई !"

"सुना था तुम्हारे पास भैंस है।" केवल ने उसके कपड़ों और दागों-भरे मेंढकी की तरह चिपके हुए चेहरे को देख कर नाक चढ़ाया।

'है तो सही, भाई देख ले।"

केवल थोड़ा हिचकिचाता हुआ उसके पीछे-पीछे अंदर चला गया। टूटी-फूटी कच्ची नांद पर काले रंग की कुंडे सींगों वाली भैंस इधर-उधर चक्कर काट रही थी। उसके पैरों तले गोबर से लथपथ घास बिखरी पड़ी थी, जिसे भैंस थोड़े-थोड़े समय के बाद मुंह मारती और फिर फुंकारा मार कर फेंक देती थी। एक ओर दो मरियल-सी कटड़ियां,एक बछड़ी

और दो-चार बकरे-बकरियां खड़े केवल की ओर गुस्से से ताक रहे थे। भैंस से थोड़ी ही दूर एक पंच-कल्याणी कटड़ी पालथी मारे बैठी थी।

"दूध कितना है?"

"दूध! भाई, अभी तो तीन दिन ही हुए हैं ब्याये। झूठ क्यों बोलें, हमने तो कसम खाने को भी इसे गुड़ और चने नहीं दिखाये। बेचारी को चारे पर ही दोहते हैं। खिला-पिला तो कुछ सके नहीं, फिर भी दो थनों का दो सेर, एक वक्त का और दो सेर दूसरे वक्त का हो जाता है। दो थन कटड़ी को छोड़ देते हैं—फिर अभी पहलौठी ही तो है !"

"दाम-दूम क्या है?" केवल ने भैंस को इधर-उधर से देख-जांच कर पूछा। उसने और निकट होकर भैंस का थन देखना चाहा। भैंस चक्कर काट कर परे हट गयी और डरी-सहमी सी इधर-उधर ताकने लगी। थन बाहर को निकला हुआ था। थन अच्छा था।

"सीरे का बापू आने ही वाला है, उसे ही पता होगा !"

"वैसे घर में बात तो हुई होगी?" केवल ने व्यापारियों की तरह उसे पैरों से निकालना चाहा।

"नहीं, अभी कोई बात नहीं हुई। न किसी ग्राहक ने ही चलायी है। आते हैं, देख कर चले जाते हैं।" लगता था, वह केवल से भी ज्यादा तेज है।

केवल को भैंस पसंद आ गयी थी। वह भैंस को खोल लाने की नीयत से, दूसरे दिन बिशने को साथ लेकर फिर वहां जा पहुंचा। रेरू ने सात सौ मोल किया। केवल ने साढ़े पांच सौ कह दिया। पर रेरू 'किच-किच' करने लगा। बिशने ने पांच उधर से घटा, पांच इधर से बढ़ा कर छह सौ में भैंस का सौदा तय करवा दिया। पैसे नकद देकर केवल ने भैंस घर ला कर बांध ली। इतने से ही, केवल को अपना आंगन भरा-भरा लगने लगा।

"बधाई हो, केवला !" बंतो ने दीवार के ऊपर से सिर निकाल कर तीखी आवाज में कहा। केवल ने ऊपर की ओर देखा। उसे बहुत पहले की बात याद आ गयी। बंतो का खिला चेहरा देख कर, वैसे ही बोला, "परमात्मा सबको दे।"

"कितने लगा दिये?"

कटड़ी को जरा परे छोटी-सी खूंटी गाड़कर बांधते हुए केवल ने कहा, "लगा दिये, कोई छह-सात सौ !"

"फिर तो अच्छी मिल गयी! वैसे थोड़ी कमजोर है !"

"यहां मोटी हो जायगी।" साथ आये बिशने ने कहा, "वे बेचारे तो रोटी के बगैर बैठे हैं। भैंस को क्या खिलाते? चार दिन अच्छा चारा खायगी, तो भैंस पर चमक आ जायगी।"

बिशना बंतो के साथ बातें करता रहा। केवल ने अंदर से गुड़ ला कर बच्चों में बांटा। खाली नांद देख कर, बंतो ने अपने घर से कटे हुए चारे का टोकरा भेज दिया। सारा दिन केवल खुश-खुश रहा। शाम को नौहणा और अमली आ गये। नौहणा भी अब अमली जैसा ही हो गया था। शराब, नशे वाली गोलियां और जर्दा वह बेहिसाब खाने लगा था। नौहणा भैंस की धार निकालने बैठ गया। केवल को दूध दोहना नहीं आता था। वह नौहणे के पास बैठ कर, थन दबाने और धार निकालने का तरीका सीखने लगा।

"यूं मुट्ठी में ले कर अंगूठे से दबाओ, तो फिर धार निकलती है।" नौहणे ने उसे थन हाथ में ले कर समझाया। केवल ने थन वैसे ही दबाया, पर ऊपरी दाब से दूध न निकला।

"धार जरा सख्त है।" केवल दूध की हल्की-हल्की फुहार बरसा रहा था।

"घी बहुत होगा।"

धार निकाल कर, केवल ने नौहणे को दूध गरम करने पर लगा दिया। बाकी आधे दूध में गुड़ डाल कर, भैंस के सामने रख दिया। फिर वे दूध पीने बैठ गये।

"यार! हमने 'थेई' तो की नहीं!" अमली ने गिलास में डाले हुए दूध की ओर देखते हुए कहा।

"सब थेई ही थेई है। वाहगुरु का नाम लेकर अंदर उड़ेल लो।" केवल ने दूसरा गिलास नौहणे को पकड़ा दिया।

"थेई के साले, तू भंगी है क्या?" नौहणे ने जैसे अमली को घूरते हुए डांटा।

"मर गया रे!" अमली ने शीघ्र ही गिलास नीचे रखते हुए, होंटों से 'सी-सी' की आवाज निकालते हुए, क्रोध में अपना हाथ जोर से जांघ पर मार कर कहा।

"आहिस्ता मर भूखे कहीं के!" नौहणे ने अपना गरम-गरम गिलास सावधानी से जमीन पर रख दिया. "यूं भूखों की तरह टूट पड़ा है, जैसे दूध कभी देखा ही न हो।" अमली ने नौहणे की ओर 'गहरी' नजर से देखा, जैसे उसे नौहणे की बात बुरी लगी हो।

हंसते-हंसते केवल को उच्छू आ गया। उसने मुंह एक ओर करते हुए, उसे पोंछा और फिर एक बार इतने जोर से हंसा कि उसकी आंखों में पानी आ गया। चादरे के पल्ले से, मुंह पोंछते हुए उसने कहा, "जरा ठहर कर पीना अमली यार, नहीं तो खामखाह हमारी ओर बुरी नीयत रखेगा।"

"जब बैठा ही नीयत वाली जगह पर हूं तो फिर नीयत तो रखूंगा ही।" उन दोनों की ओर देख कर अमली ने कच्ची-सी हंसी हंसते हुए नजरें झुका लीं। वे दोनों भी खामोश हो गये, जैसे उनको शरम आ गयी हो।

दूसरे वक्त का दूध, केवल ने आधा भैंस को पिला दिया, लेकिन बाकी आधे का क्या करे? उसके मन में एक सोच उभरी। थोड़ा बहुत पी लिया। दिल में ख्याल आया, गरम करने के लिए रख दे। उठ कर अंदर से पतीला लेने गया, तो विचार बदल गया, "कौन इतना झमेला करे।" पड़ोस में से बच्चों के बोल सुन कर उसने डोलचा बंतो को पकड़ा दिया।

पिछले दिन का गोबर आदि इकट्ठा करके, उसने एक ओर कर दिया। जंगल-पानी गया और उधर से ही वह छीलो के घर चला गया। सुबह-सवेरे मजहबियों की लाल-लाल गुदड़ियां, सेहन में चारपाइयों पर बेतरतीबी से बिखरी पड़ी थीं।

"आ चौधरी, आज कैसे भूल कर गरीबों की नगरी में आना हुआ?" छीलो टूटे-फूटे चौके में बगैर चुनरी के ही बैठी थी। उसके बाल इधर-उधर बिखरे हुए और ही तरह के लग रहे थे। दो-तीन नंग-धड़ंग बच्चे, उसके इर्द-गिर्द 'रीं-रीं' कर रहे थे।

"काम के बगैर आया जाता है कहीं।" थोड़े से स्थान पर दो-तीन कटड़ियां बंधी एक

दूसरी के खुर काट रही थीं। यह देखकर केवल ने नाक चढ़ायी। किसी भी नांद की मुंडेर तो थी ही नहीं।

"भैंस की तरह नथुने क्या चढ़ा रहा है? यह वही घर है, जहां दिन में दस-दस चक्कर मारा करता था।" छीलो खिलखिला कर हंस पड़ी।

"नहीं, नहीं मुझे तो टंड-सी लग गयी है।" केवल ने दिखाने के लिए नाक को सुड़ाका-सा मारा, "तू ज्यादा बातें न बना!"

"तो बता, और क्या करूं?" छीलो उसकी ओर मुंह उठा कर, रहस्यमय ढंग से हंसी। उसका इस तरह बनाया मुंह केवल को बहुत ही बुरा लगा।

"मैंने भैंस ली है! तू गोबर-कूड़े का काम कर सकती है, तो बता!"

"लो, करो बात!" छीलो ने फिर खिलखिल की —"अब तू हमसे गोबर-कूड़ा ही तो करवायेगा। यह तो वही बात हुई न कि नये-नये मित्त कुड़े, पुराने किसके चित्त कुड़े!"

केवल को उसकी यह बात भी बुरी लगी, लेकिन उसने गुस्सा नहीं दिखाया।

"तू पानी में 'मथानी' न डाल। कर सकती है, तो बता?"

"मैं नहीं करूंगी, तो और कौन करेगा? फिर भी कुछ साझा तो रहा है।" उसे अब यह दुख था कि केवल अब वह केवल नहीं रहा। वह अपने-आप को ऊंचा समझने लगा था।

"अच्छा, याद रखना!" यह कह कर केवल वहां से जल्दी ही चला आया।

"ले, तू तो भागा जा रहा है!" छीलो ने ऊंची आवाज में कहा, "हमने तो बातों-बातों में ही वक्त बिता दिया। चाय-पानी तो पूछा ही नहीं!"

"इसी में चाय-पानी आ जायगा।" और आंखों ही आंखों में हंसता हुआ केवल बाहर निकल गया। बाहर आकर उसने इधर-उधर देखा कि कोई देख न रहा हो! और काफी देर तक उसकी कंपकंपी कम न हुई।

20

मंडी से सौदा-सुलफ लेने गये केवल को छपार वाला नशेबाज जागर मिल गया। उसने काली चादर खींच कर बांधी हुई थी और बिस्कुटी कुर्ते के कंधों और गले पर चमकीले धागे से कढ़ाई की हुई थी। सिर पर टेढ़ी और लड़ छोड़ कर बांधी, नसवारी रंग की पगड़ी, उसके गोरे और 'खत' निकलवाये चेहरे पर सूरज की तरह चमक रही थी। उसने सुरमा रची आंखें मटकाते हुए केवल के साथ हाथ मिलाया।

"सुना फिर, कैसे गुजर रही है?"

"बढ़िया है ! तू अपनी सुना !"

"ऐश लूट रहे हैं, फक्करा। बारिश हो, आंधी आये, अपना काम ठीक है। यहां सड़क के बीच खड़े हैं, आ चाय पीयें।" वह केवल को नजदीक के चायवाले खोखे में ले गया। चाय वाले सूखे से घुटे सिर वाले बूढ़े से जाटों की तरह रौबदार आवाज में कहा, "अरे सेठ! जरा चाय बना, बढ़िया! पैसे जितने मर्जी लगा लेना !"

चाय वाला सूखे पपड़ी-पड़े होठों से 'लो जी' कह कर डोई से पतीली में पानी डालने लगा।

"और सुना, बाल-बच्चे ठीक हैं?"

"कौन-से बाल-बच्चे?" केवल ने मैले और टूटे-से मेज पर कोहनियां टिकाते हुए हैरान होकर पूछा।

"तो और . . .तुझे नहीं पता?" कह कर केवल हल्का-सा हंस पड़ा और बाहर सड़क की ओर देखने लग गया। सामने धूप में केलों की रेहड़ी के पास पटोर उमर के मजहबी और मजहबन केले खाते, एक-दूसरे की ओर देख कर रहस्यमय हंसी हंस रहे थे। केवल ने लंबी सांस खींच कर एक ठंडी आह भरी।

"क्या बात है यार? मैंने तो सुना था, तेरी मंगनी हो चुकी थी।"

"हुई तो थी !"

'फिर !"

"बीच में ही रह गयी थी।" केवल उसके चमकाये हुए चेहरे की ओर देख कर हंस पड़ा।

घुटे सिरवाले बूढ़े ने चाय ला कर रख दी। उसने अपना सफ़ा-चट सिर टेढ़ी-सी उंगुलियों से खुजलाया। जागर ने बर्फी मंगवा ली। बूढ़े के मैले-कुचैले कपड़ों और चीथड़े जैसे सड़े से चेहरे को देख कर केवल को एक झुरझरी-सी आ गयी। जाते समय केवल का हाथ पकड़ कर जागर ने आंखों में हंसते हुए, उससे पूछा—

'फिर ब्याह के बारे में क्या विचार है?"

"ब्याह अब क्या होगा, बहुत गयी, थोड़ी रही !"

"यह क्या बात हुई यार ! तू कह तो सही।" जागर ने कमर के पास से लुंगी उठा

कर ऊपर कर ली। नीचे से उसकी गोरी-गोरी मुंडी हुई जांघें मछली की तरह थिरक रही थीं। एक समय था, केवल को दीपो की आस थी। इससे जो खाक उड़ी, उसके कारण अब वह लोगों से डरने भी लगा था। वैसे रिश्ता होने की उसे कोई उम्मीद भी न थी।

"छोड़ यार !" केवल ने शरमाते हुए कहा।

"कहे, तो ले आऊं तेरे लिए . . .?"

"कोई नहीं ! सोचेंगे!" कहते हुए केवल दानामंडी की तरफ चला गया।

सौदा-सुलफ खरीद कर उसने 'बलचू' के रेहड़े पर रख दिया और खुद बसों के अड्डे की ओर चल पड़ा। नाई की दुकान के सामने आ कर, उसके कदम सहसा ही रुक गये। उसने मुंह पर हाथ फेरा। उसे दाढ़ी कटवाने लायक लगी। बाल अगुंल-अगुंल भर, हाथों में आते थे। लपक कर दुकान के अंदर चला गया। पटेदार बालोंवाला, तवे जैसा नाई हजामत बना रहा था।

"क्यों बाई, खाली है?"

"खाली ही खाली हूं जी!" नाई ने कुर्सी पर बैठे शौकीन-से बाबू की गर्दन पर कपड़ा फेरते हुए कहा। दो-तीन छात्र पगड़ियों के पेंच मुंह फेर-फेर कर शीशे में देख रहे थे।

नाई ने केवल के गले के इर्द-गिर्द कपड़ा लपेटते हुए पूछा, "कैसा काटना है?" नाई का मोटा ढलकता हुआ शरीर बुलबुले की भांति थिरक रहा था।

"कर दे यार ! कैसी भी ! हमें कौन-सा ससुराल जाना है।" और केवल शीशे में से छात्रों की ओर ताक कर हंस पड़ा। उनके बने-संवरे, चमकते-दमकते चेहरे फूलों जैसे लगते थे।

"ससुराल छोड़ चाहे साली के पास चले जाना।" नाई ने सहसा कहा, लेकिन केवल की हंसती हुई आंखें एकदम शोकपूर्ण बन गयीं।

"हैं जी !" नाई ने चुपचाप बैठे केवल से 'किरच-किरच' कैंची चलाते हुए पूछा।

"भाई अपनी ससुराल कहां? न जाने पिछले जन्म में किस तरह के बुरे कर्म किये थे !"

"मैं कहता हूं यार, तेरे तो तीन-चार जगह पर ससुराल होंगे और तू कह रहा है...!" नाई ने झुक कर, केवल के चेहरे के नक्शों को जांचा-परखा। पिछली ओर छात्र किसी खुराफात में मगन थे। केवल के अंदर से, फिर सोची हुई आह जाग उठी। उसे अपनी आंखों की पुतलियां, शीशे के भीतर से कांपती हुई प्रतीत हुईं।

"नहीं यार ! तू सच मान।" केवल ने एक बार फिर अपना कमजोर-सा मुंह दर्पण में देखा।

"अच्छा !" नाई ने हैरानी से सिर हिलाया, जैसे उसे विश्वास न हुआ हो। "नहीं यार! भला ऐसा भी कभी हो सकता है कि तेरे जैसे युवक की ससुराल न हो—तू यार, हमसे मजाक क्यों कर रहा है?" नाई ने कैंची और कंघी मेज पर रख दी और गर्दन पर उंगलियां लगाते हुए पूछा—"यहां उस्तरा लगाना है या मशीन?"

"जो मर्जी है, लगा दे !"

हजामत बनाते समय, नाई उससे बातें पूछता रहा। एकदम 'टिचन' होकर केवल ने उठकर, नाई को पैसे दिये।

"विश्वास नहीं होता, यार !" कुर्सी पर से, कपड़े से बाल झाड़ते हुए और केवल के ऊंचे-लंबे शरीर को देखते हुए, नाई ने अपने काले मुगदर जैसे जिस्म को थलकाते हुए फिर पूछा।

"झूठ बोल कर मैंने कुछ लेना है !" केवल ने कहा तो हंस कर ही, पर उसका दिल पिछले दिनों की तरह ही उदास था।

बस निकल गयी थी। वह तैयार खड़े स्कूटर में बैठ गया। सामने की सीट पर एक तगड़े शरीर वाली औरत अपने दो बच्चे लिये बैठी थी। फूलों की कढ़ाई वाला थैला उसने अपनी जांघों के बीच रखा हुआ था। बड़ा लड़का एक ओर लग कर बैठा था और गोदी वाला गोल-मटोल सा गेंद की भांति उछल रहा था। गोल-गोल और गोरा-चिट्टा और बिल्ली जैसे गालों वाला लड़का कभी अपनी मां के मुंह पर हाथ मारता, कभी उसके कानों की बालियों से खेलने लग जाता और कभी स्कूटर के बाहर लटकते हुए खाकी कपड़े के साथ झूलने की कोशिश करता। केवल को उस पर बहुत प्यार आया ! पल-दो पल के लिए बच्चे को अपने पास लेने को जी चाहा, लेकिन ले नहीं सका। दिल में अनेकों कड़वे संदेह उठ खड़े हुए। टकटकी लगा कर उसकी तोतली बातें सुनता रहा। बच्चे ने अभी बोलना शुरू नहीं किया था। वह 'ता-ता', 'पा-पा', 'री-री' की तोतली आवाजें ही निकालता था।

"टिक के बैठ रे। यूंही उछले जा रहा है, गेंद की तरह।" स्त्री ने उसे केवल की ओर करके अपनी जांघों पर बिठा लिया। बच्चा केवल की ओर अपने छोटे-छोटे हाथ फैला कर, जैसे उसे बुला रहा था। केवल होंटों में ही मुस्कराया। बच्चे ने उसकी ओर भोली-भाली, मोटी-मोटी आंखों से देखा और हंस पड़ा। और फिर उसने केवल की ओर जोर से बाजू ऊपर उठा कर किलकारी मारी, जैसे केवल को कुछ कह रहा हो। केवल ने आहिस्ता-से अपना हाथ, उसके हाथ की ओर बढ़ा दिया। बच्चे ने उछल कर, उसकी उंगुलियों को कस कर अपने हाथों में ले लिया। औरत ने उसे और आगे बढ़ा दिया।

"पप्पू ! तेरा मामा !" बच्चे की मां ने बच्चे को खेलते देख कर, खुश हो कर कहा, लेकिन केवल का मन जामुन जैसा खट्टा हो गया।

'बा-बा'—'मां-मां' बच्चा हाथों से केवल की अंगुलियों से खेलता रहा। केवल ने एक-दो बार, उसके होंटों को उंगली लगा कर 'शी-शी' किया। बच्चों वाली वह औरत लताले उतर गयी। स्कूटर आगे चल पड़ा। केवल गर्दन घुमा कर तब तक उधर देखता रहा, जब तक वे नजरों से ओझल नहीं हो गये। गांव तक वह उनके बारे में ही सोचता रहा। उसका दिल और भी उदास हो गया।

लेकिन घर आ कर भैंस और कटड़ी को देख कर उसका मन कुछ टिकाव में आ गया। बलचू घर में खली-बिनौले दे गया था। उसने हर तरह से भैंस की सेवा जारी रखी। भैंस का दूध और बढ़ गया।

लेकिन एक दिन कटड़ी रस्सा तुड़ा कर बड़े सवेरे सारा दूध पी गयी। जब केवल ने

उठ कर चारा डाला तो कटड़ी पेट भर कर भैंस की एक ओर तूंबे की तरह फूली बैठी थी। उसी रस्से को गांठ दे कर, केवल ने कटड़ी को बांध दिया। भैंस का सारा दूध पी जाने के कारण, शाम के समय कटड़ी ने दूध कम पिया। दूसरे दिन, सूरज छिपने के साथ ही जागर नशई आ गया। उसके साथ एक ऊंची-लंबी स्त्री थी, जिसने गोद में बच्चा उठाया हुआ था। हल्के-हल्के अंधेरे में लड़के का मुंडा हुआ सिर दिखायी दे रहा था। केवल बंतो को रोटियां पकाने के लिए कह कर, खुद बोतल ले आया। स्त्री परे चारपाई पर बैठ गयी। वे दारू पीते रहे और बातें करते रहे। जब वह स्त्री उठ कर बाहर पेशाब करने गयी, तो केवल ने जागर का हाथ दबा कर पूछा,

"यह कौन है?"

"कोई भी हो!" जागर ऊंची आवाज में बोला, जैसे उस औरत को सुना रहा हो—"तूने जात-वात को चाटना है? देख ले, ठीक लगती है तो . . .!"

"यूं कैसे?" केवल ने शराब गिलास में ढालते हुए जरा आहिस्ता से कहा, "कल यहां कोई टंटा खड़ा कर ले तो . . .!"

"टंटे वाली बात होती, तो मैं तेरे पास ले कर आता?"

बंतो रोटियां पकड़ा गयी। केवल और जागर को रोटियां पकड़ा कर वह कितनी देर तक उस स्त्री के पास बैठी रही और दबी आवाज में बातें करती रही। खाने-पीने के बाद जागर चारपाई डाल कर लेट गया और केवल की चारपाई उसने जबरदस्ती, उस स्त्री के पास डलवा दी। उसने अभी केवल के साथ कोई बात नहीं की थी। दीपक के प्रकाश में उसने औरत के चेहरे को देखा —रंग पूरा पका हुआ और नाक डोल जैसी चौड़ी, मुंह चप्पन कद्दू जैसा, खुरदरी चमड़ी। वह स्त्री केवल को जरा भी अच्छी न लगी। जात की वह केवल को मजहबन लगी। स्त्री ने उससे एक-दो बातें पूछीं, जिनका जवाब उसने 'हां-हूं' में दे दिया। फिर केवल ने उसे कुछ और पूछे बगैर ही कहा—"तू इसके हत्थे कैसे चढ़ गयी?"

"जब किस्मत ही ठोकर दे, तो . . .!" केवल ने एकदम उसकी ओर देखा। उसकी बैठी हुई आवाज उसे अजीब-सी लगी। कितनी ही देर तक, रात फुंफकारती रही।

"तेरा गांव कौन-सा है?" कुछ समय बाद केवल ने फिर उससे अचानक ही पूछ लिया।

"गालब।" स्त्री ने हल्की-सी आवाज में कहा-"पर तूने गांव से क्या लेना है। मैंने तो रोटी का जुगाड़ करना है।"

केवल फिर नहीं बोला। वह केवल की चारपाई की बांही की ओर लपकी, तो केवल को दुर्गंध सी आयी। उसने करवट बदल ली। क्षण भर वैसे ही पड़ा रहा। फिर उसे याद आया कि उसने तो आज भैंस का दूध ही नहीं निकाला। लेटे-लेटे ही बाल्टी की ओर निगाह मारी तो शरीर पर नींद हावी हो रही थी। उठ कर बाहर आया। भैंस खूंटे के इर्द-गिर्द चक्कर काट रही थी। क्षण भर सोच कर उसने कटड़ी के गले से रस्सी खोल दी। कटड़ी कुलाचें भरती, भैंस के थन को जोर-जोर से मुंह मारने लगी। बहुत तड़के जागर ने केवल को 'हां-नहीं' के बारे में पूछा। केवल कुछ भी कहने से हिचकिचा रहा था। लेकिन मेल-बेमेल तो चलता ही है! उसने बना-संवार कर बात शुरू कर, "यार देखने में तो स्त्री लगती है! कसम गुरु

की ! मैं तो सारी रात नाक बंद करके पड़ा रहा, साली दुर्गंध नहीं रुकी।" जागर ने उसकी ओर देख कर दिल ही दिल में कहा, "खुद साला बड़ा ब्राह्मण बना फिरता है !"

"अगर तेरे पंसद नहीं, तो रहने दे। हम कहीं आगे धकेल देंगे !"

"इसे देख कर तो लोगों के बच्चे डरेंगे। औरत क्या है, साली भूतनी ही है !"

जागर उसका व्यंग्य सुन कर हंस पड़ा।

"हमें इन बातों से क्या? अपने पैसे तो खरे हैं ! इसका घर वाला तो बिलकुल ही आलसी है। मेरी मिन्नतें करती है, कहती है, कहीं रोटी का जुगाड़ बना दे!"

केवल ने हंस कर हल्का-सा घूंसा उसकी बांह पर मारा और पीछे मुड़कर देखा। फिर हंसते हुए कहा—"एक का घर उजाड़ रहा है, दूसरे का बसा रहा है गुरू?"

"ऐसा ही है मित्र ! यह संसार ऐसा ही है।" जागर शरारती हंसी हंसते हुए और उसकी ओर ताकते हुए स्त्री के पास चला गया। मुंह-अंधेरे ही जागर उस औरत को लेकर वापस हो गया।

उसके बाद केवल ने भैंस को चारा डाला। चाय बनाते-पीते काफी दिन चढ़ आया। बाहर 'जंगल-पानी' हो कर आया तो छीलो आकर टोकरे में गोबर डाल रही थी। केवल ने फावड़े से गोबर हटा कर, बैठी हुई भैंस को हल्का-सा शिशकार कर और 'हुं-हुं' कर के उठाया। बाल्टी उठा कर पास ही ला रखी। बाल्टी को देख कर भैंस दूध देने के लिए सीधी हो कर खड़ी हो गयी। केवल ने कटड़ी खोली, तो वह चुपचाप बैठी रही। उसने दोनों हाथों से पकड़ कर कटड़ी को उठाया। वह बौखलायी और बेहोश-सी दिखायी दे रही थी। केवल ने उसे घसीट कर भैंस के नजदीक किया तो भैंस ने रंभा कर कटड़ी के नथुनों से अपने नथुने लगा कर उसे सूंघा। लेकिन कटड़ी थन नहीं पकड़ रही थी।

हाथों को झटकती और चुनरी को ऊंचा उठा कर, दोनों हाथों से झाड़ती हुई छीलो ने केवल से कहा, "लगता है, जैसे कटड़ी बीमार हो !"

"पता नहीं क्या हो गया !"

"यह तो अंधों को भी दिखायी देता है। कटड़ी तो चुपचाप खड़ी है, नहीं तो कटड़ू तो दूध को टूट कर पड़ता है। यह तो यूं खड़ी है, जैसे इसे जबरदस्ती घसीटा गया हो।"

"परसों और कल रात दोनों समय का दूध चूस गयी है।" केवल ने कटड़ी को इधर-उधर से देखते हुए कहा।

"तभी तो . . .! इसे तो फिर बाघी हो गया है। धड़ी दूध कोई थोड़ा होता है ! देख, खूंटे पर गोबर-पेशाब बिलकुल ही नहीं है। इसे दिखा बिशने को ला कर। दूधारू पशु तो स्त्रियों के संभालने की चीज होते हैं, मर्दों को क्या मालूम . . .!" और यह कहती हुई छीलो टोकरा उठा कर ढेर पर फेंकने चली गयी। कटड़ी को भैंस के आगे खड़ी करके, केवल ने दूध निकाला। दूध अंदर रख कर, बिशने की ओर चला गया। बिशने ने आकर कटड़ी के पेट को हाथ से दबा कर देखा। उसने बाघी ही बतायी। देसी जड़ी-बूटियां दुकान से लाकर, बंतो को रगड़ने के लिए पकड़ा कर खुद केवल दूध गरम करने लगा। बंतो ने आकर कटड़ी को काढ़ा पिलाया।

बिशने ने उसे कहा—"तू सयानी है ! इसे अकल क्यों न दी? सारा दिन अपने ही कामों में लगी रहती है। कभी और भी किसी का फायदा कर दिया कर।"

"नहीं तो जी . . .!" बंतो ने बिशने की तरफ से चुनरी का पल्लू दांतों में दबाया हुआ था, "कटड़ी तो अच्छी-भली थी, रात-रात में न जाने क्या हो गया।"

"तू चार छलांगें कम लगा लिया कर।" बिशने का रुख अभी तक भी मजाक वाला ही था, 'मैं तो हर समय तेरी सांस उखड़ी हुई ही देखता हूं। तू इसे किसी खूंटी से बांधने का बंदोबस्त कर दे न ! अगली आ कर स्वयं ही घर को संवारेगी और साथ ही इसे भी।"

केवल ने मुट्ठी भर दाढ़ी हिला रहे बिशने की ओर देखा। बंतो ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह कटड़ी को अंदर बांध कर घर चली गयी।

बाद में बिशने ने केवल को बहुत सयानी सलाह दी।

"तू छोटे भाई, चाहे कोई बहरी-भैंगी ला। यूं कब तक हाथ जलायगा?"

केवल ने आंखें चढ़ा कर बिशने की ओर देखा और अफिर नजरें नीची कर लीं।

"करूंगा, भाई कुछ . . .!"

"मैं मजाक नहीं कर रहा . . .! यह साली अपने लोगों को बुरी आदत पड़ी हुई है। घर-परिवार वाले का मान-सम्मान भी करते हैं, लेकिन छड़े से दो कोस दूर से ही गुजर जाते हैं, भई यह तो छड़ा है !" उसने अपनी धोती से नाक साफ करते हुए फिर कहा—"शरारत तो वे भी किये जाते हैं, जो बाहर भलेमानस बन-बन कर दिखाते हैं, पर छड़े को तो वैसे ही नहीं देख सकते ! . . . की हुई बात चुगली हो जाती है, यह तेरी भाभी ही बाहर सौ-सौ बातें बनाती है और भीतर से . . .तुझे इनकार नहीं . . .!"

"लोग तो बाई, गिरगट की तरह रंग बदलते हैं, आजकल !" केवल ने बाकी बचा दूध गिलासों में उंड़ेल दिया।

"मैंने कहा, पूछो मत . . .! तू कोई मोल की ही ले आ,उसके कौन-से सींग उगे हुए होते हैं . . .सयाने कहा करते हैं न कि जो काम करना हो, उसके लिए लोगों के मुंह की ओर नहीं देखना चाहिए . . .और फिर हमें तो आज जरूरत है।" पैरों के बल बैठा ही बिशना थोड़ा खिसक कर केवल के और निकट हो गया और आहिस्ता-आहिस्ता कहने लगा—"भाई और भाभियां तो तुझे मरा देखना चाहते हैं . . .वे तो इस इंतजार में है कि कंजर कब मरे, हम जमीन संभालें। तू क्या सोचता है, ये तेरी खैर चाहते हैं? वाह गुरु का नाम ले। यह तो सारे बस तैयारी किये बैठे हैं . . .!"

बिशने की सारी बातें, केवल को सच्ची प्रतीत हुईं। दिल पर एक अप्रत्यक्ष आकांक्षा हावी हो गयी। केवल खयालों में खो गया। बिशना हर रोज कटड़ी को देखने आता। पहले दो-तीन दिन कटड़ी कुछ ठीक थी, लेकिन पिछले कुछ दिनों से उसकी हालत फिर बिगड़ती जा रही थी। पेशाब 'बूंद-बूंद' करके आता था। दो-चार दिन और बुरी हालत में रह कर, आखिर एक दिन कटड़ी मर गयी। भैंस लगातार रंभाती रही। वह इधर-उधर चक्कर काट रही थी। किसी को नजदीक नहीं लगने दे रही थी। केवल ने तंग आकर, उसे खूब मारा-पीटा,

लेकिन भैंस जैसे कह रही थी, 'भला मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है?'' आखिर थक-हार कर कभी-कभी दूध देने लगी। खुराक का खूब जोर था। थोड़े दिनों बाद ठीक हो गयी और दिन में एक बार दूध देने लगी। फिर चाट पर दोनों वक्त देने लगी। लेकिन कटड़ी के गम में दूध जरूर सुखा गयी थी। जब ज्यादा दुलत्तियां मारती, तब केवल ऊब कर कहता, "इसका भी टंटा खत्म करते हैं!"

"अब तो यूं ही सस्ते में ही देनी पड़ेगी।" नौहणे ने एक दिन समझाया, "जैसे भी हो, रख ले, अब सूए तो बेच देना।"

"रोज-रोज दुलत्तियां कौन खाय!"

"दूध पीना ही आसान है?" नौहणे ने हंस कर कहा।

उसने एक दिन दीपो को भैंस का रस्सा पकड़ाना चाहा। रुपये जब मर्जी आ जायेंगे, पर दीपो ने किस्सा ही खत्म कर दिया।

"तू रख। तूझे भैंस क्या बुरी लगती है ! दूध पी। मैं चाहे मोल ही ले जाऊं, पर कीड़े पड़ें इन लोगों के, वे तो यही कहेंगे, मुफ्त में लायी है।"

"अगर घरवाली होती, तो आज यूं मिन्नतें तो न करनी पड़ती।" केवल ने जैसे दीपो को सुना कर कहा।

"मैंने तो घरवाली बनने के लिए बहुतेरे यत्न किये, लेकिन कोई भी सफल न हो पाया!"

"अब कहीं से ला दे !" केवल मंद-मंद मुस्करा रहा था।

दीपो टंडी आह भर कर चुप हो गयी। उसके अपने अरमान क्या थे और कैसे मिट्टी में मिले ! केवल ने बातों-बातों में कई बार अपनी बात की। दीपो ने जब उसकी ओर सचेत हो कर देखा, तो उसने खुद ही कह दिया, "मैंने तो तुझे खुद यही बात कहनी थी, भई ब्याह कर ले। मेरी आशाएं-उमंगें तो जो मिट्टी में मिली, सो मिली। तू तो भाड़ न झोंक!"

"बाद में कहीं मुंह न फुला लेना !"

"मैं नहीं करती . . .पर तुझे क्या . . .। मैं कहे जा रही हूं बेगानी बेटी आ गयी, तो वह खुद ही सहन नहीं करेगी।"

दीपो का दिल शोक से भर गया। वह केवल को विवाह भी कराने देना चाहती थी, लेकिन वह उस पर किसी और का अधिकार बरदाश्त भी नहीं कर सकती थी। लेकिन इसके विपरीत दीपो को केवल के भाई और भाभियां बात-बात पर ताने देते थे। बीस बार तो बंतो ही उसे ताना दे चुकी थी। लीखे की बहू ने उसका बाहर वह अपमान किया था कि सारे गांव ने सुना था, लेकिन दीपो ने जवाब में उसे एक भी बुरा शब्द नहीं कहा था। लीखे से शिकायत की, तो वह आगे से चारों खुर उटा कर लपका था।

"तू बड़ी नेक है, जिसने हमारा सारा घर डकार लिया।"

इतनी तीखी बात सुनकर दीपो के कान सुन्न हो गये। लेकिन वह झेंपी नहीं।

"मैं तेरे घर को कैसे डकार गयी?"

"उसे, अपने खसम को उंगलियों पर नचा कर थोड़ी खराबी की है तूने। अब तो तू उसी के घर ही बस रही होगी? . . .बड़ा अपना समझती है, आखिर तो हमारा ही रहेगा!"

असल में लीखा अकेला होने के कारण खिंचा-खिंचा-सा था। एक-के-बाद एक पैदा हुए बच्चों ने उसकी कमर तोड़ दी थी। कर्ज लिया, अगले वर्ष दूना हो गया।

दीपो के मन में एक टीस-सी उठी, "ये जाट भी क्या जानेंगे? तो इसका कहीं रिश्ता करवा ही दूं !"

और इस तरह से केवल की विवाह की इच्छा दिन-प्रतिदिन बढ़ती गयी। जागर न जाने, कहां-कहां घूमता-फिरता, एक रोज फिर आ गया। इस बार केवल ने उसके पास सच्चे दिल से अपना रोना रोया !

"तू तो पतंदरा ! किसी की सुनता ही नहीं था। अब कैसे इरादा बना लिया? बाद में मैंने तो और ही बात सुनी थी। पता नहीं सच्ची है या कि झूठी। कहते हैं कि तूने तो गांव में ही एक औरत फंसायी हुई है !" जागर ने मूंछों को मरोड़ते हुए, उस पर नजर टिका कर पूछा।

"सच्ची ही है !"

"तो फिर उसने अब कैसे रस्से ढीले कर दिये।"

"यूं हम किसी के अधीन थोड़ी हैं। तू बात कर, अगर है कोई तो यार ! चार दिन सुख-आराम के तो काटें।"

"तेरी तो जिंदगी सुधर जायगी!" "फिर कर कोई जुगाड़ !"

"ले! तुझे औरतों की कमी है! जितनी मरजी। शाम तक चाहे भीड़ लगा ले!"

जागर केवल को तैयार कर के साथ ही रायकोट ले गया। उसे अपने पैसे खरे करने की पड़ी थी। छोटा-सा घर था और छोटा-सा आंगन। घर में साठ साल के लगभग अकेली एक बुढ़िया थी और एक पच्चीस साल के करीब, गोरे और तीखे नक्शों वाली युवती, जो काम-धंधे में लगी हुई थी। शरीर की वह पतली-छरहरी थी। केवल उसे बहाने-बहाने देख रहा था। जागर उठकर उस बुढ़िया के पास जा बैठा और वह युवती चाय बनाने लगी। केवल को जागर और बुढ़िया की बातें हल्की-हल्की सुनायी देती रहीं। केवल सेहन में चारपाई पर नजर नीची किये बैठा था। उसने काली पगड़ी और पीला कुर्ता पहना हुआ था। कमर पर नीली बोस्की की लुंगी बांध रखी थी। पालिश से चमकायी हुई काली गुरगाबी उसके गोरे पैरों पर दमक रही थी।

"पुत्र, तेरा गांव कौन-सा है?" बुढ़िया ने केवल के पास बैठते हुए पूछा।

"बडूंदी है, माई !"

"अच्छा तो !" बुढ़िया ने उसके कंधे पर हाथ रखते हुए सहमी-सी आवाज में बात शुरू की, "सुन ले, मैं हूं अकेली गरीबनी बुढ़िया। तू मुझे पसंद है ! अगर तू मेरी बेटी को फूलों की तरह रख सकता है, तो बता . . .?"

"यह तो माई, मिलने-बरतने से ही पता चलेगा। मैं यूं ही तुम्हारे पास शेख़ी क्यों मारूं!"

और भी बातें हुईं। माई ने कहा, वह 'आनंद-कारज'[1] करा कर ही लड़की को रवाना करेगी।

रास्ते में केवल ने जागर से पूछा, "यार ! जात के बारे में तो तूने बताया ही नहीं !"

---

1. सिख रीति से बकायदा विवाह

"तूने जात से क्या लेना है? औरत खूबसूरत है . . .!"

केवल के मन में एक और संदेह उठा। बोला, "यह इतनी देर तक कुंवारी क्यों रही?"

"तू तो बस वही बातें किये जा रहा है ! . . .इतनी सुंदर औरत कुंवारी कैसे रह सकती है! वह भी स्त्री ! बुढ़िया अकेली है। घरवाले को मरे मुद्दत हो गयी है। जिसके साथ वह ब्याही गयी थी, वह था बहन देने का शराबी-कबाबी और जुएबाज। देख फिर वहां हर तरह के भले-बुरे लोग आते-जाते थे। हर कोई इस पर हाथ डालता था। यह कहने लगी मैं तो जूती नहीं मारती, इस तरह के मर्द को !"

स्कूटर में बैठकर वे गांव को चल पड़े। रास्ते में केवल ने 'जात' के बारे में फिर पूछा। जागर बात करते-करते झिझक गया।

"तू बता तो, भला !"

"देखने में तो 'जाटनी' लगती है !"

"ले, फिर हुई न वही बात!" जागर ने उसके कंधे पर हाथ मारा, "अब इसके कौन-सा माथे पर जात लिखी है ! अगर यार ! हमें जाटों की लड़कियों की डोलियां आतीं, तो अब तक छड़े नहीं रहते !" केवल को उसकी यह बात नमक की तरह चुभी, बेशक जागर ने अपना नाम भी बीच में शामिल कर लिया था।

"चमारिन है !" जागर ने बाद में पोले-से मुंह से कह दिया।

केवल का चेहरा एकदम उतर गया। अंदर से जैसे कुछ ढह गया। मन ने एक झुरझरी ली, 'लोग क्या कहेंगे, साला चमारिन ले आया है, लेकिन यूं किसी को भला कोई सपना आता है कि यह चमारिन है !"

स्कूटर में और भी सवारियां थीं, जो अपनी बातों में लगी हुई थीं।

"लगभग हजार रुपये हाथ में कर लेना।" केवल ने जागर के मुंह की ओर देखा। जागर ने 'खतों' वाली दाढ़ी खुजलाते हुए कहा—"ब्याह का स्वांग-सा करना पड़ेगा, लोगों को भी तो कुछ दिखाना है न !"

केवल के पास पैसे नहीं थे। यार-दोस्त भी उस जैसे ही नंगे जाट ही थे। हार कर उसने, बिशने से दो रुपए ब्याज पर पैसे लेने की योजना बनायी। उसके मन के एक कोने में खयाल उभरा, "क्यों एड़ियां उठा कर फांसी के फंदे में गला फसाना है। चमारिन क्या करनी है !" लेकिन भीतर से किसी कोने में छुपी वेदना बोल पड़ी "अब तो उमर भी कुलाचें भरने की नहीं रही, बूढ़ा हो जाने पर कोई कौड़ियों के भाव भी नहीं पूछेगा ! भाई-भतीजे भी मतलब के होते हैं।"

केवल ने दीपो से बात की। उसने फाख्ता को काबू कर लेना ही ठीक समझा। दीपो अपनी तसल्ली के लिए, उसे देखने केवल के साथ चल दी। उसका रंग-रूप देख कर दीपो को अपने अंदर एक टीस-सी उठती प्रतीत हुई। उसकी आंखों में सावन की घटाएं उतर आयीं, मन बहुत ही खराब हुआ। बस, उसकी चीख नहीं निकली, पर उसका हाल बहुत बुरा था। दीपो ने वहां अपने-आप को केवल की बड़ी भाभी बताया। इधर-उधर की गप्पे मार कर, दीपो ने उनको धैर्य बंधाया।

चलते समय दीपो ने उसकी मां को भरोसा देते हुए, कहा "माई ! अगर तुझे तसल्ली करनी है तो सौ बार कर ले। गांव में आकर देख ले। तेरी बेटी तो राज करेगी। क्योंकि भाइयों और भाभियों से अनबन है, किसी बात की कोई रोक-टोक नहीं है। सास-ससुर किसी का दवाब नहीं सिर पर। अपने घर में चाहे लंबी तान कर पड़ी रहे, कोई कहने वाला नहीं है कि भाई, तू क्यों पड़ी है?"

निर्धारित तिथि को उन्होंने गुरुद्वारे जाकर 'आनंद-कारज' करवा लिया। जागर बड़ा तेज निकला। दो सौ के करीब खर्च करके बाकी वह खुद डकार गया। विवाह के बाद केवल बहू को टैक्सी में बिठा कर गांव ले आया। जिस किसी ने भी सुना, उसे हैरानी हुई। विश्वास न हुआ तो स्त्रियां 'बहू देखने' के बहाने चली आयीं। बंतो आगे-आगे भागी फिर रही थी। बधाइयां देते-लेते, चाय-पानी पकड़ाती, अपने चिलम जैसे मुंह से चुडैलों जैसे दांत निकाल कर वह जोर से हंसती और मजाक करती फिर रही थी। स्वच्छंद स्वभाव की सुंदर बहू को देख कर कइयों ने संदेह किया कि भगा कर लाया होगा !

"अरी, यह तो 'जाए-खानी' किसी का बसा घर बरबाद कर के आयी है !" भजनो ने ढलकी हुई कमर पर हाथ रख कर गुरदयालो के कान में खुसुर-पुसुर की, "काया तो सोने जैसी है !"

"अरी हट परे!" गुरदयालो ने दोनों हाथ हवा में ऊपर उठा कर होंट अटेरे, "इस तरह की औरतें भला कोई शरम-हया रखती हैं? रोटी के साथ लगा कर खा लेती हैं। देख ले, इसे कुछ याद नहीं। पीढ़े पर आराम से बहू बन सजी बैटी है !"

"अरी बुआ!" भिन्नतो ने उनके पास आ कर जांघ पर हल्का-सा हाथ मारते हुए कहा, "पता नहीं बेशरम घर से कदम कैसे बाहर रख लेती हैं? मुझे तो बहुत ही हैरानी हो रही है!"

"भाड़ में जाय ऐसा खाना-पहनना ! आदमी अपने घर में थोड़ा खा ले, बहन। दर-दर की टोकरों से तो कहीं अच्छा है।"

औरतें बहाने से बहू देख जातीं, साथ ही शगुन दे जातीं। बाहर जा कर, इर्द-गिर्द देख कर एक-दूसरी के साथ मुंह जोड़ लेतीं। दीपो भी आयी। कितनी ही देर तक बैठी रही।

जाने लगी, तो बंतो ने हंसी-हंसी में जतलाया "क्यों, देख ली हमारी बहू? देख ले, ऐसी तो कहीं आस-पास में नहीं आयी। फूल जैसी है !"

"चलो इसका घर बस गया है। नहीं तो जिनकी नजरें लगी थीं, उन्हें भला कहीं सब्र आ रहा था !"

दीपो को गुड़ में लपेटा हुआ विष बंतो ने सुन लिया। वह जल कर राख हो गयी।

"यह तो तेरे और मेरे दोनों पर एक समान लागू होती है।" बंतो ने अपना दरार जैसा मुंह खोला।

"बहना मेरी ! मैंने तो अपने हाथों यह रिश्ता किया है, और किया भी शरीकों की जिद से है।" हाथ पर हाथ मार कर दीपो ने नखरे से फिर कहा, "अब देखूंगी ! कैसे उनका मुंह खुलता है, जो मुझ पर ताने कसती थीं।"

बंतो भीतर से जली-भुनी, कुढ़ती हुई अपने घर चली गयी।

पूस माह की कोसी-कोसी धूप में जय कौर चरखा रखे बैठी थी। गुरबंश चूल्हे-चौके का काम खत्म करके गोबर-कूड़ा कर रही थी। चारों ओर शोकमय वातावरण छाया हुआ था। बुढ़िया को अपनी पिछली डींगें भूली हुई थीं। पहले वह हर किसी की नकल उतारती थी। गांव का कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं था, जिसे उसने अयोग्य न करार दिया। पिछले कुछ अरसे से उसने चुप्पी साध ली थी। अब पड़ोसिनों से टिका-टिका कर बातें न करती। चाहे वे उसकी खामोशी से वाकिफ थीं, लेकिन बाहर कहतीं—

"अरी, इसका दिमाग ही टीक नहीं . . .! देख तो, कैसे नाक चढ़ाये रहती है। अगर कोई मुंह पर मारने वाला हो कि तू निगोड़ी क्या बोलती है री? तेरी बहू ने निकल कर वह शोभा करायी है, जो आज तक किसी की न हुई हो।"

कोई और बीच में ही, ढीले से स्वर में कहती, "बहना री ! माताएं भी पुत्रों से ही शोभा देती हैं। एक ही कमाऊ बेटा था, वही ठुस्स हो गया। गजब हो गया, बहन ! चुपचाप न हो जाय तो और क्या करे !"

तभी किवाड़ों के खुलने की आवाज आयी। जय कौर ने आंखों पर हाथ रख कर देखा, कोई पट्‌टों वाला, खाकी वर्दी पहने गले में बैग लटकाये अंदर आया। जय कौर को लगा, जैसे वह उसकी ओर देख कर हंसा हो। बौखला कर पीढ़े पर से उठ खड़ी हुई।

"माथा टेकता हूं, बेबे !" आने वाले ने हंसती हुई आंखों से उसके सामने सिर झुकाया।

"जीता रह पुत्र !" सिर पर हाथ फेर कर उसने सेहन में चारपाई बिछा दी और पास बैठ गयी। उसे नगिंदर के बारे में कुछ पता लगने की आस नजर आयी।

आहिस्ता से पूछने लगी, "कब आया पुत्तर?"

"तूने मुझे पहचाना नहीं, बेबे?"

"नहीं पुत्तर। यह तो जानती हूं कि तू नगिंदर का यार है? मैं तेरा गांव ही भूल गयी।" पहचान में न आने पर, जय कौर ने बात इस तरह बदली।

वह युवक धीमे-धीमे हंस रहा था। फिर थोड़ा ऊंची आवाज में बोला, "बेबे, तूने अपने पुत्र को ही पहचाना नहीं?"

जय कौर ने उसकी ओर गौर से देखा। नैन-नक्श से भ्रम हुआ , लेकिन पट्‌टे और घुटी हुई दाढ़ी देख कर मन ढह गया। आंखों के सामने फिफ्टी वाली पगड़ी और कस कर बांधी हुई दाढ़ी उभरती आयी। तभी उसे बेटे का हंसी से छलकता हुआ बोल सुनायी दिया, "बेबे ! मैं नगिंदर हूं तेरा बेटा !"

"मैं मर जाऊं! पुत्र !" जय कौर उसके साथ लिपट गयी।

अपने बेटे का मुंह चूम-चूम कर, उसे सब्र नहीं आ रहा था। आंखों में से पानी बहने लगा। उसकी आवाज भर्रा गयी। अंदर से सिसकियां उभर आयीं। कितनी ही देरतकवह बेमतलब और अर्थहीन शब्द बड़बड़ाती रही! फिर कहने लगी,जैसे गिला कर रही हो—"पुतरा

तू इतना समय कहां रहा? तेरे पीछे भला हमारा कोई हाल था? मगर मेरे पेट को विश्वास नहीं हो रहा था। मैंने कहा मेरा बेटा आयगा जरूर, देख ले फिर आ गया. . . अरी गुरबंश कौर !" बेबे ने आंखें पोंछते हुए पशुओं वाले छप्पर की ओर मुंह करके पुकारा।

"आती हूं बेबे!"

"आ देख, कौन आया है !" उसके बोल में काफी समय से दबायी हुई हंसी उभरी।

गुरबंश ने आहट ले ली थी, लेकिन गोबर से हाथ सने होने के कारण, सामने नहीं आयी थी। पीठ की ओर से खाकी जर्सी देख कर नगिंदर के बारे में पूछने को दिल व्याकुल हो उठा था। उसने नल पर हाथ धो कर पास आते हुए 'सत श्री अकाल' कहा। नगिंदर ने भी वैसे ही हंस कर जवाब दिया। उसे भौंचक्की-सी खड़ी देखकर नगिंदर की फिर हंसी फूट पड़ी। गुरबंश को उसकी हंसी अजीब लगी और वह मन ही मन में कहने लगी, "पहली बार आया है, कैसे दांत निकाल रहा है!"

"अरी बहू तू देख तो सही, यह कौन है! तू तो डरकोने की तरह चुप खड़ी है।" जय कौर हंस पड़ी, "तूने इसके साथ फेरे लिये हैं।"

गुरबंश आंखें चौड़ी कर के ताकने लगी, पर उसे विश्वास नहीं आया।

"अरी, यह नगिंदर है !"

"ओह !" गुरबंश के मुंह से सहसा निकला। बुढ़िया और बेटा जोर-जोर से हंस पड़े और गुरबंश ने शरमा कर हंसते हुए मुंह फेर लिया।

जिस किसी को भी पता चला, वह जरूर आया। लोगों से सेहन पट गया। सभी उससे इतना समय बाहर रहने के बारे में पूछ रहे थे !

"पुत्र, तू वहां जा कर घर बना कर ही बैठ गया? कुछ हम जैसी डूबती माताओं का भी ख्याल कर लेता !" नंद कौर ने उसे प्यार देते हुए कहा।

"चाची, फिर फौज क्या हुई !"

"यार ! तू तो अंग्रेज बना फिरता है !" बहुत से लोग हाथ मिलाते हुए नगिंदर से कहते।

वह सबके उत्तर हंस-हंस कर दे रहा था। आंगन में आपाधापी मची हुई थी। सभी अपनी-अपनी हांक रहे थे।

"अरी, अच्छा है भाई ! . . .यह तो तभी फड़क-फड़क कर मरी जा रही थी. . .! परमात्मा सबकी सुने ! . . .कभी किसी का बुरा नहीं सोचती। अरे लोग तो सुबह उठकर इसके दर्शन करते हैं। सभी कहते थे, भला परमात्मा बिल्कुल ही दरवाजे बंद कर देगा . . .? ले . . .वह तो सब कुछ जानता है।"

वापस जा रहे लोगों को जय कौर ने ऊंचे स्वर में कहा, "अभी कोई जाय नहीं, चाय रखी हुई है।"

"कोई बात नहीं, परमात्मा और दे।" कहते हुए लोग चल पड़े।

जय कौर ने दौड़ कर सभी को रोका और उनके आगे हाथ जोड़े, "तुम्हें मेरी सौगंध ! अगर जाओ।"

नंद कौर और जय कौर ने सभी को गिलासों में चाय डाल कर दी। गुरबंश के पैर जमीन पर नहीं पड़ रहे थे। चाय पी कर लोग आशीर्वाद देते हुए चले गये। नगिंदर सफर के कारण थका हुआ था। खाली हो कर सास और बहू उसके पास बैठ गयीं, लेकिन कोई न कोई मिलने वाला आ जाता था। थम्मण चौपाल में गया हुआ था। जब उसे पता चला, तो भागा-भागा आया। कितनी ही देर तक पुत्र के पास बैठा आंखें पोंछता रहा। नगिंदर ने बापू का कंधा थपथपाकर सांत्वना दी। दिल को ठिकाने ला कर बापू ने पूछा, "दो महीने की छुट्टी है?"

"अब तो बापू पक्की छुट्टी है।"

"क्यों?" जय कौर ने हंसते हुए नगिंदर की ओर देखा। उसकी हंसी अजीब लग रही थी।

"चल, अच्छा है !" बापू ने सुख की सांस ली। "अब घर में ही काम कर। नौकरी में क्या रखा है।"

फिर उन्होंने गांव के 'मरे-जन्मे' की बातें कीं। जब जीता स्कूल से आया, तो भाई को देखकर शरमा गया। नगिंदर ने दो बार अपने पास बुलाया, पर वह दीवार के साथ लग कर खड़ा रहा। नगिंदर ने उठकर उसे पकड़ कर अपनी बांहों में भर लिया और उसके साथ इधर-उधर की बातें करता रहा।

"बेबे। यह तो मेरे पीछे, दिनों में ही बड़ा हो गया है !"

"हां !" बेबे ने चारपाई उठा कर लाते हुए कहा, "तेरे भरती होने के समय यह चार बरस का था।"

बातें चलती रहीं। सगे-संबंधियों के कुशल-मंगल के बारे में नगिंदर उत्सुकता से पूछता रहा। जय कौर की नजरें रह-रह कर उसके चिकने-चुपड़े चेहरे की ओर चली जातीं। आखिर, उसने उसके सिर पर हाथ फेरते हुए पूछ ही लिया—"पुत्तर, यह तूने क्या रूप बनाया है? हमने तो शुरू से ही सिक्खी को संभाल कर रखा है।"

"बेबे ! आदमी को दिल साफ होना चाहिए बस, वही सिक्खी है !"

नगिंदर बेबे को, और बहुत-सी बातें सुनाता हंसता रहा। पर जय कौर को, उसके ये 'चप्पा-चप्पा' बाल बिल्कुल ही अच्छे नहीं लग रहे थे। शाम को नगिंदर घूमने-फिरने बाहर चला गया। रास्ते मे उसे नौहणा मिल गया। उसके आलसी और गये-गुजरे शरीर को देख कर नगिंदर को संदेह हुआ कि वह नशा करता है। उसने उसे अपनी सेहत का ख्याल रखने को कहा, तो नौहणे ने अपने घिसे-पीटे स्वर में कहा, "रखता तो हूं, नगिंदर !" नौहणे ने एक आह भर कर मुरझाई हुई आंखें ऊपर उठायीं—"घर वालों ने मार-पीट कर अलग कर दिया है। जमीन तो अभी बूढ़े के नाम है !"

नगिंदर को कुछ भी न सूझ सका कि उसे क्या कहे ! जब नौहणा ज्यादा ही पीने लग गया था, तो करतारे ने घर के अंदर बंद करके बहुत मारा-पीटा। जब कभी शराब के लिए पैसे न जुटते, तो वह नशेवाली गोलियां खाने लगता। नौबत यहां तक पहुंच गयी कि वह संधूरे के साथ मिल कर रातों को लोगों के खेतों से कपास चुन लाता और खलिहानों से

भुट्टे तोड़ लाता। केवल ने उसे एक-दो बार समझाया भी, लेकिन उसने एक न सुनी। अब नौहणा केवल के पास कम ही जाता था। और केवल भी उसे देख कर रास्ता बदलने लग गया था। अब वह अपने-आप को 'कबीलदार' समझने लगा था। जब नौहणा इन बुरी आदतों से बाज न आया, तो केवल ने सिरे की कह सुनाई—"मेरे भाई, अगर तूने ऐसे गंदे कामों के राह चलना है, तो तेरी-मेरी सत् श्री अकाल!" और नोहणे ने आगे से कोई उत्तर नहीं दिया था।

बाहर से लौटते हुए नगिंदर को गांव के बड़े रास्ते पर जाट लड़कों की एक टोली 'हिच-हिच' हंसती हुई दिखायी दी। नगिंदर के तौर-तरीकों को हर कोई गौर से देखता था। उस टोली की, हंसी-मजाक में की हुई बातें, दूर से ही नगिंदर के कानों में पड़ीं ।

"भई, अब तो नहीं हिलेगी !"

"क्या पता है? साली रेतीली भूमि की तरह प्यासी ही रहे।"

नगिंदर उनके नजदीक पहुंचा, तो वे चुप हो गये। नगिंदर ने मुसकराते हुए, सबके साथ हाथ मिलाया और पूछा, "बला की हंसी मची हुई है।" छोकरे फिर हंसने लगे। नगिंदर भी हंस पड़ा। उनमें से एक-दो सयाने 'फौजी-फौजी' कह कर उसका हाल-चाल पूछते रहे। नंबरदार के घोनू ने बात आगे बढ़ाते हुए पूछा—"अरे फौजी, वैसे यह तो बता कि तंग तो नहीं करते थे?"

"नहीं तो . . .! जमाइयों की तरह सेवा करते थे !"

फौजी ने उनके साथ इधर-उधर की दो-चार बातें और कीं, फिर यूं पल्ला छुड़ा कर चल दिया, जैसे उसे लड़कों का मुंह छुपा-छुपा कर, चोरी-चोरी एक-दूसरे की ओर ताक कर देखना अच्छा न लगा हो। उसे गुस्सा भी आया लेकिन कुछ बोला नहीं।

शाम हुई तो नगिंदर ने बैग में से बोतल निकाल ली। उसका बिस्तर और एक ट्रंक अभी मंडी ही पड़े थे। पिछले लगभग दो महीनों से वह अधिक शराब पीने लगा था। सफर में भी उसने बोतल का साथ नहीं छोड़ा था। पैग चढ़ा कर उसने अपने मुंडे हुए मुंह पर हाथ फेरा और जरा जोर से खांस कर, ऊंची आवाज में डकार ली। वह अकेला ही मदिरापान करता रहा। जय कौर ने एक-दो बार जरा तरीके से बात चलायी लेकिन उसने एक ही बात कह-कर, उसे टाल दिया, "बेबे, बातें फिर करेंगे।"

आंखों में खुमार बढ़ा और सिर को चक्कर आने लगे। आंखों के सामने घूम रहे चौगिर्दे में चीजें उल्टी-पुल्टी होती दिखायी दीं। वह मस्ती में ऐसा डूब गया कि भूली-बिसरी यादें, आंखों के सामने हू-ब-हू साकार हो उठीं। सीमावर्ती मोर्चे पर वह और उसकी सैनिक टुकड़ी डटी हुई थी। गोलियों की अंधाधुंध वर्षा हो रही थी। तोपों के गोले 'धायं-धायं धड़ाम' करते गिर रहे थे। धरती और आकाश को गुंजा देने वाले धमाके होते। धरती यूं कांप उठती, जैसे कोई पर्वत टूट कर गिर पड़ा हो। नगिंदर की टुकड़ी इतनी शक्तिशाली और मजबूत नहीं थी कि वह शत्रु का मुकाबला कर सकती। दुश्मन उन्हें पीछे धकेलता आ रहा था। ठंड इतनी अधिक थी कि मैदानी इलाकों के सैनिकों के शरीर अकड़े पड़े थे। वे सारे सुबह से लेटे हुए, सांपों की तरह आगे को रेंगते हुए गोलियां दाग रहे थे। उन सभी के नजदीक

'धड़ाम-धड़ाम' करते हुए गोले गिर रहे थे। ऊपर आकाश में गुबार छाया हुआ था। बाकी के जवान तो पता नहीं कहां 'खिसक' गये थे। मिट्टी से लथपथ हुए नगिंदर ने सिर ऊपर उठा कर देखा। उसके नजदीक ही आठ-नौ जवान मरे पड़े थे। शेष गायब थे। नगिंदर को कुछ-कुछ होश था। चार-पांच बेसुध पड़े थे। फिर गिरते हुए गोलों की आवाज दूर होती गयी। वह जोर लगा कर लपक कर उठा और पास वाले साथी को हिला कर देखने लगा। तभी उसने एक लंबी चीख सुनी, जैसे उसे ही सुनायी गयी हो। उसने पीछे मुड़कर देखा तो कितने ही छोटे कद और चपटी नाक वाले चीनी सिपाही उनके इर्द-गिर्द बंदूकें ताने खड़े थे। उनमें से एक व्यक्ति ने तने हुए चेहरे से बड़े जोर से अपनी भाषा मे कुछ कहा और नगिंदर ने एकदम राइफल फेंक कर हाथ खड़े कर दिये। दो चीनियों ने उसकी जेबों की तलाशी ली। उसके पास से कुछ न मिला। शेष जवानों को भी उन्होंने बारी-बारी उठा कर, तलाशी ली और फिर सभी को अपने आगे-आगे चलने के लिए कहा।

नगिंदर ने अपने साथी मुखत्यार की ओर देखा। उसकी वर्दी मिट्टी में सनी हुई थी। वह नजरें नीची किये टांगें घसीटता हुआ, चल रहा था। राह पथरीली थी। कहीं-कहीं बड़ी-बड़ी खाइयां भी थीं। नगिंदर का चेहरा डर के कारण पीला हो गया था। उसे अपनी माता और बहन-भाई सब याद आये। उसका दिल रो पड़ा। परायी बेटी की उठती जवानी धुंधली होती दिखायी दी। चीनी लोग अपनी भाषा में बातें करते, उन्हें कौओं जैसे लग रहे थे। एक सड़क के किनारे पहुंच कर उन सभी को फौजी गाड़ियों में बिठा दिया गया। गाड़ियों में बैठे-बैठे ही कुछ खाने को दिया गया। दो दिनों से खाली पेट लड़ रहे जवानों को बहुत भूख लगी हुई थी। गाड़ियां चलीं तो कुछ चीनी सैनिक उनके साथ ही गाड़ियों में बैठ गये। बंदी सैनिकों को उनके चपटे और पीले चेहरों से डर लग रहा था।

संध्या के समय वे पीली-पीली धरती पर पहुंच गये। छोटे कद के पीले चेहरों वाले लोग अपने इर्द-गिर्द बोलते हुए बिल्लियों जैसे लग रहे थे। उन सबकी वर्दियां उतरवा कर उन्हें पहनने को सादा कपड़े दिये गये। नगिंदर और उसके साथियों को एक ऐसे मकान में रखा गया, जिसकी हालत अच्छी नहीं थी। बंदियों के चेहरे हलदी जैसे पीले थे।

"अब क्या होगा?" मुखत्यार के होंठों पर पपड़ी जमी हुई थी।

"वह तो दिखायी ही दे रहा है!" नगिंदर की आवाज भी लड़खड़ा रही थी।

एक खामोशी छायी हुई थी, जैसे मुर्दों की बस्ती में होती है। किसी का भी बात करने को जी नहीं चाह रहा था। उसने हंसते हुए कहा, "अब भाग्य का लिखा तो भोगना ही होगा, मित्र मेरे। हमें ये ऐसे ही तो छोड़ेंगे नहीं।"

दूसरे दिन उन सभी को एक अन्य मकान में ले जाया गया। वहां बहुत बड़ी संख्या में वर्दियां पहने चौड़े सिरों वाले चीनी जमा थे। कमरे में बैठने के लिए सादे-से बेंच थे। चौड़े कंधों वाला एक आदमी उठा। उसके हाथ में बेंत जैसी छड़ी थी। उसने अपनी भाषा में कुछ कहना शुरू किया और साथ-साथ दुभाषिया बंदियों को हिंदुस्तानी में समझाता गया।

"तुम्हें डरने की आवश्यकता नहीं है। हम तुम्हें अपने भाइयों की भांति समझेंगे। अन्य देशों की सरकारों की तरह तंग नहीं करेंगे। हमारी लड़ाई निर्दयी साम्राज्य से है।" नगिंदर

ने देखा, अधिकारी का पीला चेहरा लाल हो गया, जैसे चेहरे पर लाल रंग लगा रखा हो। उस अधिकारी ने अपने छाज जैसे कानों को खुजलाया, चपटी नाक को रगड़ा। उसकी गोल और छोटी-छोटी आंखों में एक चमक, प्रत्येक शब्द के साथ बढ़ती ही जा रही थी।

"आप यह बताइये कि आपकी सेना के जवानों के अलावा भी कोई अधिकारी बंदी बना है या नहीं . . .?"

बंदियों ने कोई जवाब नहीं दिया।

"लेकिन हमारे यहां ऐसा नहीं होता !" अधिकारी ने कोमल शब्दों में फिर कहना शुरू किया—"हमारा जवान बाद में मरेगा, पहले अधिकारी अपनी जान देगा।"

बंदी एक-दूसरे की ओर हैरानी भरी नजरों से देखने लगे। नगिंदर के माथे पर अनगिनत बल पड़ गये। आंखों से ऐसा आभास हुआ कि वह कुछ कहना चाहता है। अधिकारी ने उसके तौर भांप कर उसे बात करने के लिए कहा। नगिंदर थोड़ा झिझकता हुआ, ढीला-ढाला-सा उठ खड़ा हुआ।

"जवान लड़ने के लिए होता है, अधिकारी नहीं लड़ता। वह तो केवल कमान करता है।"

दुभाषिए के मुंह की ओर देखते हुए अधिकारी मुस्कराया और फिर उसने दो बार मामूली-सा सिर हिलाया।

"जवान और अधिकारी दोनों ही मनुष्य होते हैं। अधिकारी को वेतन और अन्य सुविधाएं भी अधिक मिलती हैं। यह अलग बात है कि तुम्हारी सेना में अमीर लोगों के बच्चे अफसरी लाइन में जाते हैं। कोई गरीब किसान वगैरह भी उनमें होता है या नहीं . . .?"

नगिंदर और उसके साथियों को चीनियों का इस तरह मुस्करा-मुस्करा कर बातें करना, जरा भी अच्छा न लगा। नगिंदर अपने अंदर उठ रहे गुस्से को रोक न सका—"हम अपने देश के लिए लड़ते हैं !"

"ठीक है देश-प्रेम की भावना जरूर होनी चाहिए।" अधिकारी को चेहरा गंभीर था—"आप और आपके माता-पिता तथा बाल-बच्चे आपकी तनख्वाह पर पलते हैं। फिर देश-प्रेम की भावना कैसी? अमीरों के बच्चे इस नगण्य भाड़े के लिए कभी भरती नहीं होते . . .गुस्सा करने की जरूरत नहीं! हमारे देश में मुक्ति से पहले यही कुछ होता था, बल्कि जबरियां बेगार ली जाती थी। स्त्रियों से खेतों में पशुओं की तरह काम लिया जाता था . . .हम कब कहते हैं कि हमने कभी ऐसा नरक नहीं देखा . . .।" अधिकारी ने अपने पीले चेहरे पर आये पसीने की बूंदों को रूमाल से साफ किया। बात यहां तक आ गयी कि चीन ने भारत पर आक्रमण क्यों किया? और नगिंदर ने ऊब कर यूं ही कह दिया, "दूसरे देशों पर आक्रमण करने को आप समाजवाद कहते हैं . . .।" गुस्से में आकर उसने सख्त होकर कह दिया—"जो हमारे देश की भूमि पर पैर रखेगा, हम उसका नामो-निशान मिटा देंगे !" उसे ये सारे, चौड़े-चौड़े चेहरों वाले मनुष्य नीम से भी कड़वे लग रहे थे। वह क्रोध की ज्वाला में जल रहा था।

अधिकारी ने नगिंदर के कंधे पर थपकी देते हुए कहा, "जवान ! लोगों से हमारा क्या बैर है? भारत सरकार ने हमारी जनता के दुश्मन को शरण दी है। भारत की सरकार तिब्बती लोगों की सहायता करे, इससे हमें क्या मिला है ! गणराज्य के अधीन वे आप लोगों की क्या सेवा करते होंगे?"

"हमारे देश में घर आये व्यक्ति को मारना पाप माना जाता है।" नगिंदर ने पूरे गर्व से कहा।

"ठीक है !" अधिकारी फिर बोला, "चोर को भला आदमी कभी शरण नहीं देता... अच्छा मनुष्य, अच्छे मुनष्य की ही मदद करता है।"

नगिंदर और उसके साथियों के दिल में, बिल्लियों-जैसे इन चीनियों पर रह-रह कर क्रोध आता था, लेकिन वे क्या करते? बेगानी धरती, पराया देश ! उनका कोई वश नहीं चलता था। उन सभी को हर रोज दौरा कराया जाता था। एक दिन नगिंदर ने देखा कि अफसर और जवान एक साथ खाना खा रहे थे। उसे याद आया कि उसके देश में अधिकारी सिपाही के साथ बात करना भी अपना अपमान समझता है। एक दिन सैनिक गाड़ी में कुछ खराबी आ गयी। उस समय दो ही चीनी सैनिक थे और दो ही अफसर। जब वे गाड़ी को धक्का लगा कर स्टार्ट करने लगे, तो अफसर भी चुपचाप सिपाहियों के साथ धक्का लगाने लगे। हर तीसरे-चौथे रोज उन्हें कुछ न कुछ नया दिखाया जाता। कारखानों का निर्माण हो रहा था। खेतों में खूब चहल-पहल थी। एक दिन नगिंदर और उसके साथियों को धान के खेतों पर ले जाया गया। धान की कटाई गहाई हो रही थी। स्त्रियां और मर्द ऊंची आवाज में बातें करते बड़ी तेजी सके काम कर रहे थे। ऐसा लगता था, जैसे प्रसन्नचित होकर गीत गा रहे हों। वे एक-दूसरे से होड़ लेते हुए पूरी लगन और शक्ति से काम कर रहे थे। साथ ही एक-दूसरे से छेड़छाड़ और शरारतें भी कर रहे थे। यह सब देख कर नगिंदर और उसके साथियों का दिल खुशी से नाच उठा।

"ये तो ऐसे कटाई कर रहे हैं जैसे मेले आये हुए हों।" मुखत्यार ने नगिंदर के पास आकर आहिस्ता से कहा।

"हां, वही तो!" नगिंदर उन्हें बड़े गौर से देख रहा था।

"अपने यहां तो यार, औरतें रोटी ले कर आती भी जली-भुनी रहती हैं।"

"तू खुश है न!" नगिंदर के मुंह से सहसा ही निकल गया। मुखत्यार ने उसके निकट आकर कोहनी मार कर कहा, "कहते हैं कि पहले ये भी अपनी औरतों को लोहे के बूट पहनाते थे ताकि उनके पैर छोटे रहें।"

"हां!"

संधि हो जाने पर, जब वे देश लौटे, तो पर्वत जैसे बीते समय का उन्हें ख्याल ही न रहा। इधर उन सभी को रेगुलर सेना से अलग ही रखा गया। दो-ढाई महीने तक, उन सभी की 'सैनिक अदालत' में पूछताछ होती रही। अलग-अलग, एक-एक से पूछा गया। और फिर एक दिन सबको अपने-अपने घर भेज दिया गया। रेलगाड़ी में बैठा नगिंदर सोच रहा था, "जंग किसने छेड़ी? . . . हम लड़े ! . . .दुश्मन की कैद में रहे . . .और आते

ही डिस्चार्ज कर दिये गये!" उसे चिंता अंदर ही अंदर खाये जा रही थी, "घर में कौनसे मुरब्बे हैं . . .भई, खेती कर लेंगे . . .!" पर दिल उदास हो गया। रास्ते में बोतल खरीद ली। रास्ते भर पीता रहा। गांव के निकट पहुंच कर घर वालों के विरह ने मन और भी खराब कर दिया, फिर भी किसी भीतरी अप्रत्यक्ष प्रसन्नता से चेहरे पर चमक आ गयी...।

"पुत्तर, तू लाल परी से ही सिर जोड़ कर बैट गया।" नगिंदर ने बेबे की हंसी सुनी। नशे से बंद हो रही आंखों को खोल कर सिर थोड़ा सा ऊपर उठाया। "हूं, बेबे !"

"मैंने कहा, खाना लाऊं . . .?"

"ले आ . . .।" नगिंदर ने गिलास में थोड़ी-सी शराब और डाल कर अंदर उंड़ेल ली।

बेबे ने छोटी मेज मैले कपड़े से पोंछ कर उसके सामने रख दी और थाली में खाना ले आयी। आलू-गोभी की सब्जी और सरसों का साग बना हुआ था। स्वादिष्ट भांप ने उसकी भूख को और भी चमका दिया।

"बेबे ! वैसे तो चीन वालों ने हमें खाने-पीने की कमी महसूस नहीं होने दी, लेकिन पंजाब जैसी रोटी तो आज ही नसीब हुई !"

"ले पुत्तर ! पंजाब जैसा कोई और मुल्क है भला? . . .और चीन वाले तुम्हें क्या देते होंगे, खाने के लिए? . . .कहते हैं कि वे तो खुद चूहे मार-मार कर खाते हैं . . .।"

नगिंदर जोरदार टहाका मार कर हंस पड़ा।

"नहीं बेबे! . . . कम्निस्टों का देश है न . . .बात ऐसी नहीं है . . .!"

"अच्छा!" जय कौर ने हैरत से मुंह खोला "हमारे क्या फरिश्तों को पता है . . .! मुए लोग यूं ही भौंकते रहते हैं— तो फिर यूं ही झूट बोलते होंगे वे !" इसी तरह जय कौर जब तक नगिंदर को खाना खिलाती रही, तब तक उसके साथ बातें मारती रही।

पंद्रह-बीस रोज यूं ही बीत गये। नगिंदर के कानों में यह बात नहीं पड़ी कि उसके पीछे क्या राख उड़ती रही है ! जय कौर हर रोज सुबह-शाम अपने पुत्र से बहाने-बहाने यह बात सूंघ लेती कि कहीं इसके कच्चे कानों में किसी ने कोई बात डाल तो नहीं दी। वह घर में क्लेश खड़ा होने से डरती थी। बेशक बहू को उसने बांस पर लटका रखा था पर 'बां-बां' करके लोगों को तमाशा नहीं दिखाना चाहती थी। नगिंदर शाम के समय उदास-गमगीन सा बोतल खोल कर बैट जाता था। जय कौर उसे बहाने से समझाती थी, "देख पुत्तर ! घर गृहस्थी के बेटे-बेटियों के लिए हर रोज शराब पीना ठीक नहीं !" लेकिन वह करता भी क्या? जैसे ही शाम होती, उसके अंदर जैसे कुछ टूटने-सा लगता। उसे घर की गरीबी का गम था। उसे यह भी मालूम था कि उसे कहीं भी नौकरी मिलनी आसान न थी। और उसे इस बात की समझ नहीं आ रही थी कि जिनके लिए वे ऊंचे-ऊंचे पर्वतों पर चढ़े, बर्फ में सुन्न हुए, घर-बार छोड़ा, उन्होंने उसे क्या 'इनाम' दिया ! रोटी के भी लाले पड़ गये। बाहर-भीतर आते-जाते उसे लोग मिलते, बातें करते। ऐसे ही एक दिन राह-चलते भिन्नतो ने उसे रोक लिया।

"आओ देवर जी ! दूध रखूं ! तू तो बुलाने से रहा !"

"बस, तेरा ही सब कुछ है ! जीती रह।"

भिन्नतो ने चुनरी के पल्ले से रगड़ कर नाक पोंछते हुए जरा आहिस्ता से कहा, "तभी तो मुझे बुलाया नहीं, और बहुतेरी भीड़ घूमती-फिरती रही !" नगिंदर को उसकी बात बुरी भी लगी। उसने भिन्नतो के चेहरे को देखा, रगड़ से उसकी नाक लाल-सुर्ख हुई पड़ी थी।

"तू तो वहां जाकर, बिल्कुल ही बदल गया है! . . .अब तो महाजन बना फिरता है।"

"ऐसा ही है, जैसा देस, वैसा भेस।" नगिंदर दांतों से कीकर का तिनका चबा रहा था।

"तेरी तो सभी ने उम्मीद ही छोड़ दी थी, भई अब कहां आयगा . . .। जब कसाइयों के बस ही पड़ गया . . .! एक बेबे जी ने हिम्मत नहीं छोड़ी थी। उसने घर में शोक नहीं छाने दिया था। . . .वैसे दुख तो पीछा नहीं छोड़ता। बेचारी आधी रह गयी है . . .।" और फिर आस-पास देख कर मुंह को हल्का-सा मरोड़ कर, कहने लगी . . ."एक इस 'डूब-जानी' ने बदनामी करवा दी। . . .उसे तो बाहर मुंह दिखाने योग्य नहीं छोड़ा! अकल नहीं है . . .नादान है !"

नगिंदर को लगा जैसे कहीं से कड़वा धुंआ उसकी आंखों में घुस गया हो। उसके भीतर कुछ जलने लगा। उसे ज्यादा गुस्सा तो 'बेबे' पर आया, जिसने उसे इसके बारे में बिल्कुल कुछ नहीं बताया था। भिन्नतो कह रही थी—"रूठ कर चली गयी थी! माई के लिए तो जैसे मिनटों में अंधकार छा गया ! ओहो बहन। यह क्या हो गया। भाई, फिर कुछ हिम्मत वाले गये, तो कहीं जा कर माई को सुख की सांस आयी !" भिन्नतो ने और भी बातें बतायीं,

लेकिन नगिंदर के कानों में सायं-सायं हो रही थी।

नगिंदर को महसूस हुआ, जैसे उसके अंदर एक ज्वाला-सी भड़क रही हो। भिन्नतो अभी तक बातें कर रही थी, लेकिन नगिंदर के लिए वहां खड़ा होना भी मुश्किल हो गया। उसने चलने के लिए कदम उठाये, लेकिन फिर रुक गया।

"और सुना भाभी ! तेरे बाल-बच्चे तो ठीक हैं?"

"ठीक हैं . . .वाहे-गुरु की कृपा से !"

"अच्छा . . .! भाभी फिर कभी !" नगिंदर की आवाज स्वाभाविक नहीं रही थी।

बाहर वह ज्यादा देर तक खड़ा न रह सका, जला-भुना घर आ गया। शीतकाल के दिन का समय ठिठुरा हुआ था, लेकिन उसका शरीर भट्टी की भांति जल रहा था। उसकी आंखों की पुतलियां लाल-सुर्खहो गयी थीं। सेहन में चारपाई डाले जय कौर पड़ी थी। उसकी सरदी में भी आग की तरह जलती आंखों को देख कर वह उठ बैठी।

"बेबे ! तूने मुझसे पर्दा क्यों रखा?" नगिंदर ने चारपाई के पगाने पर बैठते हुए, अपने भीतर की उथल-पुथल को दबा कर पूछा।

"ले पुत्तर। तेरे बगैर और कौन है दुख-सुख का भागी !"

"तो फिर बता, मेरे पीछे क्या हुआ था?"

"कुछ नहीं!" जय कौर ने नगिंदर के रगड़ कर मुंडवाये चेहरे को गौर से देखते हुए कहा।

"पीछे तेरी बहू ने क्या करतूत की थी?" उसकी आवाज स्वाभाविक ही ऊंची हो गयी थी।

"कुछ भी तो नहीं . . .!"

"तू बताती क्यों नहीं . . .।" जब नगिंदर जोर से गरजा, तब जय कौर उसके मुंह पर हाथ रख कर, उसे शांत करते हुए कहने लगी—"ऊंचा न बोल पुत्तर। यह नादान थी। नादान सौ गलतियां करते हैं। तू शांत हो जा . . .चल, जाने दे।"

"नहीं बेबे ! तेरे सिर के बाल सफेद हो गये, पर तुझे भी समझ न आयी ! उस हरामजादे को घर में घुसने ही क्यों देती थी?" नगिंदर दोनों हाथ कमर पर रखे उसकी ओर तीखी नजरों से देख रहा था "वैसे तो तू अपने-आपको बहुत 'सयानी' समझती है। यहां तेरी समझदारी कहां चली गयी थी?"

बाहर पशुओं वाले छप्पर की तरफ गोबर-कूड़ा करती गुरबंश के कानों में भी शोर की आवाज गयी। उसके हाथ रोक कर कान लगा कर सुना। नगिंदर के गरम बोल सुन का उसका कलेजा सुन्न हो गया। चेहरे पर जर्दी छा गयी। गोबर से लथपथ उसके हाथ नीले होने शुरू हो गये।

"अगर तुम्हारी जीभ को खाने का चस्का पड़ गया था, तो इससे तो बेहतर था कि घूरे पर से राख की बोरी भर लातीं!"

"कोई बात नहीं पुत्तर ! आदमी से गलती हो ही जाती है। अब तो इस बात पर मिट्टी पड़ चुकी है, तू इसे नंगी न कर। इस तरह अपनी ही बदनामी होती है!"

"पीछे तो आपने खूब शोभा बनायी है।" नगिंदर के गुलाबी चेहरे पर, गहरा लाल लहू चढ़ रहा था। आंखों में लाल लोहे जैसी जलन थी। उसने गुस्से में जलते हुए, अपनी मुंडी हुई टोड़ी को हाथ लगाते हुए गिले से जय कौर की ओर आंखें निकालीं, "अब मैं यह मुंह ले कर बाहर कैसे निकलूं?"

"कोई बात नहीं . . .!" जय कौर ने कहा और फिर वह अचानक ही भड़क कर लोगों को बुरा-भला कहने लगी—"मुए आप तो बड़े सच्चे हैं। कहते हैं न कि 'अपनी आंख में शहतीर भी नहीं दीखती, दूसरों की आंखों में तिनका भी दीखता है।' मुओं को, चुगली करने से क्या मिलता है ! कमबख्तो, तुम रह जाओ सोये के सोये ! पुत्तर मरें तुम्हारे, पड़ जाय प्लेग तुम्हें ! तुम्हारे अपने घरों में जो कुछ होता है, वह नहीं नजर आता! . . .बेड़ा गर्क हो तुम्हारा . . .सारा दिन चुगली करते हो . . .कीचड़ उछालते हो . . .उंगलियां उठाते हो !" बेबे कितनी ही देर तक क्रोध में जलती रही।

बेबे को गुस्से में उबलते देख कर, नगिंदर भरा हुआ मन ले कर बाहर चला गया। जय कौर उसके पीछे दरवाजे तक गयी, लेकिन न ही उसकी बांह पकड़ सकी और न ही लौटा लाने के लिए उससे मिन्नत-समाजत कर सकी। उसे डर लग रहा था कि कहीं झिड़क ही न दे। सारा दिन 'लपक-लपक' कर देखती रही, पर नगिंदर वापस नहीं आया। उसका दिल घबराने लगा ! वह सोचने लगी कि आखिर नगिंदर गया कहां? जल-भुन के उसने माथे पर हाथ मारा . . .। उसके बैठने-उठने के दो-चार घरों में देखा। लेकिन थक-हार कर घर में आ गिरी, तो भड़क कर गुरबंश को बुरा-भला बोलने लगी। उसे ताने दे-दे कर जलाती रही और मन की भड़ास निकालती रही। सूर्यास्त के समय, नगिंदर गिरता-पड़ता घर आ गया। उसने खूब शराब पी हुई थी।

"पुत्तर! रोटी लाऊं?" जय कौर ने डरते-डरते पूछा। उसके डूबते हुए दिल को ढ़ांढ़स हो गयी थी।

"तुम्हारी रोटी से ही सारी उमर चलती रहेगी।"

बेबे के जैसे दांत बैठ गये। उसने और कोई बात नहीं की। दोबारा पूछने की उसकी हिम्मत नहीं हुई। बेवक्त घर में कलह मचने के डर से, उसकी सांस सूखती जा रही थी। उसने चुपचाप खाना ला कर रख दिया। नगिंदर ने भी चुपचाप ही खाना शुरू कर दिया। खाना खाते वह लड़खड़ाती जबान में, उन्हें लगा-लगा कर बातें करता रहा।

" . . .बहुत अच्छा किया ! सयानी मां थी न . . .पुत्र की इज्जत की अच्छी रक्षा की है ! . . .शाबाश ! पति परमेश्वर के चरणों में रहने वाली उस औरत ने भी, बड़ी . . .ही . . .ब . . .ड़ी ही अच्छी वफा निभायी है . . .और यह इनाम ! . . ."

खाना खा कर नगिंदर अंदर जा कर लेट गया। गुरबंश ने सारा काम समेटा। फिर पीली-जर्द हुई बंशो ने , दूध का लोटा ला कर, उसके सिरहाने रख दिया और रजाई में मुंह-सिर लपेट कर लेट गयी। डर के मारे उसे दोगुनी-चौगुनी कंपकंपी चढ़ रही थी। हाथ-पैर ओलों की भांति ठंडे हुए पड़े थे। उन्हें पल-पल बाद, बार-बार रजाई में दबा रही थी। फिर उसके घुटे हुए कानों में, जूतियों की चरमराहट सुनाई दी। लगा जैसे नगिंदर जूतियां घसीटता

हुआ बाहर आंगन की ओर चल दिया हो। दरवाजे को जोर से खोलते हुए उसने एक बड़ी सख्त-सी गाली दी और किवाड़ 'टाह' कर के दीवार के साथ जा टकराया। गुरबंश को रजाई में भी पसीना आ गया। ' . . .बू . .अ . .! . . .सच्चे पा-त-शा-ह ! आज इसका गुस्सा टल जाय, मैं सवा पांच रुपये की देग चढ़ाऊंगी . . .तब न जाने कैसे अकल पर पर्दा पड़ गया था। कई स्त्रियां दस-दस, बारह-बारह साल अपना सत कायम रखती हैं। न जाने मेरी मत क्यों मारी गयी थी !' वह रजाई में बाहर की खड़खड़ाहट से डरती, अपने दोनों हाथों से कानों को दबाती, बंद करती 'सच्चे पा:त-शाह' को याद कर रही थी। तभी उसके ऊपर से, रजाई बड़े जोर से उतर गयी। ताक में पड़े दीपक की सीधी ऊपर उठती हुई लौ को धक्का-सा लगा। इधर-उधर दो-एक चक्कर खा कर लौ फिर उसी जगह वापस आ गयी।

"अब रजाई लपेट-लपेट कर लेट रही है !" नगिंदर रजाई का एक सिरा हाथ में पकड़े दांत पीस रहा था और मुंह से झाग गिरा रहा था। गुरबंश कानों पर हाथ रखे नगिंदर की ओर टकटकी लगाये, सहमी नजरों से देख रही थी। . . ."मेरे पीछे यारों से आशनाई करती रही है, कमजात !" और 'कमजात' शब्द, उसने इतने जोर से दांत पीसते हुए कहा, जैसे उसके शरीर को आग लग गयी हो।

गुरबंश नगिंदर की ओर देखती हुई, आहिस्ता-आहिस्ता उठ कर बैठ गयी। वह ऐसे सिमटी-सिकुड़ी हुई थी, जैसे वह 'अब गिरी कि तब गिरी' के एहसास से सहमी हुई हो।

"बदचलन, चरित्रहीन!" उसने फिर दांत पीसे और गुरबंश के मुंह पर जोर से एक भारी तमाचा आ पड़ा। उसके सिर से चुनरी उतर गयी। और बाल 'बया के घोंसले' की तरह बिखर गये, लेकिन उसने चीख नहीं मारी। वह अभी भी नगिंदर की ओर ऐसे ताक रही थी, जैसे छुटकारे को कोई राह उसे दिखायी दे रही हो।

"बता, किस 'बहन के यार' के साथ धक्के खाती रही है?"

गुरबंश के मुंह में जैसे जीभ ही न हो। और नगिंदर ने पूरे जोर से दूसरे हाथ से एक धौल उसकी गर्दन पर जमा दी। गुरबंश उलट कर दीवार की ओर जा पड़ी।

"अब जबान सिल गयी है क्या, कुतिया । यह न सोचना, मैं तुझे ऐसे ही छोड़ दूंगा . . .! तुझे मैं ऐसा पाठ पढ़ाऊंगा, कमजात कहीं की . . .! जैसे तूने मेरी दाढ़ी को दाग लगाया है वैसे ही . . .!" नीचे पड़ी गुरबंश के लात मारते हुए, नगिंदर ने पूरे जोर से कहा, "किस मां के जमाई को घर में बुलाती रही है . . .?"

गुरबंश अभी तक भी नहीं बोली थी।

"तेरी मां की . . .!" और नगिंदर ने नीचे से लकड़ी के तल्ले वाली जूती उठा ली और गुरबंश की आंखें हल्दी जैसी जर्द हो गयी और वह डर के मारे पीछे को सरक गयी।

"यूं खामोश रहने पर मैं तुझे छोड़ दूंगा क्या?" और नगिंदर ने बड़े जोर से लकड़ी के तले वाली जूती गुरबंश के कंधों और पीठ पर जड़ दी। गुरबंश की चीख निकल गयी।

"हाय! . . .मार दिया री मां . . .!"

"मां तो भला अब तुझे क्या बचा लेगी . . .! तब मां से पूछ कर यारों के पास जाती थी?" और नगिंदर ने एक और जूती गुरबंश के सिर पर जड़ दी। गुरबंश ने दोनों हाथों

से सिर पकड़ लिया और नगिंदर की ओर आंसू-भरी आंखों से देखा। उसके चेहरे पर आंसू शीशे की तरह चमक रहे थे। वह चुपचाप रोती रही। उसकी चुप से गुस्सा खाकर नगिंदर ने उसे चोटी से पकड़ लिया और जहां तक हो सका, लगातार जूती से उसकी पिटाई करता रहा। लातों-मुक्कों का तो कोई हिसाब ही नहीं था ! गुरबंश की चीखें निकल रही थीं। लेकिन सर्दी का मौसम होने के कारण आवाज अंदर से बाहर नहीं जाती थी। गुरबंश मार खाती और अपने-आपको चोटों से बचाती हुई संदूकों की ओर खिसकती चली गयी।

"कुतिया ! बहानों से क्या तू बच जायगी!" और उसने गुरबंश की, मुक्कों-घूंसों से पिटाई करते हुए चोटी से पकड़ कर घसीटता हुआ उसे दरवाजे की ओर ले गया।

"अरे नगिंदर !" बाहर सेहन में से उखड़ी हुई सांस वाली एक आवाज आयी–"अरे, दरवाजा खोल।" दूसरे कमरे में लेटी हुई जय कौर को भी इस कमरे की खट-पट सुनायी दे गयी थी। जय कौर किवाड़ खटखटाने लगी। अंदर से कुंडा लगा हुआ था। "अरे नगिंदर, पुत्तर, दरवाजा खोल।"

"जा, तू जा माई . . .। बड़ी आयी है दरवाजा खुलवाने वाली।" . . .अंदर से गुस्से-गिले से भरा हुआ बोल उभरा।

जय कौर ऊंचा बोल कर लोगों का भी जगाना नहीं चाहती थी। उसने नम्रता से कहा, "पुत्तर ! इसमें कुछ नहीं धरा ! यह मर जायेगी! फिर हम क्या करेंगे?" लेकिन नगिंदर ने दरवाजा नहीं खोला। अंदर से रोने-सिसकने की आवाज सुनायी दी। जय कौर ने जोर लगा कर पल्ला चूल से एक तरफ सरका लिया और अंदर चली गयी। नगिंदर गुस्से में तपा, चारपाई पर बैठा पसीना-पसीना हुआ पड़ा था। गुरबंश जोर की मार खा कर, एक कोने में गिरी पड़ी थी।

"अरे पुत्तर ! यह क्या किया तूने?"

चोटों के दर्द को अंदर ही अंदर सहन करती और चीख दबाती बंशो ने बुढ़िया की ओर फाड़-खानेवाली नजरों से देखा, जैसे बुढ़िया ने ही उसकी पिटाई करवायी हो। गुरबंश के अंदर क्रोध उठा कि बुढ़िया को चीर कर रख दे, लेकिन भेड़िए की तरह ताकते नगिंदर को देख कर, वह चुप रही। बुढ़िया उसे उठा कर अपने कमरे में ले गयी। नगिंदर ज्यों का त्यों वहीं बैठा कुछ सोचता रहा। मन में पश्चापात भी उठा। दिल घबराने लगा। चारपाई पर लेटने को जी नहीं चाह रहा था। हैरान-भौंचक्का, इधर-उधर बिखरे कपड़ों की ओर देखता रहा। आंखों में से लगातार 'टप-टप' आंसू गिरने लगे। जिस हाथ में जूती पकड़ी हुई थी, उस हाथ पर एक जगह जम गये खून को देखता रहा। . . .अंदर से एक जोरदार सिसकी निकली और साथ ही नौकरी से हटाने वालों के लिए एक गंदी गाली भी। गले में सिसकियां अटकती हुई प्रतीत हुईं। उठ कर बाहर सेहन में आ गया। यूं ही इधर-उधर चक्कर काटता रहा। ठंड से सेहन की बर्फ बनी मिट्टी का उसे जरा भी एहसास नहीं था। गयी रात तक वह सेहन में इधर-उधर डोलता रहा सोचता रहा और साथ ही रोता रहा।

सुबह-सवेरे उठ कर चाय पी और बिना बोले ही बाहर की ओर चला गया। दरवाजे में खड़े होकर, दोनों तरफ निगाहें घुमायीं। कोई नहीं आ रहा था।मोड़ पर खड़े जाटों की

खिलखिलाहट सुनायी दी, तो सारा शरीर ही कांप उठा। वापसी में उसे नंबरदार मिल गया।

"सुना भई फौजी, कैसा है?"

"अच्छा हूं।" कहता हुआ नगिंदर तेज-तेज कदमों से आगे चलता गया। उसे लगा, जैसे नंबरदार उसी पर हंसा हो।

23

आनेवाले शीतकाल में केवल की नयी बहू अमरो की गोद में लड़का था। अमरो के आने के बाद दीपो और बंतो का आपसी विरोध बढ़ता चला गया था। दीपो अमरो के पास कभी-कभी आ जाती थी। केवल अमरो के सामने दीपो से ज्यादा बात नहीं करता था। पर अमरो भी बुद्धू नहीं थी। वह भी अंदर ही अंदर कुढ़ती रहती कि यह परायी . . .स्त्री उसके घर क्या करने आती है? जब कभी केवल के अंदर उबाल उठता तब वह रात को दीपो के पास चला जाता। पीछे मौका देख कर बंतो अमरो को केवल की करतूतों और बदफेलियों के बारे में बताती रही। अमरो सुन-सुन कर अंगीठी की तरह सुलगती रहती। अंदर से रह-रह कर गुस्सा उठता, लेकिन कोई वश न चलता। कभी-कभी उसे बंतो की बतायी हुई बातें झूठी लगतीं, लेकिन जब उसने शरीके की दो-चार और औरतों से सुना तो दीपो के चौथे-पांचवें दिन अचानक लगे चक्कर पर उसे संदेह होने लगा।

एक दिन अमरो अपने मन की बात रोक न सकी। उसने अचानक आयी दीपो से सीधे कहा, "देख बहन ! अब तक तू मन-मर्जी से खाती-पहनती रही है। अब मेरी प्रार्थना है, तेरे आगे हाथ जोड़ती हूं, तुझे वास्ता है परमात्मा का, तू मेरा जीना दूभर न कर।"

"अरी बहन ! मैंने तुझे क्या कहा है?"

"तू क्या कह सकती है, मेरी बहना? मुझे जरा-जरा सी बात का पता है। मुझ गरीबनी बेचारी को घर से बेघर न कर . . .!"

दीपो के अंदर से एक जोरदार रुलाई निकलने को हुई। आंखों में कड़वा पानी आकर ठहर गया, लेकिन वह हिम्मत करके उसके कंधे पर हाथ रख कर मुंह बिसूर कर कहने लगी, "मैंने तो इसके पीछे दुनिया भर के ताने सुने हैं ! . . .तू कहती है, पीछा छोड़ दे! इस जाट के पीछे मैं आज भी जान देने को तैयार हूं। मुझे भला आंख दिखाने वाला कौन था ! इससे आंख लगायी तभी तो हर गई-गुजरी से बातें सुनी हैं। तेरी जेठानी जैसी जिनकी दो आने कीमत नहीं, वे भी बातें कह देती हैं, अरे तू तो केवल के साथ निकल गयी थी मुइओ। तुम्हें क्यों जलन होती है भला? बदनामी मैंने अपनी करवायी, खाक में मिली तो मैं मिली, तुम्हारे पल्ले से क्या गया भला . . .? और फिर एक यह है . . .! मैंने इसकी तरह रंडीपन कभी नहीं किया।"

"मैंने तो तुझे कभी ताना नहीं दिया न?"

"तू ताना देगी भी किसलिए? तेरा भला मैंने कुछ चोरी किया है! अगर मुझे तेरे ही घर में पैर रखने थे, तो मैं तुझे खुद अपने हाथों से सब कुछ कर-करा देती?"

"पर दलीप कौरे, अगर कोई किसी के घर को फावड़ा पकड़कर गिरायगा, तो क्या वह आगे से भला करेगा?" अमरो ने हाथ हिलाकर होंठ चबाये और कहने लगी, "जब तक केवल अकेला था, तब तक परायी औरतों को अपना घर लुटाता रहा, लेकिन मैं अब अपनी आंखों से देख कर कैसे सहन करूं? . . .बाकी रही तानों की बात . . .! . . .जब

बहन, तू केवल के आयी है, तभी तो कहते हैं . . .और फिर लोग तो कहेंगे ही ! और किसी को क्यों नहीं कहते? अब क्या तू धुल जायगी? जो बंदा काना है, वह तो सारी उमर काना ही रहेगा।"

"तू कौन-सा सोलह कला संपूर्ण है!" दीपो को उसकी लगा कर की गयी बात बुरी लगी थी।

"सोलह कला संपूर्ण? मैं कौन-सा किसी के साथ निकल कर गयी हूं? मेरा तो बहन! बंदे में ही दम नहीं था ! माता-पिता ने अपने हाथों विदा किया है . . .! खुद नहीं, उठ कर भागी . . .कहते हैं न, चोरी का ताना, यारी का ताना, सही बात का कैसा ताना री?"

दीपो उसके घर बैठी थी, उसके साथ ताल ठोंक कर लड़ नहीं सकती थी। अगर झमेला खड़ा करती, तो लोग उसके पीछे पड़ जाते। न जाने उसके बोये दाने कैसे थे, जिनका कोई मोल ही नहीं था ! मुंह-सिर लपेट कर चली आयी। और करती भी क्या? लेकिन अंदर से अपने-आप ही गाली निकल गयी, "चूहड़ी ही रही न!"

गली में उसे हल छोड़ कर आता केवल मिल गया। दीपो का उतरा हुआ मुंह देखकर, उसका हंसता हुआ चेहरा उदास हो गया। केवल को अंदर की बात का पता भी था, क्योंकि सवेरे-शाम अमरो उसके साथ क्लेश करती थी।

"क्या बात है? तूने मंह क्यों बना रखा है, जैसे भिड़ों ने काटा हो!" उसने हल्का-सा हंस कर, छमक से, अपनी मिट्टी-भरी टांग को खुजलाते हुए पूछा।

"देख ले। किये का बदला मिल रहा है . . .घर आयी की वह बेइज्जती की है कि पूछो मत! ऐसा तो घर के अंदर आये कुत्ते से भी नहीं करते !" और साथ ही, उसका भरा हुआ मन रो पड़ा। केवल का शरीर जैसे सुन्न हो गया। उसने अपने-आप को फंदे में फंसा महसूस किया। उसका दिमाग चकराने लगा। उसे सिसकियों-भरा बोल फिर सुनाई दिया।

"मुझे तो तुम पर गर्व था !"

"फिर बता, मैं क्या करूं?" केवल अचानक ऊंची आवाज में बोला, "और बातें तो रहीं एक तरफ . . .। बढ़इयों के घर से आरा लाकर बीच में से चीर ले . . .। इससे ज्यादा और कोई बात तो है नहीं . . .!"

दीपो ने उसके तने हुए चेहरे की ओर देखा। अंदर और बाहर की आर्द्रता उससे बर्दाश्त नहीं हो रही थी। क्षण भर तो वह अश्रु-भरी आंखों से देखती रही, फिर बिना बोले ही चली गयी।

घर में प्रवेश करते ही केवल ने अमरो और बंतो को खूब गालियां दी। पर दोनों में से कोई कुछ नहीं बोली ! बीच में अमरो ने जब एक-दो बार कुछ कहना चाहा तब केवल ने पशुओं की छमक ले कर, उसकी ओर देख कर दांत पीसे और कहा, "चुप कर, कुतिया! क्यों मार खाना चाहती है?" तो अमरो खामोश हो गयी।

कितनी ही देर तक केवल तेल की कड़ाही की तरह खौलता रहा ! फिर हाथ-पैर धो कर चारपाई पर पड़ गया। अमरो ने चुपचाप खाना पकड़ा दिया।

विवाह कराने से केवल की गृहस्थी उलझ गयी थी। उसने पशुओं से भी सेहन भर

लिया था। खेती का काम शुरू कर लेने से सारा दिन ही काम का जोर रहता। अमरो गोबर-कूड़ा करती और खेतों में खाना ले जाती। वापसी में हरे चारे का गट्ठा सिर पर उठाये आती। केवल के पास पहले जैसी फुर्सत नहीं रही। सुबह-शाम किसी न किसी बात पर क्लेश खड़ा हो जाता! अभी साल भी नहीं गुजरा था कि बंतो पट्टीदारी करने लगी थी। जब अमरो आयी थी, तब वह सोचती थी, 'इसे कौन सा टिकना है, दो-चार महीने काट कर चलती बनेगी।' तब वह अमरो को दीपो के खिलाफ भड़काती रहती थी। बंतो का स्वभाव था कि अगले से सुर मिलाती तो पूरे दिल से, घी शक्कर हो जाती। पर जब बैर करने पर आती, तो आगा-पीछा न देखती। इस कारण लोग उसे 'ओछी औरत' कहते थे। अमरो छोटे-मोटे काम करने या सौदा-सुलफ लाने के लिए बंतो के बच्चों को आवाज दे कर बुला लेती। बंतो अंदर ही अंदर जलती रहती कि पहले तो केवल उनकी 'पांच-दस' की मदद कर देता था, लेकिन अब ये लोग उल्टा उन्हें तंग करते हैं। बहाने-बहाने वह कई बार अमरो को सुना भी देती थी। दूसरे, जब अमरो का 'गर्भ' दिखायी देने लगा तो बंतो के माथे पर सात ठीकर फूट गये। उसकी नजर तो उस समय पर थी, जब अमरो को चुपके से खिसक जाना था, लेकिन उसके पैर पक्के होते देख कर, बंतो जलने लगी। उसकी नजर तो केवल की थोड़ी-बहुत जमीन पर थी। और कुछ नहीं तो, समय-असमय वे केवल की जगह का ही उपयोग कर लेते थे। अब बंतो हर किसी से अमरो की बुराई करने लगी थी और कुत्ती, चूहड़ी, चमारी के बिना बात नहीं करती थी। अमरो ने एक-दो बार उसे दूसरी औरतों से ऐसी बातें करते भी देख लिया था, लेकिन उसने क्लेश नहीं बढ़ाया।

एक दिन अमरो ने बंतो को भजनो से यह कहते हुए, अपनो कानों से सुना, "अरी इसे भला कोई शर्म-हया है ! सयाने कहते हैं न,बेटी वह जो खानदानी, बैल वही जो भेड़पे रहे का!" . . .यह न जाने कहां से कुतिया जगह-जगह की घास चरती आ गयी। . . . यह तेरे-मेरे साथ कैसे मिल जायगी? भला मिल जायगी? तूने, और मैंने तो अपने माता-पिता की लाज रखी . . .! दसूरी वह है न, कुत्ती दीपो? उसने कितनी थू-थू करवायी है ! कोई हाल रहा है भला . . .!"बंतो ने 'माता-पिता की लाज' वाली बात की तो भजनो का पेट हंसा। उसने स्वाभाविकता दिखाने के लिए झट से मुंह पर चुनरी का पल्ला ले लिया और मन ही मन कहा, "लो, यह कुतिया, 'राड़े वाले' साधू की चेली बनी फिरती है।"

अमरो सुन-सुन कर कुढ़ती और केवल को उसकी चुगलियों के बारे में बताती। केवल आगे से उसे डराता-धमकाता, "तू उसे भौंकने दिया कर 'बहन-देने की'। . . .अगर मैंने तेरी कोई बात सुन ली, तो चोटी मूंड कर घर से बाहर कर दूंगा।"

पहले-पहल जब बंतो अमरो को अपनी खास समझ कर दीपो की बुराई करती थी, तब अमरो बंतो से जरूरत पड़ने पर दूध ले आती थी, क्योंकि केवल की भैंस ब्यायी थी। उसकी शुरू में ही कटड़ी मर गयी थी। उस समय बंतो ने उसे देवरानी बनाते हुए कहा था, "ले, तेरा मेरा दूध कोई अलग-अलग है! तू बिना-पूछे डोलची में से दूध ले जाया कर . . .हां ! हमें किसी चीज की जरूरत नहीं पड़ती क्या? कोई बात नहीं! किसी की कुछ जरूरत है किसी की कुछ !"

और जब उसका साझापन बासी दूध की भांति फटने लगा, तब बंतो हर ऐरे-गैरे से कहने लगी "यह क्या ढंग हुआ भला, बगैर पूछे, मेरी डोलची को हाथ लगाने का? . . . हैं? . . .! अगर अगला बांह पकड़ाये, तो बांह ही थोड़ा डकार जाते हैं? और बातें तो अलग रहीं, इतने मनहूस मुंह वाली कुत्ती चमारी है कि एक दिन मेरी भैंस का दूध देख लिया, तब से ही भैंस वक्त-बेवक्त करने लगी है।" और तो सभी तमाशा देखने के विचार से चुप रहीं, पर गुरदयालो सच्चे दिल वाली बूढ़ी स्त्री थी। उसे बंतो की ये बे सिर पैर की बातें बिल्कुल अच्छी न लगतीं और वह उसके मुंह पर ही उसे 'लच्छो बंदरिया' कह देती।

जब बंतो दूध की बात कर रही थी, गुरदयालो ने ऊब कर उसकी बात बीच में ही काट दी, "कोई बात नहीं! . . .हमने तो भैंसें भी रखी हैं . . .दूध भी मनों होता है. . . अब इनके बकरियों का दूध है। यह पीते भी हैं, डेयरी में भी देते हैं और बकरियों के दूध में से पट्टीदारनी चोरी भी कर ले जाती हैं।" हाथ हवा में उछाल कर गुरदयालो ने यूं होंठ चबाये, जैसे उसे बंतो की जरा परवाह नहीं थी। "कहते हैं कि घर में नहीं दाने, अम्मा चली भुनाने। है न अनोखी बात ! लानत है। बड़ी बनी फिरती है !"

बंतो ने उसकी ओर गुस्से-भरी कहर ढाने वाली नजरों से देखा। उसका सूखा हुआ शरीर ऐसे कांपने लगा, जैसे जोरदार तूफान में बकरी भीगी खड़ी हो। और फिर वह गुरदयालो की ओर मुंह बिचका कर अपने घर को 'दूध चोरी करने वालों' की तरह ऐसे भागी, जैसे समय निकलता जा रहा हो।

एक दिन बंतो ने और ही झगड़ा खड़ा कर दिया। बात यों हुई कि बंतो और उसकी दोनों खूब जवान लड़कियां 'बाकीमानों' के खाली पड़े चौगान में ताना तन रही थी। पीछे से मीता कहीं दो पंसेरी गेहूं दुकान पर दे आया। जब बंतो ने गेहू कम देखा, तो उसकी सांस रुक गयी। उसने अपनी पड़ोसिन अमरो से पूछा। उसे पक्का संदेह था कि अमरो दांव खेल गयी है।

"बेबे ! मैं तो अभी आयी हूं खेत से घास का गट्ठर ले कर।"

"तो फिर, गेहूं क्या तीसरी गली वाले ले गये?" बंतो दोनों हाथ कमर पर रखे उसकी ओर भेड़िये की भांति देख रही थी। अमरो उठ कर उसके पास आयी और उसे बांह से पकड़ कर अपना घर दिखाती हुई कहने लगी, "ज्यादा बोलने की जरूरत नहीं, तू मेरे घर की तलाशी ले ले। अगर तेरी गेहूं मिल जाय, तो चाहे चौपाल में बैठकर मेरी चोटी मुंडवा देना!"

"छोड़ री, हट परे . . .!" बंतो ने बांह छुड़वाते हुए, उसकी ओर नथुने फुलाये, "अब तक गेहूं यहीं पड़ी होगी . . .! मुझे पता नहीं है भला . . .कहीं का कहीं पहुंचा दिया होगा।"

"कहां पहुंचा दिया होगा . . .?" इस बार अमरो ने भी कमर पर हाथ रखते हुए अकड़ कर पूछा।

"तेरे जो खसम यहां हर रोज आते हैं उन्हीं के वहां पहुंचाया होगा!"

बंतो ने इतनी बात कही कि अमरो उसके पीछे पड़ गयी। उसने पूरे ताव में, उसकी ओर हाथ बढ़ा कर गरजते हुए कहा, "खसम होंगे तेरे, लुच्ची जमाने भर की . . .।

छोकरियों का झुंड का झुंड है! उनके खसम बना ले न . . .।"

और फिर दोनों तरफ से बांहें उछाल-उछाल कर ताने दिये गये, गंदी गालियां बकी गयीं। ऐसा झगड़ा हुआ कि बहुतों को मुंह छुपाने के लिए जगह नहीं मिल रही थी। बंतो ने सूर्यास्त तक घर में कोलाहल मचाये रखा। इसी तरह से कलह-क्लेश होते दो दिन हो गये थे। बंतो सुबह-शाम बेटी-बेटों की गालियां निकालती। लोगों ने समझाया भी, लेकिन उसे गेहूं का घाटा पूरा होता होता दिखायी नहीं दे रहा था। वह तब गालियां दे रही थी कि ऊपर से केवल आ गया। पहले गाली देते हुए उसने पीछे से उसकी गरदन पर एक जोर की धौल जमायी। वह गरदन सहलाती लड़के को संभालने लगी। फिर केवल ने गला फाड़ रही बंतो से जरा जोर दे कर पूछा, "क्यों, तोल कर दूं तुझे अभी गेहूं . . .?"

"अभी तो क्या तोलेगा . . .तब न समझाया इस कुत्ती चूहड़ी को !" बंतो ने 'कुत्ती चूहड़ी' मुंह से निकाला ही था कि केवल ने क्रोध में आ कर, उसके रूखे केशों में हाथ डाल लिया। सेहन में घसीटते हुए, जितना उससे बन पड़ा, मुक्कों-घूसों और लातों से उसकी मरम्मत की। बंतो बेशक शरीर की कमजोर थी, पर उसने केवल के हाथों में काट खाया। बच्चों ने भी चीखना-चिल्लाना शुरू कर दिया। आस-पड़ोस वालों ने आकर उन्हें छुड़ाया और अलग-अलग किया। बंतो के बाल बिखरे हुए थे और वह अभी भी पड़ोसिनों पर जोर जोर से बोल रही थी।

"अरी, उस कुत्ती चूहड़ी ने मेरी पिटाई करवायी है!"

"तू क्यों उनके पीछे हाथ धो कर पड़ी है?" बीच में ही किसी ने सयानी बात की, "यूं शरीके-कबीले में गुजारा नहीं होता। आस-पड़ोस से सौ चीजों की जरूरत पड़ती है . . .।"

"अरी, आज तक मुझे किसी ने हाथ नहीं लगाया . . .उस घर से भाग कर आयी ने, मुझे बेइज्जत करवाया है ! मैं तो कहती हूं, केवला, रब के बंदे, तू जड़ से उखड़ जाय, तेरा कुछ न रहे। जो आज तूने मेरा बुढ़ापा खराब किया है . . .।"

"तेरी तो सारी उमर ही मिट्टी खराब रही है कुतिया। तू काबू में आयी है, किसी कंजर के . . .।" अमरो ताना देने लगी, तो केवल ने आंखें निकालते हुए उसे मां की गाली दी। वह चुप हो गयी।

"मुझे मारने को आ रहा है कंजर कहीं का ! बड़ी इज्जत वाला था, तो चूहड़ी क्यों ब्याह कर लाया? . . . अगर जाटनी ब्याह कर लाता, तो तू बसने ही नहीं देता किसी को इस कुत्ती औरत के चलते लाठी ले-लेकर लपक रहा है . . .।"

"कुतिया! तू क्या बोलियां मार रही है . . .अब तक 'रखैल' बनी रही है।"

बहुतों को यह पता नहीं चल रहा था कि केवल ने यह 'पगलों जैसी' बात क्यों कह दी, लेकिन इससे बहुतों के मुंह लाल-सुर्ख हो गये और छुड़ाने वाले या तमाशा देखने वाले एक-एक कर के चले गये।

बंतो का बोलते-बोलते गला बैट गया था। छोटों और बड़ों ने उसे बहुतेरा समझाया पर वह नहीं मानी। बड़ी लड़की ने उसे मना करना चाहा, तो वह केवल का गुस्सा लड़की

पर ही निकालने लगी। उसके तमाचे मार कर बोली "कुत्तियो ! तुम मुझे बुरा-भला कहती हो, तभी तो पट्टीदार सिर पर चढ़ रहे हैं।" और बंतो तब तक बोलती गयी, जब तक उसकी जबान उसका साथ देती रही।

यह बात हुई और बीत गयी। दोनों घरों में मन-मुटाव हो गया। बंतो अपना गेहूं वाला 'रोना' लोगों के पास रोती रही। केवल को खेतों में देह-तोड़ काम करना पड़ता। घर की पट्टीदारी ही सांस नहीं लेने दे रही थी। जब कभी अमरो की मां को पैसे आदि की तंगी होती, तो उसकी भी मदद करनी पड़ती। इसके बावजूद, उसका मन दीपो से टूटा नहीं था, पर दीपो पहले से ढीली पड़ गयी थी।

माघ महीने की चढ़ती ठंड के दिनों में केवल के खेतों में दिहाड़ीदार मक्की काट रहे थे। केवल चारे का गट्ठा रखने घर आया, तो दिहाड़ीदार की चाय बना कर ले गया। अमरो मजदूरों के पास थी। रास्ते में चाय ले जाती हुई दीपो उसे मिल गयी। बात करने से पूर्व उसने इधर-उधर देखा। पता नहीं, अब वह कुछ ज्यादा ही डरने लगा था। खेत के निकट आ कर केवल एकदम चौंक कर उससे थोड़े फासले पर हो गया। अमरो की चील जैसी आंखों से उसे भय लगा। अमरो के पास चाय रखते हुए उसने उसकी ओर दुविधा भरी नजरों से देखा और अमरो ने मजदूरों से आंख चुरा कर केवल को गौर से देखा।

"कुछ शर्म किया कर।" अमरो ने आहिस्ता से मौका देख कर कहा।

"मैं चारे का गट्ठा काट कर रख आऊं?" केवल ने इतनी धीमी आवाज में कहा कि मजदूर कुछ भी समझ न सके। यह कहते हुए उसने दरांती और रस्सा उठा लिया।

इस बार लड़की के जन्म के समय अमरो को रात को दर्दें उठनी शुरू हुईं। कोई बुढ़िया तो नजदीक थी नहीं। पंजाबो के हाथ-पैर अब पहले वाले नहीं रहे थे। दूसरे, वह लीखे के साथ बाहर वाले घर में जा कर रहने लगी थी। केवल ने अमरो को तकलीफ में देख कर बंतो को आवाज दी। उसने बिल्कुल भी इनकार न किया और आ कर अमरो को संभाल लिया। लड़की के जन्म के बाद, जो कुछ उससे बन पड़ा, 'टंडा-गरम' अमरो को देती रही। पर भैंस का थोड़ा-बहुत दूध, अपने घर भी ले गयी। पीड़ा से टूटी पड़ी अमरो बंतो को ध्यान से ताड़ रही थी। उसने केवल को अपने पास बुला कर कहा, "तूने इसे क्यों बुलाया?"

"और किसे बुलाता आधी रात के समय?"

"अच्छा ! फिर रोना बैठ कर पैदा करने वालों को। यह मुई तो सारा घर साफ कर जायगी—मैंने खुद देखा है, दूध सारा अपने घर रख आयी है। दूसरे, मुझे कुछ खिला-विला दिया, तो फिर रोयेगा, आंखें मल-मल कर . . .।"

केवल अंदर से उदास हो गया। लेकिन वह बड़े गर्व से बुला कर लायी गयी पट्टेदारिन को किस मुंह से बेइज्जत करके घर से रवाना करे! दो दिन बाद, केवल ने खुद ही बंतो को दबी जबान से कहा—"बंतो, अब हम चला लेंगे, जैसे-तैसे ! दूसरे, तुम्हारे अपने घर में भी तो काम है !"

"हमारी तो लड़कियां संभाल लेती हैं, चाहे हैं अभी नादान, फिर भी बहुत सहारा है। मैं तो चार दिन और कटा देती . . .दुख-सुख के समय बहन-भाई नहीं संभालेंगे, तो और

कौन संभालेगा . . .?" और चलते-चलते मीठे स्वर में उसने यह भी कहा, "पट्टीदारी में लड़ते-भिड़ते भी हैं, लेकिन पीछे नहीं हटा जाता।"

वैसे बंतो ने अमरो का रूखा व्यवहार देख लिया था और अमरो को केवल से अपने बारे में कहते हुए भी सुन लिया था। मन को बहुत दुख हुआ। अंदर ही अंदर खौलती भी रही। मन को चैन न आया। भिन्नतो और भजनो से यह बात कही, तो उन्होंने आगे से उसे ही लानत-मलामत की, "अरी तू ही बेशर्म है। तब देखा था न, कि केवल ने कैसे तेरा अपमान किया था, तू फिर ऊपर जा चढ़ती है . . .।"

"बहन, अगला नम्र होकर बुला लेता है तो क्या करूं?"

"छोड़ परे !" भिन्नतो ने होंट चबाये, "मैं तो ऐसे लोगों के उल्टी जूती भी न मारूं। एक तू है कि इतनी गुलामी करती है।"

यह बात हुई। और भी हुईं, पर न बंतो को और न ही किसी और को समझ आयी। ठंड अधिक पड़ने लगी थी। गेहूं की फसल घुटनों-घुटनों तक ऊंची हो गयी थी, लेकिन फसल की देख-भाल और सेवा करते-करते केवल थक-टूट गया था। सिर पर कर्ज का बोझ बहुत हो गया था। इन सब बातों के अलावा, केवल को दोनों घरों का कलह-क्लेश भी सांस नहीं लेने दे रहा था। हालांकि देवरानी-जेठानी में ज्यादा देर तक मन-मुटाव भी न रहता। इस बार वर्षा के पानी के कारण भी उनकी झड़प हो चुकी थी। दोनों घरों का जल-निकास मार्ग एक ही था। बंतो कह रही थी, "मेरा आंगन तालाब बना हुआ है।" और अमरो थी कि अपने सेहन के बीच मे पानी जाने नहीं दे रही थी। जैसे-तैसे बंतो ने बाल्टी से पानी बाहर निकाला। वे दो कितने ही दिनों तक आपस में न बोली।

एक दिन अमरो दीवार के पास खड़ी पड़ोसन से बातें कर रही थी। बातें खत्म हुईं तो उसने पड़ोसन से कहा—"चल बहन ! कोई काम-धंधा करें। सारा दिन खाली बैठ कर ही बिता देती हैं।"

बंतो आंगन में बैठी रजाई को बखिये लगा रही थी। पानी के निकास वाले झगड़े के बाद पहली बार वह बोली, "अभी तो तू काम ही नहीं करती . . .। एक काम कर . . . आंगन में बांस गाड़ ले, कभी चढ़ गयी, कभी उतर गयी।"

लेकिन उसकी बात का अमरो ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह मुख मोड़ कर अंदर चली गयी। और पड़ोसिन इस बात पर अंदर ही अंदर खूब हंसी।

24

अभी लोगों ने गहाई खत्म की ही थी और खलिहान उठाये ही थे कि एक दिन बुआ आ गयी। पिछले वर्ष तो असमय की वर्षा से गेहूं खेतों-खलिहानों में ही अंकुरित हो गयी थी, लेकिन इस बार गांव की आटे की चक्की पर गेहूं निकालने वाली बड़ी थ्रैशर पर लोगों ने जल्दी-जल्दी अपना गहाई का काम समाप्त कर लिया। कुछ घरों ने खुद की छोटी मशीनें खरीद ली थीं। बुआ उधर वाले घर से हो कर, इधर मिलने आयी, तो केवल उसे देख कर भौंचक्का रह गया।

"और सुना, 'दाना-भूसा' समेट लिया . . .?" बुआ ने सारे परिवार की कुशल-मंगल पूछने के बाद बात की।

"हां तो . . .! अच्छे हो गये . . .?"

"हो गये, खाने-पीने भर के . . .!" केवल ने ढीली- सी आवाज़ में कहा, लेकिन अमरो ने दूध में मीठा मिलाते हुए केवल की जगह कहा—"इस बार तो बुआ जी मुश्किल से इधर-उधर का लेन-देन ही निपट सका है। आगे के लिए परमात्मा की कृपा हुई, फसल अच्छी हो गयी तो आपके पैरों का सदका, संभल जायेंगे!"

"कोई बात नहीं, आदमी ऐसे ही जोड़-गांठ कर के वक्त पूरा करता है!" बुआ ने न जाने क्यों यह बात की, लेकिन वह केवल के मुरझाये हुए चेहरे को गहरी नजर से देख रही थी। पहले जैसा चमक-दमक वाला चेहरा ही नहीं रहा उसका ! दाढ़ी और सिर के बालों में चांदी के तार चमक रहे थे। "तेरे सफेद बाल तो जैसे पगले हो रहे हैं।" कटकर मन को सांत्वना देते हुए मुंह पर उभर आये कील-मुहासों को देखा। 'घूंट-घूंट' कर के दूध पीती हुई बुआ ने उसके सारे शरीर पर नजर दौड़ायी। शरीर भी पहले की तरह गटा हुआ बेलन जैसा नहीं था। पैर उसके खरबूजे की फांकों की तरह फटे हुए थे। देख कर बुआ की सांस ही जैसे अटक गयी।

"पुत्तर! तुझे तो गृहस्थी ने बिल्कुल ही निचोड़ कर रख दिया . . .।"

केवल के बुझे हुए चेहरे पर एक कच्ची सी हंसी उभरी, "तब तो बुआ सभी कहते थे कि विवाह के बगैर बंदे की जिंदगी क्या है . . .यहां कुल-मिला कर, दो-ढाई किल्ले पास हैं . . .आदमी आखिर कर क्या लेगा . . .?"

"नहीं रे पुत्तर। अब तो हर तरफ उलटी हवा चली हुई है, तेरे अकेले पर थोड़ा ही है?"

"इस गांव में तो न जाने क्या बला आ गयी है ! सबके बरतन-भांड़े औंधे पड़े हैं।" अमरो ने कड़ाही चूल्हे के पास रख कर उसमें राख डालते हुए कहा। उसका चेहरा तना हुआ था। बुआ चुप रही, जैसे उसने अमरो की बात सुनी ही न हो। उसका मन क्षण भर के लिए और बातों में उलझता, लेकिन फिर वहीं मुड़ आता ! अंदर-बाहर सफाई देख कर उसका दिल खिल उठा, आंखों में चमक बढ़ गयी और उसे अमरो के हाथ सच्चे लगे।

"बुआ ! और सुना, सुखदेव क्या कर रहा है . . .?"

बुआ ने जल्दी से केवल की ओर देखा, अंदर से जैसे कोई डर उठ खड़ा हुआ हो। पल भर चुप रहने के बाद सहसा ही बोल पड़ी, जैसे हड़बड़ा उठी हो।

"अरे, पूछ न पुत्तर। उसकी ओर से तो मैं भुरता हुई पड़ी हूं . . .बूढ़ा हो गया, लेकिन उसे अक्ल नहीं आयी। . . .चलो। अपना छोटा तो कमाता-खाता है। उसका कोई दुख तो नहीं . . .!"

"हमारे पास तो महीना भर हुआ, आया था !"

"वही तो बात है ! . . .पता नहीं सच है या झूठ," बुआ ने डरी-सहमी आंखें घुमाकर इर्द-गिर्द गौर से देखा, "कहते हैं, वह तो 'नकसलबाड़ी' बन गया है . . .पुलिस उसके पीछे लगी फिरती है। सुना है, जहां कहीं भी मिल गया वहीं गोली मार देंगे . . .!"

यह विचित्र-सी बात सुन कर दोनों के मुंह बंद हो गये। उसे कुछ समझ नहीं आ रहा था कि बुआ के साथ कोई भली बात कैसे करे ! फिर भी वे सुखदेव की बातें करते रहे। बुआ के जाने से पहले बंतो खरगोश-चाल से चली आयी। उसने माथा टेक कर बुआ के पांव छुए। बुआ ने लंबी-सी आशीष देते हुए परिवार का कुशल-मंगल पूछा। बंतो ने बुआ से जल्दी ही बात खत्म कर ली। फिर केवल से कहा, "केवला ! लोग कहते हैं संधू अमली मर गया !"

"हैं . . .!" केवल का मुंह खुले का खुला ही रह गया, "कब . . .?"

"तू कहां था? उसे तो लोग जला भी आये !" बंतो ने चिलम जैसा मुंह बनाया। उसने दुख के साथ मुंह खोला, तो अंदर से पीले-जर्द दांत दिखायी दिये, "पर मैंने तो कुछ और ही सुना है?"

"क्या सुना है?"

"कहते हैं, उसे तो जीवित ही जला दिया है . . .लोग-बाग तो कहते फिर रहे हैं कि गोलियां खा कर बेसुध पड़ा था। घर वालों ने समझा कि मर गया है। दो-चार ने हिलाया-डुलाया। बोले, चल। उठा मेरे भाई ! उठाया और जला आये . . .कहते हैं कि जब चिता को आग दी, तो वह हिला था . . .किसी ने कहा, जिंदा है . . .लेकिन 'नहीं-नहीं' कह कर जला दिया !"

"अरी, मैं मर जाऊं !" अमरो और निहालो ने आंखें चौड़ी करके हाथ मले, "कैसी है, बेरहम दुनिया ! आज-कल के लोगों में से मोह-प्यार तो जैसे मर ही गया है। हाय,हाय। मां डूब-जानी कैसे चल-फिर रही है . . .?"

"ले . . . !" बंतो ने झट-पट कहा, "सुना है, वह कह रही है, अच्छा हुआ। पीछा छूटा, मुफ्त को रोग लगा था!"

केवल को लगा, जैसे बंतो ने यह बात खुद गढ़ी हो। कोई मां ऐसा कैसे कह सकती है भला ! पर यकीन भी आता था। बुआ ने आह भरी—

"अरी, पड़ जायें तेरे कीड़े! तू भला मां है?"

और फिर सभी थोड़ी देर चुप रहने के बाद संधूरे की बातें करते रहे। कुछ देर बाद

केवल संधूरे के घर मातम पर बैठने गया। दूर पर कोठरे के दरवाजे के सामने करतारो लंबे-लंबे विलाप कर रही थी, "अरे तू सारी उमर दुख देता रहा . . .! अरे मेरी कोख से जन्मे पुत्र ! . . .अरे लोगों के पुत्रों की तरह तूने, कभी मान-सम्मान न दिया रे . . .।"

विलाप सुन कर केवल की अनायास ही चीख निकल गयी। आंखों से अश्रुधारा बह निकली। कितनी ही देर तक घुटनों में मुंह छुपाये बैठा आंखें पोंछता रहा। संधूरे के बाप को, गांव के बड़े-बुजुर्ग सांत्वना दे रहे थे। चारपाई की पट्टी के एक कोने पर केवल ने नौहणे को बैठे देखा। केवल ने उसकी ओर देखा तो उसने देख कर नजरें नीची कर लीं। नौहणे की हालत बहुत खराब हो गयी थी। पहले उसे शराब की लत थी। फिर नशे की गोलियां, अफीम और जर्दा आदि खाने लग गया था। जर्दे से उसके दांत पीले और जर्जर हो गये थे। पिछले कुछ समय से वे दोनों ही केवल का साथ छोड़ गये थे, लेकिन उन दोनों की जोड़ी पक्की बन गयी थी।

नौहणे के बड़े भाई ने, उसे चार बर्तन-भांड़े और एक टूटे हुए पल्लों-वाली कोठरी दे कर अलग कर दिया था। बर्तन उसने बेच कर खा-पी लिये थे। भौजाई उसे कुत्ते की तरह रोटी देती थी। अब उसकी पहले जैसी शान भी नहीं रही थी। भाई ने भूमि में से कोई हिस्सा नहीं दिया था। न ही उसमें लड़-भिड़कर लेने का साहस था। जब उसे घर में नशे-पानी के लिए खर्च न मिलता, तो वह संधूरे के साथ मिल कर रातों को चोरियां करने लगा। रात के समय लोगों की खिली कपास चुनते हुए दोनों पकड़े जाते और गांव की पंचायत में उनको जूते लगाये जाते। इतना अपमान होता कि लोगों को शर्म आने लगी, लेकिन उन्हें एक न लगती। वे सब-कुछ भूल जाते। जब कहीं दांव न लगता, तब नशे की लत पूरी करने के लिए दिहाड़ियां करने लग जाते और अक्सर गोलियां खा कर, गांव के गंदे पोखरों में बेहोश पड़े मिलते। इसी तरह एक बार उन दोनों ने दिहाड़ी के पैसे लेने के बाद गोलियां खा लीं तो चक्कर खा कर संधूरा कीचड़ वाले गड्ढे में गिर गया। शरीर सारा लिथड़ा पड़ा था। गांव के बच्चे तालियां बजाते उसके इर्द-गिर्द इकट्ठे होकर शोर मचा रहे थे। जब करतारो को पता चला, वह गुस्से में उबलती हुई आयी और आते ही धौल-धप्पे लगाने लगी।

"अरे तू कहां पड़ा है . . .? अरे तू मर जाय ! टूट जाय ! . . .! तुझे मौत क्यों नहीं आती, कमबख्त! तुझे मेरे घर जनम लेकर यही करना था . . !"और करतारो लगातार उसे चपेड़ों-थप्पड़ों से मारती-पीटती रही और वह लड़खड़ाती जबान से टूटी-फूटी बातें करता रहा।

"ए . . .ए . . .कैसे मार रही है . . .मार . . .ले . . .ऐ . . .।" और करतारो मारती-पीटती उसे घसीटती हुई घर ले आयी।

जब केवल उठ कर घर की ओर चला तो मातमी सफ पर बस एक बूढ़ा बैठा था। उसके अंदर से एक आह निकली। संधूरे के घर वालों के पास एक ही कच्चा कोठा था। वह भी छोटा-सा, मुर्गियों के दड़बे जैसा। सारा माहौल ही खाना-बदोशों जैसा लग रहा था। आंगन के एक कोने में घास-फूस इकट्ठा कर के रखा हुआ था। रास्ते में उसे नगिंदर मिल

गया।वह बढ़ई के पास से हल का फाल तेज करवा कर कंधे पर रखे, जा रहा था। केवल ने पैर मलते हुए और जांघों पर खुजली करते हुए उसे पूछाः

"सुना भई, नयी गृहस्थी वाले !"

"ठीक है मित्र ! तू अपनी सुना !"

केवल की आंखें पहले की तरह हंसीं। नगिंदर के चेहरे पर अनगिनत मुड़े-मुड़े और कंटीले-से बाल खड़े थे। उसकी गोरी चमड़ी खुश्क-सी लग रही थी।

"फिर गृहस्थी ने बल-पेच निकाल दिये या नहीं . . .?"

"बल-पेच छोड़, सीधा कर के रख दिया।"

"हम तो भला पैदा ही इसी धूल-मिट्टी में हुए थे। तुझे तो पगले, कहीं बाहर खिसक जाना चाहिए था।"इस बार केवलका चेहरा गंभीर लग रहा था।और वह अपनी बेतरतीब दाढ़ी पर यूं ही हाथ फेर रहा था।

"अरे हमें कोई अफसर-अफसुर ही बनना होता, तो फिर हमें फौज वाले ही रखते और फिर जब उन्होंने ना-फिट कर के चलता कर दिया, तो रब ही रखवाला है।"
यह कह कर नगिंदर जोर से हंस पड़ा। केवल ने भी आंखें झपकाते हुए दांत निकाले।

फिर अचानक नगिंदर ने संधूरे की बात चलायी और शोक की दो-चार बातें कहीं। फिर यह कह कर उसने बात खत्म कर दी, "छोड़ यार। यहां ही वह कौन-सा स्वर्ग के झूले झूल रहा था।"

"कोई बच्चा-बुच्चा . . .?" केवल की भूरी पुतलियां फड़फड़ाने लगीं।

"शायद इस बार . . .।" नगिंदर की धूल से भरी आंखें बेशर्म-सी हंसने लगीं। और फिर जैसे उसे लज्जा आ गयी।

"और फिर . . .?"

"ठीक है।"

"ठीक ही चाहिए, मित्र !" केवल ने हल्के-से हंस कर कहा।

नगिंदर ने कंधे पर रखे हल को, थोड़ा-सा ऊपर उठा कर कंधे को हवा लगायी। फिर केवल के निकट हो इर्द-गिर्द देख कर जैसे केवल के कान में कुछ कहना हो, उसके बिल्कुल पास हो गया।

"मैंने तो यार . . .एक और बात सुनी है।"

"क्या . . .?"

"तेरी बुआ का बेटा है न सुखदेव ! कहते हैं वह नकसलबाड़ी बना फिरता है . . .?

"पता नहीं यार !" केवल ने सिर हिला कर जाने के लिए कदम बढ़ाया, लेकिन नगिंदर ने फिर बात चलायी।

"कभी आया नहीं . . .?"

"है ! . . .नहीं तो . . .!"

"कहते हैं, वे अमीर लोगों को मारते हैं !" इस बार फिर नगिंदर ने इर्द-गिर्द ताड़ा "वैसे अमर सिंह कामरेड जैस लोग कहते हैं कि यह डाकू-टोली है। . . .नये छात्र

उन्हें क्रांतिकारी बताते हैं . . .! बात क्या हुई? . . .सुखदेव के बारे में भी अफवाह है, इस इलाके में कि . . .!" फिर क्षण भर के लिए ठहर कर, एक आह भर कर बोला, "वैसे तो यार जैसे वे बताते हैं . . .शायद लोगों का जीवन सुधर ही जाय . . .!"

"अच्छा, भाई मेरे ! तू चल। तेरा भी कंधा अकड़ गया होगा !"

नगिंदर अभी वहीं खड़ा था कि केवल उससे पीछा छुड़ा कर तेज-तेज डग भरता हुआ आगे निकल गया। नजरें नीची किये हुए चलता-चलता वह कइयों से टकराते-टकराते बचा। घर के निकट पहुंचकर दबे पांव चलने लगा। पल भर रुक भी गया, फिर बाहर की ओर चल पड़ा। थोड़े दिन पहले, उसने कपास की बोआई की थी। दिल में अंकुर फूटते देखने का ख्याल आया। पर उसके अंदर और ही हलचल हो रही थी। 'यह सुखदेव कैसे उलटे राह पड़ गया है . . .! कुछ बताता भी नहीं। कहेगा, तुझे फिर बतायेंगे . . .फिर कब?—परसों निहंग नरैणा कह रहा था . . .।' और आगे की बात उसने अपने मन में ही कह ली,'इस तरह भला कितनों को मारते जायेंगे . . .? हैं? इनसे तो मुल्क भरा पड़ा है।'

खेत पर पहुंच कर उसने सारी कपास में चक्कर मारा। खेत कपास के छोटे-छोटे पौधों से भरा पड़ा था। बोते ही वर्षा हो गयी थी। उसे डर था कि कहीं कपास के बीज सड़ न जायें। एक चक्कर नये हल-चले खेत में मारा। यह खेत उसने साबनी ज्वार के लिए तैयार किया था। बरसीम की एक और कटाई से अधिक की आशा न थी। बरसीम मुरझाती हुई-सी लगी। सवेरे इनमें पानी लगाने की सोच कर वह गांव की ओर चल पड़ा।

गांव पहुंचने तक अंधेरा हो गया था। अमरो पशुओं को चारा डाल कर रोटी-पानी के काम में लगी हुई थी। खा-पी चुकने के बाद अमरो ने, सोते समय केवल का कंधा हिला कर पूछा, "क्या बात है? तू आज-कल पागलों की तरह किसलिए फिर रहा है?"

"नहीं तो . . .!" केवल ने करवट बदल कर उसकी ओर मुंह किया। अंधेरे पक्ष में आकाश की नीली चादर पर तारे टिमटिमा रहे थे। आज भी पुरवाई चल रही थी, जैसे वर्षा होने वाली हो।

"मैं तो आज दोपहर से ही तेरे तौर-तरीके देख रही हूं। संधूरा मर गया तो क्या हुआ? यहां कौन से किसी के खूंटे गड़े हुए हैं . . .!"

"नहीं ऐसा तो कुछ नहीं . . .।"

"तो फिर बात क्या है . . .?" अमरो का बोल कुछ तेज था।

"क्यों . . . ?" अमरो को गिला हुआ। उसे लगा, जैसे केवल ने उसे बच्चे की तरह झिड़क दिया हो। दुखी होती, अंदर ही अंदर घुटी-घुटी सी, चुपचाप वह बिस्तर बिछाती रही। फिर चुपचाप ही लड़के को उठा कर केवल के साथ लिटा दिया और लड़की को स्तन-पान कराती कितनी ही देर तक हथेली पर ठोड़ी रखे अंधेरे में घूरती रही। कभी-कभी करवट बदल कर पड़े केवल की ओर देखती, तो नाक का सुड़ाका-सा बजता, जैसे उसका मन भरा हुआ हो।

"चल रे मन ! बुरी किस्मत के मारे !" अमरो ने दुखी हो कर लड़की को चारपाई पर लिटा दिया और एक लंबी आह भर कर वह खुद भी चारपाई पर लेट गयी।

25

इस बार आषाढ़ रहते ही वर्षा शुरू हो गयी थी। दो-तीन दिनों से लगातार रिस-रिस कर हो रही बारिश कच्चे घर गिराने वाली बन रही थी। आषाढ़ की ज्वार के अलावा किसी ने भी सावनी का कोई चारा नहीं बोया था। लगातार वर्षा होती देख कर लोगों के दिल घबरा रहे थे। "इस बार कहीं बाढ़ ही न आ जाय!" लोग जरूर सोचते। कभी वर्षा थोड़ी-बहुत थम जाती, तो लोग दरांतियां ले कर खेतों को भागते, कि बारिश आने से पहले-पहले थोड़ा-बहुत चारा ले आयें! बहुतों के तो हल्की-हल्की फुहार और बूंदा-बांदी से जर्जर हुए कोठे बैठ गये थे। अकेले-दुकेलों के लिए तो मुसीबत ही हो गयी थी। ईंधन बाहर पड़ा-पड़ा भीग गया था। स्त्रियां गीले उपलों से चूल्हा जलाने का प्रयास करतीं। धुएं से उनकी आंखें भर जातीं। अमरो के सूखे उपलों के चार टोकरे अकेली होने के कारण, बाहर वर्षा में ही गोबर बन गये थे। घर में लकड़ी देखने को भी नहीं थी। गीले उपलों से सारे घर में धुआं फैल रहा था। वर्षा रुकने का नाम नहीं ले रही थी। बादल थे, कि पल भर में दल के दल इकट्ठे हो-होकर आते और बरस-बरस जाते। घर में पड़े एक टूंठ को केवल ने बढ़इयों के घर से कुल्हाड़ा ला कर, भूसे वाले कोठे में रख कर हल्की-हल्की चोट से काटा, ताकि गीले कोठे धमक न जायें। अमरो बरामदे में 'उठावां' चूल्हा रखे बैठी थी। धुएं से उसकी आंखों से 'टप-टप' कड़वा पानी गिर रहा था।

"यह ले, झड़ी में काम चला। फिर देखा जायगा।" केवल ने उसके पास फाड़ी हुई ढेर-सारी लकड़ियां ला कर फेंकते हुए कहा।

"निपूते रब ने मुसीबत में डाल दिया है।" अमरो ने सिर के ऊपर ली हुई मैली चुनरी से आंखें पोंछीं, "...जब बरसने लगता है, तो बंद ही नहीं होता...।"

अमरो ने लकड़ियां जला कर रोटियां सेंक लीं। केवल ने बैल अंदर कर दिये। बड़ी कटड़ी और भैंस बाहर ही सेहन के बीच बंधी हुई थीं। ताजा-ब्यायी, नयी-खरीदी भैंस को अंदर कर दिया था। उसे ब्याये अभी लगभग डेढ़ महीना ही हुआ था और वह अभी से दूध देने में नखरे करने लगी थी।

वर्षा की बौछारें रह-रह कर पड़ती थीं। बारिश रुकती तो क्षण भर के लिए भी नहीं थी, बल्कि और तेज हो रही थीं। आषाढ़ के भट्ठे जैसे तपनेवाले महीने में भी ठंड हो गयी थी। केवल कमरे के अंदर खेस ले कर लेट गया। छत पर पड़ रही बूंदों का शोर उसकी आंखों को बंद होने में मदद दे रहा था। अमरो ने सारे पशुओं के रस्से देखे। फिर यह देख कर कि पानी कहां-कहां टपक रहा है, वह भी चारपाई पर लेट गयी। सारा दिन वह वर्षा और कीचड़ में, सलवार ऊपर चढ़ा कर पानी टपकने वाली दरारें बंद करती और घर-बाहर के अन्य काम करती रही थी। थकान से उसके हाथ-पैर टूट रहे थे। टांगें फैलाने से उसके शरीर को राहत-सी मिली।

एक दिन केवल एक सूबेदार के पढ़ाकू गुरजीत के साथ एक ऐसे-वैसे-से स्थान पर

गया था। वहां की विचित्र-सी दुनिया देख कर वह अपने गांव की दुनिया के बारे में सोचने लगा। इतना फर्क ! . . .इतनी रंगीन थी शहर की वह दुनिया ! इतने सुंदर लोग! उसे इन लोगों और अपने आपमें इतना बड़ा फर्क लगा कि बाद में वह इस घटना को एक 'सपना' समझता रहा। और अब वह उसी के संबंध में सोच रहा था।

"क्या बात है, सो गया क्या?" अमरो उसे कंधे से झकझोर रही थी।

"ऊं!" केवल ने आंखें मलते हुए अमरो की ओर देखा। छत पर बूंदें अभी तक वैसे ही पड़ रही थीं।

"देख तो . . .बाहर कोई आवाजें दे रहा है . . .?"

"इस समय कौन हो सकता है?" कच्ची नींद से उठते हुए केवल को थोड़ी झल्लाहट सी हुई।

वर्षा की बौछारें तेज थीं। फिसलन से बचने के लिए, उसने दीवार के साथ-साथ पैर रखे। फिर भी उसके पैर ढीली मिट्टी में धंसते जा रहे थे। किवाड़ों के निकट पहुच कर उसे प्रतीत हुआ कि बाहर तीन-चार वर्दियों वाली आकृतियां दिखायी दे रही हैं। केवल की नीचे की सांस नीचे ही रह गयी। पुलिस को देख कर उसका सिर चकराने लगा। पीछे मुड़ने के लिए उसने कदम उठाये ही थे कि गली में से आवाज आयी जैसे एक ने साथ वाले से कहा हो।

"कोई आया या नहीं . . .?"

"कौन है, भई?" केवल ने डरते-डरते पूछा।

"मैं सुखदेव हूं।"

"ओह, अच्छा!" केवल ने कुंडी खोली और किवाड़ खोल दिये। वे तीन आदमी थे और तीनों ने अपने ऊपर बरसातियां ली हुई थीं। जूतों में पानी पड़ जाने के कारण वे 'छपर-छपर' करके चल रहे थे। वे दरवाजे से हो कर अंदर आंगन में आ गये। वर्षा अभी मूसलाधार हो रही थी।

"मैं तो तुम्हारी बरसातियां देख कर डर ही गया था।" केवल ने उनके आगे-आगे चलते हुए आहिस्ता से कहा।

"हमें देख कर न जाने हर एक को डर क्यों लगता है।" उनमें से एक आदमी ने दूसरे की ओर देख कर कहा। केवल को लगा, जैसे वह आदमी हल्के-से मुस्कराया हो। दालान में दीया पहले से ही जल रहा था। अमरो ने उन आदमियों को देख कर करवट बदल ली। केवल ने दीवार के साथ खड़ी चारपाई डाल ली।

सुखदेव ने बरसाती उतारते हुए हंस कर कहा, "हमें लगी है भूख, मेरे भाई ! रोटी का प्रबंध कर।"

"लो, अभी लो।" केवल ने होंटों में मुस्कराते हुए कहा।

अमरो ने बच्ची को चारपाई पर लिटा दिया और दीये की बाती को ऊंचा करके चूल्हे की ओर चली गयी। वे तीनों अपने कपड़े उतार कर निचोड़ने लगे। केवल ने अमरो के निकट जा कर, कान में कुछ कहा। सुखदेव ने बरसाती उतार कर खूंटी पर लटकाते हुए

चूल्हे के पास आ कर कहा, "दाल-शाल रहने दे। बस रोटियां पका ले अमरो !" अमरो ने सुखदेव को अब पहचाना। पहले तो वह डर ही गयी थी।

"दाल-शाल क्यों नहीं, सब-कुछ हो जाएगा।"

"नहीं !" सुखदेव ने उसे जल्दी से कहा, "झड़ी में रोटियां पकाना भी कौन-सा आसान है ! दूसरे, हम कामरेडों को नखरे-वखरे पसंद नहीं।" सुखदेव के साथ अमरो और केवल भी हंस पड़े, " . . .हमारे आगे तो सूखी रोटियां भी नाना प्रकार के व्यंजनों से बढ़ कर हैं।"

"कोई बात नहीं, भाई जी !" अमरो ने पानी लाने के लिए बालटी उठा कर घूंघट ठीक करते हुए कहा, "तुम्हारा अपना घर है . . .हमें कहीं से कुछ लेने थोड़ा जाना है?"

"तभी तो कह रहे हैं!"

कपड़े निचोड कर सूखने के लिए खूटियों पर डाल कर, वे आराम से चारपाइयों पर बैट गये। जुल्फो वाला लड़का जिसका शरीर इकहरा और कमजोर था, चारों ओर बड़े गौर से देख रहा था। तीसरे की टोड़ी पर ही थोड़े से बाल थे और मुंह 'नारियल' जैसा था। वे तीनो दबी जबान मे बातों में लग गये। अमरो ने लकड़ियां लगा कर आग तेज कर ली और रोटियां पकाने बैठ गयी। थोड़ी दाल बची हुई थी। उसे चूल्हे के आगे, चिमटे से आग बाहर निकाल कर, गरम करने के लिए रख दिया।

"और फिर सुना केवल सिंह, कैसे निभ रही है?" सुखदेव ने सिर के बालों में कंघा फेर कर जूड़ा करते हुए पूछा।

"निभ क्या रही है? ठीक है !"

"दो बातें कैसे हो सकती हैं?" सुखदेव ने दाढ़ी में कंघा मारते हुए पूछा, "या तो हाल बुरा होता है या फिर अच्छा।"

"यानी बीच में लटक रहे हैं।" जुल्फों वाले बंदे ने अपना सिर उंगली से खुजलाया। उसके टेढ़े-मेढ़े चेहरे पर आंखें बड़े ही अजीब ढंग से फड़क रही थीं। बाहर तेज वर्षा हो रही थी। छत पर वर्षा का शोर और भी बढ़ गया था। वर्षा के साथ-साथ, तेज चलती हुई हवा, दरवाजे में से अंदर आ कर दीये की लौ को बहुत अस्थिर कर देती थी।

"साले रब ने और भी मुसीबत पैदा कर दी है!" अंदर तक बढ़ती आ रही बौछारों को देख कर केवल ने औरों से कहा, "जब जरूरत होती है तो साला तरसा-तरसा कर मारता है!"

"कुदरत का खेल है, दोस्त !"

"अपने गांव के भाग-जाट के अनुसार, बारिश ऐसे पड़ रही है, जैसे जाट जलेबियों पर टूटता है।"

जुल्फों वाले लड़के की बात पर वे सारे इतना हंसे कि गरजते बादलों और वर्षा की आवाज सुनाई देनी बंद हो गयी। अमरो ने रोटियां पका कर, केवल को बरतनों वाली टोकरी में से थाल पकड़ाने के लिए कहा। केवल ने बड़े थाल में खुद ही रोटियां रख दीं। अमरो ने मर्तबान में से आम के ताजा-डले, अध-कच्चे अचार की तीन-चार फांकें भी रख

दीं और कटोरे को चुनरी के पल्ले से पोंछ कर, हांडी में से बची हुई दाल डाल दी। केवल थाल उठा कर चलने लगा तो अमरो ने दबी जबान में उससे कहा।

"ठहर!" और उसने पास पड़े बरतन में से मक्खन निकाल कर दाल में डाल दिया।

"भाई, हाथ-वाथ धोने हैं या . . .।" केवल ने उनके पास जा कर थोड़ा झुक कर पूछा।

"हाथों को क्या लगा है!" सुखदेव और उसके दोनों साथियों ने सीधा होते हुए हंस कर कहा, "हम कौन-सा कीचड़ में से निकल कर आये हैं।"

केवल बरसाती बूंदों में सिर पर बोरी ले कर पीतल की डोलची में पानी भर लाया और बर्तनों में से गिलास उठा कर रख दिये। बीच में ही, केवल ने चुपचाप और रोटियां रख दीं। उनके जल्दी-जल्दी चल रहे मुंहों की ओर देखते हुए, उल्टे पांव पीछे हट कर चारपाई पर बैठ गया। वे रोटी खा चुके तो केवल ने उनके लिए एक चारपाई और डाल दी। अमरो ने चूल्हे में से आग पीछे हटा कर आगे तसला रख दिया और हाथ धो कर छोटी-सी चारपाई खींच कर लेट गयी। लड़के को केवल ने अपने साथ सुला लिया।

"बाई, मैंने तो कुछ और ही सुना था?" केवल ने ठंड से बचने के लिए अपनी टांगें खेस में लपेटते हुए कहा।

एक पल ठहर कर वह जैसे कुछ सोचता रहा फिर बोला, "मैंने तो सच ही न माना! अब भी विश्वास नहीं आ रहा कि सुखदेव डाकुओं से मिल गया है !"

वे तीनों शरारती हंसी हंसे और केवल ने मद्धिम रोशनी में सुखदेव को, छत की कड़ियों की ओर घूरते देखा।

"मैंने कहा, अरे भले मानुसो ! वह तो दिल में क्या-क्या योजनाएं बनाये फिरता है वह तो कहा करता है कि हम यहां से सारी गंदगी साफ कर देंगे। डाकू कैसे बन जायगा..!"

"कौन कहता था?" सुखदेव की आवाज में टिकाव था।

"यहां भला कोई एक थोड़ा है . . .सारा गांव ही कहे जाता है। पहले-पहल यह बात अमर सिंह कामरेड ने कही थी।"

"अमर सिंह को तो हम जरूर डाकू दिखाई देते हैं।" सुखदेव ने अपने दूसरे साथियों की तरफ मुंह घुमा कर कहा, "वह यार दक्षिण पंथी का कामरेड है।"

"बस, फिर तो ठीक है ! मिरासियों ने राजे के 'आक' भी आम बनाने हुए!" केवल ने शरारती हंसी फिर सुनी। उसे यह बात समझ में न आयी और न ही उसे यह पता लगा कि किस आदमी ने यह कहा था।

"मैं तो अमर सिंह से लड़ने को हो गया . . .मैंने कहा, कमबख्त। वह क्या सोच रहा है और तू . . .!"

सुखदेव को लगा जैसे केवल उससे कोई और बात पूछनी चाह रहा हो। उसने आंखें घुमा कर केवल की चारपाई की ओर देखा। केवल ने भी नजरें चुरा कर उसकी तरफ देखा। उसने अपना गाल चारपाई के बाजू पर टिकाया हुआ था। सुखदेव करवट बदल कर

सीधा हो गया। उसने केवल की चारपाई 'ची-चीं' करती हुई सुनी, जैसे उसने भी करवट ली हो। सुखदेव के दिल पर कुछ बोझ-सा बढ़ रहा था। उसने लेटे-लेटे ही, एक बार फिर केवल की तरफ आंखें फेर कर देखा। वह खेस ओढ़कर सो गया था। फिर उसने खूंटियों से लटकती हुई बरसातियों की ओर देखा और धरती पर टप-टप गिरते पानी की आवाज की ओर उसने अपने कान लगाये। और फिर एक सांस भरते हुए हल्का-सा खांसा।

"सो गया, केवला . . .!"

"हैं . . .!" केवल ने चेहरे पर खेस उतार दिया, "क्या कहा, बाई?"

"सो गया?" सुखदेव ने फिर आहिस्ता से पूछा

"नहीं तो . . .!"

"तो चुप क्यों कर गया, कोई बातचीत कर !"

"बातचीत काहे की, बाई !" केवल ने करवट बदल कर सुखदेव की ओर मुंह कर लिया, " . . .अब तो सारी बातें ही भूली पड़ी हैं . . .दिन साला खेत में गुजर जाता है रात में साली नींद ही नहीं आती . . .जब्र तक 'पऊआ' अंदर न उंड़ेला हुआ हो . . .।"

"ज्यादा पीना तो अच्छा नहीं ।"

"कौन-सा शौक के लिए पीते हैं . . .दिन में तो काम में लगे रहते हैं, रात को लेने-देने वालों का हिसाब नोच-नोच कर खाता है—शराब भी अब कौन सी सस्ती है?—तीन को थूक लगता है . . .वैसे तो . . .!" आगे कुछ सोच कर वह चुप कर गया। वह नशेवाली गोलियां भी कभी-कभी खा लेता था, क्योंकि वे शराब से सस्ती पड़ती थीं।

"सबका यही हाल है। अब तो दांतों में जीभ वाला हाल है। दुख खत्म हुए ही समझ! लेकिन अभी लोगों में एका नहीं है . . .हम तो जान हथेली पर लिये फिरते हैं।"

केवल ने हैरान हो कर उसकी ओर देखा।

"कई तो ऐश करते हैं!" केवल ने एक ठंडी आह भरी और फिर अनायास ही बोलने लगा; जैसे उसका जी दुख-सुख की बातें करने को ललक उठा हो। " . . . सस्ता देख कर पुराना इंजन ले लिया। उसका कभी पंजर टूट जाता है, कभी नोजल ! हर तीसरे दिन मंडी ही भागे रहते हैं, कपड़े अलग काले करते हैं . . .किल्ले ले दे कर कुल दो हैं ! पशुओं के लिए चारा बोयें या अपने खाने-पीने के लिए दाने!"

सुखदेव उसकी बातें चुपचाप सुनता रहा। दूसरी चारपाइयों से केवल ने खांसने की आवाजें सुनीं। केवल थोड़ी देर के लिए ठहर कर फिर बोलने लगा, "घर के खर्च ही पूरे नहीं होते साले ! और तो कहीं हाथ नहीं अड़ता। अब तो साला आग के सामने जलते हैं नहीं तो . . .! घर में भूख का नंगा नाच होता है . . .।" केवल का बोल गंभीर था, शोकमय था।

"ज्यादा दुखी नहीं होते . . .हौसला रखते हैं।"

"भाई मेरे ! अब तो उठना ही पड़ेगा।" दूसरी चारपाई से आवाज आयी, जैसे जुल्फों वाला लड़का बोला हो, "नहीं तो, इससे भी बुरी हालत हो जायगी!"

केवल का दिल और उदास हो गया। बाहर वर्षा का हल्का-हल्का शोर था। फिर बाहर अचानक जोर का धमाका हुआ जैसे किसी का कोठा गिर गया हो। और साथ ही बिजली का कर्ण-भेदी शोर उभरा। उन सभी के दिल 'धक-धक' कर रहे थे। दो-तीन मिनट बाद केवल नें उठकर बाहर देखा। बाहर गहरा अंधकार छाया हुआ था। जब बिजली चमकी, तब उसे दीने जुलाहे की दूसरे कोने वाली दीवार की ईंटें बिखरी पड़ी दिखायी दीं।

"इस बार नहीं छोड़ेगा ! बहा कर ही मानेगा।" केवल ढीला-सा हो कर फिर चारपाई पर लेट गया।

"यह तो कुदरत का अभिशाप है; लेकिन जो आदमियों ने कहर मचा रखा है, वह कौन-सा पार ले जायगा।"

सुखदेव आहिस्ता-आहिस्ता बोलता रहा और केवल की आंखें नींद से बोझिल होती गयीं। रात बहुत बीत गयी थी। उसे लेटे-लेटे एक बार ख्याल आया। वैसे रात से ही उसका यही हाल था। रात को शक-संदेह नोच-नोच कर खाते। दिन खेत में मिट्टी के साथ मिट्टी होते गुजर जाता था। सोचते-सोचते उसकी आंख लग गयी। आधी रात को उसकी आंख खुली। साथ वाली चारपाइयों से बातें करने की आवाजें आ रही थीं। केवल कान लगा कर उनकी बातें सुनने लगा।

"लोगों में कितना गलत प्रभाव पड़ रहा है।" केवल ने जुल्फों वाले लड़के की आवाज पहचान ली।

"समझ में नहीं आता इस बात की वजह क्या है? वास्तव में वही लोगों को भड़काते हैं, जैसे केवल कह रहा था कि अमर सिंह कामरेड हमें डाकू कहता है।"

"यार ! मुझे तो डर है कि लोग हमारे साथ नहीं चल सकेंगे।"

"तू नकारात्मक क्यों सोच रहा है?" सुखदेव ने उसकी हिम्मत बंधायी, "ये काम झट-पट नहीं होते। देख तो, रूस में संघर्ष कितने समय से चलता आ रहा था !"

"वह बात तो ठीक है . . .पर . . .उसी दिन देख, जब हमें खेतों में जाट मिले थे। पहले तो बातें करते रहे। जब उन्हें हमारे बारे में पता लगा, तब सबको सांप सूंघ गया और वे एक-एक कर के, उठ कर चले गये . . .!"

"लोग अभी इतने सयाने नहीं हुए !" सुखदेव ने एक आह भरी।

"तो फिर सयाने कब होंगे? मैं तो कहता हूं, इन्हें इससे भी अधिक मुश्किलें सहन करनी पड़ें, फिर इन्हें पता लगे . . .!" जुल्फों वाला लड़का थोड़ा गुस्से में लग रहा था।

सुखदेव ने गला साफ करते हुए कहना शुरू किया।

"असल में इनका कोई दोष नहीं, अपने हालात ही इतने पेचीदा हैं कि क्या कहा जाय! ये तो साधारण लोग हैं; अपने कई समझ-बूझवाले कामरेड भ्रांति का शिकार हो जाते हैं।"

"अब तू उस समय वाली बात को ही ले ले," उस लड़के ने फिर कहा, "जिस दिन हमने गन्ने की मिल के मालिक पर निशाना बांधा, लोगों ने ही उसे बचा लिया था। उनको मालूम है कि यह अमीर आदमी है, लोगों का लहू चूसता है ! साले ! भेड़ों के झुंड की तरह हमारे पीछे कितनी दूर तक भागे आये !"

कुछ देर तक दोनों ओर खामोशी छायी रही। सिर्फ बारिश की बूंदों की आवाज ही सुनायी देती रही थी। फिर टिड्डों की 'टीं-ई, टीं-ई,' खामोशी को तोड़ती रही।

"तभी मैंने इसे कुछ नहीं बताया !" केवल ने सुखदेव की आवाज फिर सुनी, और सुखदेव ने केवल की चारपाई की ओर अपना सिर आगे बढ़ा कर देखा, "मैंने सोचा, कहीं घबरा ही न जाय और 'रायेसर-वालों की तरह उल्टे पांव ही न लौटा दे।"

"उसने तो यार! तब हद ही कर दी थी। वैसे देख। इनकलाब की कितनी बड़ी-बड़ी डींगें मारता रहता है। चाय-पानी तो एक तरफ रहा—चारपाई डालने लगा, तो बुढ़िया कैसे काट खाने को आयी—'खबरदार ! अगर चारपाई बिछायी तो . . .।" केवल ने अंधेरे में उसकी फुंफकारती-गूंजती सांस सुनी, शायद उसके चेहरे पर गुस्सा भी है।

केवल की आंखों में कड़वा धुआं घुस आया। दिल में एक भभक उठी। उसका दिल जोर-जोर से धड़क रहा था।

"मुझे तो लगता है, लोग नपुंसक हो गये हैं!" 'वही' आवाज फिर सुनायी दी।

"नहीं ! यह बात नहीं। लोगों के बारे में ऐसी दलील नहीं देनी चाहिए।"

वे बातें करते रहे। केवल को पता नहीं लगा कि उसकी आंख फिर कब लग गयी ! तड़के सुखदेव ने उसे झकझोर कर लगाया। वे जाने के लिए तैयार बैठे थे। अमरो ने उठ कर चाय बनायी। मुंह-अंधेरे ही वे चल पड़े। चलते वक्त केवल ने मजाक में कहा, "बाई, तेरा इनकलाब कब आयगा?"

सुखदेव ने अंधेरे में उसके चेहरे को देखा। केवल का चेहरा गंभीर था।

"क्या बात है! तुझे क्या जरूरत पड़ गयी?"

"हमारी तो सांस उखड़ी हुई है—तू कहा करता है न, कि तब सभी सुखी और खुशहाल हो जायेंगे।"

"इनकलाब तो नजदीक ही है, पर तू यह न सोच कि वह कहीं गिरा पड़ा मिल जायगा। कार्तिक के महीने की तरह उसके लिए जान लड़ानी पडती है !"

"मैंने कभी इनकार किया है भला ! अभी चलूं, तेरे साथ।" थोड़ी देर रुक कर फिर कहने लगा", गुरु की कसम ! झूट नहीं बोल रहा। अब तो हमारी जान लबों पर आयी हुई है।"

उन सभी की हल्की-सी हंसी उभरी। सुखदेव ने गंभीर मुंह बनाकर पहले अपने साथियों की ओर देखा। फिर केवल का कंधा पकड़ कर कहा, "कहीं डगमगा न जाना !"

"नहीं, बिलकुल नहीं !"

"अच्छा, तू बस इतना ही काम कर कि अगर तेरे पास कोई आदमी मेरा नाम लेकर रात काटने आये, तो तू उसे सहारा दे देना !"

"ले, यह भी कोई बड़ी बात है!"

"है तो बड़ी ही। बाद में अगला बिना बोले ही चला जाता है।"

"नहीं, नहीं . . .!" कहते हुए केवल ने सबसे हाथ मिलाया।

26

केवल आदमियों को संभालने के लिए 'हां' तो कर बैठा, लेकिन जब उसने गहराई से सोचा तो दिल घबराने लगा, क्योंकि उनकी लोगों में इतनी चर्चा थी कि लोग बातें भी कान जोड़ कर ही करते थे। और प्रतिदिन नकसबाड़ियों के पुलिस के साथ मुकाबले के बारे में सुनते थे। पुलिस गांवों में चक्कर काटती फिरती थी। अपने आप को राणी खां के साले समझने वाले आदमियों की जान को भी खतरा हो गया था। केवल के घर में कई बार 'कामरेड' आ चुके थे। उसने रोटियां खिलायीं, चारपाईयां और बिस्तरे दिये, लेकिन दोनों पति-पत्नी के मुंह हल्दी जैसे हुए पड़े थे। बाहर की खबरें सुन कर तो उनमें बिल्कुल ही जान नहीं रही थी। 'आदमी' आते देख कर लोग केवल के घर पर गिद्ध की तरह नजर रखने लगे थे। सुबह-शाम घर के अंदर आते-जाते आदमियों की ताड़ रखते। अमरो इस तरह की बातें सुन-सुन कर पीली-जर्द हो गयी थी। दिन ढले उनके घर में शराब वाले कीड़े-मकोड़ों की तरह आते-जाते थे। अमरो को बुरा तो बहुत लगता था, लेकिन हाथ कहीं इतना नहीं अड़ता था कि लोगों को छिटक कर परे कर दे। वैसे जब शराब वाले बार-बार चक्कर मारते तो वह मजाक ही मजाक में कह देती।

"पता नहीं, कहां खपाते हैं इतनी ! शराब पर तो जाट ऐसे टूट पड़ते हैं, जैसे मुर्गे-मुर्गियां दाने पर।" और सुनने वाला शर्मिंदा हो कर लौट जाता।

और 'उन' आदमियों के आने से तो उसके हाथ-पैर फूले हुए थे। जब उसने स्त्रियों से सुना कि पुलिस नकसलबाड़ियों को शंरण देने वालों के साथ सख्ती से पेश आती है, उसने थोड़े गुस्से के साथ केवल को समझाया। केवल ने उसे लगभग झिड़कते हुए कहा, "तुझे क्या मिर्गी पड़ने लगी है, चार रोटियां थापते हुए? उनको देख जो लोगों के लिए, रातें जाग-जाग कर काटते हैं।"

"लोगों को क्या संवार रहे हैं वे? अभी तो लोग बेचारे भूखे मर रहे हैं। तुझे अक्ल तब आयगी, जब बेगाने पुत्रों ने धर लिया . . .! मैं तो हर पल डरती हूं। अगर तुझे पुलिस ने पकड़ लिया, तो इन छोटे-छोटे बच्चों का क्या बनेगा . . . कभी सोचा है?"

अमरो की बातें सुन कर केवल का दिल सचमुच ही डर गया, लेकिन उसने जाट वाली दहाड़ नहीं छोड़ी। अपने बोल में और अधिक हौसला बढ़ाते हुए उसने तड़ी मारी।

"कोई बात नहीं ! अब कौन-सा हम जीवित लोगों में हैं !"

केवल उसे नाराज-सी देख कर बोला, "अच्छा, मैं उन्हें जवाब दे दूंगा, तू अब चुप हो जा।" केवल से उसका दीन-हीन सा मुख देखा नहीं गया।

डर तो केवल के दिल में भी था ! लेकिन सुखदेव के कहने और अपने अंदर के यकीन पर उसने खुद ही कमर कसी थी। एक दिन वह खेत में मकई की बोआई कर रहा था। सूरज पश्चिम में मुंह छुपाने वाला ही था कि जरा परे बाजरे के टूंटों में से जोरदार शोर उठा। केवल बैलों को रोक कर, उधर देखने लगा। कुछ देर बाद चार आदमी बाहर निकले

जिंनके कपड़े पुलिसियों जैसे खाकी थे और उनके कंधों पर राइफलें थीं। केवल उनको देख कर फूस जैसा जर्द हो गया। वे चारों ओर ताड़ते, उसकी ओर आये। आगे वाले आदमी ने केवल से पूछा, "बाई, यह गांव कौन-सा है?"

"बड़ूंदी है, बाई!" शरीर के साथ केवल की जबान भी शिथिल हो गयी थी।

"अच्छा !"क्षण भर ठहर कर एक ने फिर पूछा, "बाई, हमने केवल सिंह के जाना है!"

अब केवल को पता लगा कि ये तो वही हैं। उसका दिल उनकी बंदूकों को देख कर धड़कने लगा। उसका जी किया कि कह दे, उसको नहीं मालूम। . . .अगर इन्होंने और किसी से पूछ लिया . . .! दूसरे, बाई खूब शाबाश देगा . . .लेकिन . . .!

"तू बाई उसे जानता है?"

"मैं ही हूं, बाई!"

अंधेरा होने पर केवल उन चारों आदमियों को टेढ़े रास्ते से घर ले आया। इस रास्ते, देर रात को कोई चलता नहीं था। खेतों में से होता हुआ वह उनको घर ले आया। अमरो आदमियों को देख कर डर गयी, लेकिन केवल ने उसे समझाया, "तू चुपचाप रोटी पका।" खा-पी कर वे चारपाइयों पर लेट गये। इन आदमियों ने पहले आने वालों की तरह चुप धारण न की और केवल के साथ बातों में व्यस्त हो गये। वे अपने नित्य के 'कामों' और 'भाग-दौड़' के बारे में बताते रहे। केवल का मन उनकी बातें सुन कर खिल उठा। उसने भी महसूस किया, जब इस तरह सारी गंदगी साफ हो जायगी, तब झाड़-झंखाड़ रह ही कैसे जायगा? बातों-बातों में ही जैलदार की बात चली। एक ने 'ठुकाई करने' की सलाह बना ली। केवल ने भी टंटा खत्म करने को 'हां' कर दी, लेकिन बाद में, जब उसने गहराई में उतर कर सोचा, तो उसका शरीर कांप उठा।

"आप बाई कहे तो जाते हैं—लेकिन यह सब कुछ होगा किस तरह? हथियार कहां से लाओगे . . .?" केवल के मन में जो संदेह था, उसके बारे में उसे पूछ ही लेना चाहिए।

वे सारे रहस्यमय हंसी हंसे। लंबे कद वाले ने मूछों को बल देते हुए कहा, "हम दुश्मन को दुश्मन के हथियारों से ही मारेंगे। जब डट कर लड़ेंगे, हम उनके गोला-बारूद पर कब्जा करेंगे।"

केवल के अंदर विश्वास मजबूत होता गया। वे सारे, सूर्योदय से दो घंटे पहले चले गये। बाद में केवल को हौसला हो गया। और उसका चेहरा पहले से खिला-खिला दिखायी देने लगा। उसके कानों में खबर पड़ी कि लोग उसके बारे में चर्चा कर रहे हैं। स्त्रियां बहाने-बहाने इर्द-गिर्द सूंघती फिरतीं । बंतो सुनी-सुनायी बात को ले कर, अपने पास से मिर्च-मसाला लगा कर, बातें करती। इस प्रकार कभी-कभी केवल के दिल में डर पैदा हो जाता और वह अंदर-ही-अंदर दुखी होता। दिल बुझा-बुझा रहने लगता। दो दिन शरीर टूटने का बहाना करके वह अंदर चादर लपेट कर पड़ा रहता। अमरो उसे लौंग-इलायची वाली चाय बना कर देती।

वे आदमी एक दिन फिर आये, तो उत्साह से केवल की आंखें चमक उठीं—"कोई बात नहीं, देखा जायगा . . . मरना तो एक दिन है ही ! मैं कौन-सा गुंडों-बदमाशों को पनाह

देता हूं। वे लोगों के खातिर खून से खेल रहे हैं।" परंतु दूसरी ओर लोगों की नजरें और चर्चाएं कुल्हाड़े की तरह फाड़ती थीं। अंदर का डर अक्सर बोल उठता, 'कहां से यह बला गले में डाल ली।' इस तरह वह अपने-आप से संघर्ष करता रहता, लड़ता रहता। दिन गुजरते गये। सुखदेव एक दिन फिर आ गया। उसका चेहरा फूल के समान खिला हुआ था। उस दिन सुखदेव केवल के साथ बेधड़क बातें करने लगा। बात पहले केवल ने चलायी क्योंकि उसका हृदय भूसे के तिनकों की तरह बिखर गया था।

"बाई ! हमने रट तो लगा रखी है इनकलाब की . . .! इनकलाब लाना है . . .इनकलाब लाना है . . .इनकलाब . . .! कभी यह तो बताया नहीं कि इनकलाब लायेंगे कैसे ...?"

सुखदेव उसकी बात सुन कर मूंछों में हंस पड़ा। केवल के चरमराये चेहरे की ओर देख कर और उसके कंधे पर हाथ रख कर किसी भेद-भरी आवाज में कहने लगा, "फक्करा! अगर तू यह कहे कि तेरे मुंह में कौर कोई और डाल जाय . . .तो बात ऐसी तो है नहीं—निवाला तो स्वयं ही मुंह में डालना पड़ेगा !"

"नहीं ! मैंने कब ऐसे कहा है . . .! कहा है भला कभी . . .? . ..हैं ! मैं तो यह पूछता हूं कि यह सब होगा कैसे . . .?"

"तू देखता जा, जड़ी-जैलदारी का सारा गंद हम साफ कर देंगे। अगर कोई चड़ा-चौधरी रह गया तो हमें पकड़ लेना वैसे बेशक . . .!" कभी-कभार सुखदेव स्वयं इस 'इकहरी चोट' के परिणामों से उदास हो जाता था। भागते-दौड़ते उसने कभी दिल छोटा नहीं किया था। मकई-कमाद के चीर खाते-खाते भी उसका मन कुंठित नहीं हुआ था। सारी हिम्मत देख कर, संपूर्ण योजना उसके अंदर साकार हो जाती। "कोई बात नहीं . . .!" थोड़ी देर खामोश रहने के बाद वह फिर धीरे-धीरे बोलने लगा, "ऐसी खींच-तान तो होती ही है। एक बार डोरी हाथ आ जाय, फिर अपने साथ घोड़े भी नहीं मिल सकते ! . . .जो अब बढ़के मार रहे हैं, वे ढूंढने पर भी नहीं मिलेंगे !"

रोटी खा कर वे बिस्तर बिछा कर लेट गये। इस बार सुखदेव केवल को पूरी तरह मजबूत कर गया। तड़के उठ कर केवल ने पशुओं को चारा डाला। फिर दूसरी बार की चाय पी कर वह बाहर जंगल-पानी के लिए चला गया। वर्षा होने से चरी-कपास और मकई आदि के धुले पत्ते सुनहरी लग रहे थे। ठंडी हवा और चारों ओर खेत ही खेत देखकर केवल का दिल अनार की भांति खिल उठा। आज उसने बहुतों को हंसती हुई आंखों से बुलाया। उसे इस प्रकार गुलाब के समान खुश-खुश देख कर, सिर पर चरी का गट्ठा रखे आ रहे नगिंदर ने मजाक किया।

"क्या बात है। बहुत खुश है आज . . .लगता है कि धन-दौलत का कोई खजाना हाथ लग गया है।"

"जब धन-दौलत का खजाना हाथ लगेगा, तेरे-मेरे हिस्से बराबर होंगे।"

नगिंदर सिर पर वजन होने के कारण ज्यादा देर तक खड़ा न रह सका। केवल उसके जरी के गट्ठे में पैदा हो रही सरसराहट को सुनता रहा और उसे पीछे से देखता रहा। जब

उसने बड़े रास्ते का मोड़ काटा, तो सामने से जैलदार कंधे पर बदूंक रखे आता दिखायी दिया। उसे देख कर केवल के हाथ सख्त हो गये। उसने दिल ही दिल में खुश होते हुए कहा, "अब तेरे थोड़े ही दिन बचे हैं . . .कंधे वाली यह बंदूक तो कंधे पर ही धरी रह जायगी।"

जैलदार उस पर नजर टिकाये, उसे गौर से देखता आ रहा था। केवल उसकी ओर घृणा-भरी दृष्टि से देख रहा था। राइफल के कुंदे को हाथ में थामे जैलदार केवल के पास आ कर खड़ा हो गया।

"मैंने तेरे साथ एक बात करनी है !"

केवल ने पैर मलते हुए आंखें चढ़ा कर कहा, "तो कर।"

"तेरे पास रात को बंदे क्या करने आते हैं?"

केवल ने आंखें घुमा कर, जैलदार के मोटे चरबी-चढ़े चेहरे की ओर देखते हुए, आवाज को जरा कड़ी कर के कहा. "क्यों तुझे इससे क्या डर लग रहा है?"

"डर वालो को डर भी हो गया होगा, परंतु तू सरकार के दुश्मनों को पनाह देता है। पता है इसकी सजा क्या होगी?"

"क्या होगी . . .? केवल ने उसे घूरा और फिर रुक-रुक कर कहा, "अगर मेरे पास बंदे आते हैं . . .तो किसी के पेट में दर्द क्यों उठता है . . .? हमें उनका भी पता है... जहां सारा कंजरखाना होता है . . .?" केवल जैलदार से डरा नहीं। पर बात नंगी हो जाने से उसका दिल हताश जरूर हो गया।

"पेट में दर्द तो न हो . . .पर हमें खतरा है !"

"फिर मैं क्या करूं? खतरा है तो रहे।" केवल ने ऐसे मुंह मोड़ लिया जैसे उसे जैलदार की जरा भी परवाह न हो। जैलदार की नकल करते हुए केवल ने गरज कर कहा, " . . . अब तो खतरा है। . . .जिन्होंने चाम की चलायी है . . .। अब लगेगा उनकी . . .को सेंक!"

"अच्छा !" जैलदार ने बिल्ले जैसी आंखें बाहर निकालीं और क्रोध में आ कर कंधे पर रखी राइफल की बट को खींच कर हिलाया। उसकी कतरी हुई झाड़ी-सी मूंछें हिलीं और जैलदार ने मोटे होंठों को दरार की तरह खोलते हुए 'हुं!' कहा।

और चौथे दिन मुंह-अंधेरे पुलिस ने केवल के घर को घेर लिया। और जब जीप केवल को लेकर गांव से बाहर निकली, तो अमरो का बुरा हाल था।

27

केवल को पुलिस पकड़ कर ले गयी। उसके पीछे अमरो और बच्चों का बुरा हाल था। केवल के पीछे जाने वाला भी कौन था? एक-दो की आरजू-मिन्नतें भी कीं, लेकिन उन दिनों सभी डरे हुए थे। अजैब भला किस लायक था! उससे जितना बन पड़ा, दौड़ धूप की, लेकिन बना कुछ नहीं। जितने दिन केवल घर न आया, उतने दिन अमरो के चूल्हे आग न जली। और फिर एक दिन गिरता-पड़ता केवल घर आ गया। अमरो उसकी हालत देखकर एकदम से घबरा गयी। केवल आते ही चारपाई पर गिर पड़ा। उसका शरीर भट्‌टी में पड़े फाल की तरह तपा हुआ था। मुंह से थोड़ी-थोड़ी देर बाद 'हाय-हाय' की टूटी-सी आवाज निकलती। पुलिस ने उसके शरीर का अंग-अंग तोड़ दिया था। पूरे सात रोज उससे सुखदेव और उसके साथियों के बारे में पूछताछ करते रहे, लेकिन वह बस यही कहता रहा, "मुझे उनके बारे में कुछ पता नहीं . . .मुझे नहीं मालूम वे कहां हैं . . .? " तीन दिन उसकी खूब पिटाई की गयी। थाने में कोलाहल मचा हुआ था। थानेदार कहता था कि नकसलबाड़ी इसकी हड्डियों में से निकालूंगा। तीन हाथ लंबी बेंत से, उसके सारे शरीर की उन्होंने पानी छिड़क-छिड़क कर खूब पिटाई की। उसे उलटा लटकाया। पैरों के तलवों पर बेंत मारे। "बिल्लू के बापू! तेरा तो बुरा हाल हुआ है!"

"कुछ नहीं।" केवल ने बड़ी कठिनाई से होंठ हिलाये, "मुझे कुछ खाने के लिए दे! जालिमों ने मेरी हड्डियां पीस डाली हैं . . . !"

अमरो दूध गरम करके लायी। केवल ने एक-एक घूंट करके आधा गिलास पी लिया। उसके अंदर से टीसें उठ रही थीं । हाथ लगाने से शरीर में जलन होती थी। सारा शरीर सूजा हुआ था। सारी रात अमरो ईंट-रोड़े से सेंक करती रही। जब कभी क्षण भर के लिए भी सेंक करना बंद कर देती, केवल की कराह और ऊंची हो जाती।

"मैं जैब को बुला लाऊं !" अमरो का ख्याल था, वह गांव के हकीम को ले आयगा।

"रहने दे ! उसे आधी रात को क्यों तकलीफ दें? हाय ओ मेरे रब्बा। . . .बहन के यारों ने जरा तरस नहीं किया। . . .तू सेंक करती रह . . .थोड़ा आराम लगता है !" करवट लेते भी केवल के अंदर से आग निकलती थी। अमरो चूल्हे में से ईंट-रोड़ा निकालने चली गयी। रोड़े को ठंडा करते जरा देर लग गयी। केवल ने कराहते हुए अंदर से आवाज दी, "अमरो ! अरी अमरो ! . . .मेरी जान निकल रही है री !"

"इस तरह तेरी रात कैसे बीतेगी? मैं जैब को बुला लाती हूं, वह कोई उपाय-उपचार कर ही लेगा . . .!"

"नहीं, वह कौन-सा सुखी है। तड़के अपने-आप उसे पता लग जायगा . . .निकल जाय तुम्हारी कुंवारी रे . . . और कुत्ती के पुत्रो ! . . .गरीब की हड्डियां पीस कर अब तुमअपने उन बापों को पकड़ लोगे क्या . . .?"

सारी रात केवल कराहता रहा और सारी रात अमरो उसके सिरहाने बैठी ईंटों से सेंक

करती रही। तड़के बंतो को पता लगा तो वह दौड़ी आयी। केवल को मछली की तरह तड़पते देखकर उसका मुंह खुला का खुला रह गया। सूरज निकलने तक केवल का शरीर भट्टी की भांति जलने लगा था, जैसे उसे जोर का ज्वर हो। लीखे और अजैब को बंतो बुला लायी। पंजाब कौर की निगाह कमजोर हो गयी थी। फिर भी वह रोती-पीटती आ गयी। वह सारी उमर अपने इस बेटे के दुख से तड़पती रही थी।

"तू रो न पगली ! इसकी खैर मना।" बंतो ने रोती-चिल्लाती, आंसू बहाती अमरो को कंधे से पकड़ कर सांत्वना देते हुए समझाया और कहा, "तू उस सच्चे पा-छाह के आगे हाथ जोड़। बाई, रब्बा तू मुझ गरीबनी को, 'जून से बेजून' न कर। बख्श मुझे !"

"इसे घर में आराम नहीं आना, बाई।" लीखे ने केवल के लाल-सुर्ख शरीर की ओर देखते हुए अजैब से कहा।

"मैं भी यही सोचता हूं।"

"मैं रेहड़ी जोत कर लाता हूं!" लीखा यह कह कर बाहर चला गया। उसके अपने बैल इतने तगड़े नहीं थे। उसने पड़ोसिनों की रेहड़ी और बैल मांगे। दो आदमियों ने केवल की चारपाई उठा कर रेहड़ी पर रख दी। अमरो ने सौ का नोट ला कर अजैब को पकड़ा दिया। अजैब ने नोट की ओर देखते हुए और फिर लीखे की तरफ देख कर नोट जेब में डाल लिया। उसने लीखे के कान में कुछ कहा, तो लीखा सुनते ही अपने घर को भागा। वह सत्तर-अस्सी रुपये ले आया। इतने ही अजैब लाया। अमरो ने साथ ही मंडी जाने की जिद की, लेकिन उसे सभी ने घर ही रहने की सलाह दी। बंतो भी उनके साथ रेहड़ी में बैठ गयी। दोपहर ढलते-ढलते वे मंडी के सरकारी अस्पताल में पहुंच गये। छोटे कद का ऐनकों वाला डाक्टर मरीजों को देखता फिर रहा था। दो-तीन घंटे तो डाक्टर ने उनकी बात ही न पूछी। अजैब उसके पीछे-पीछे हाथ जोड़े फिर रहा था।

केवल के साथ वाले बिस्तर पर एक सुंदर युवक बुरी तरह जख्मी और कटा हुआ पड़ा था। वह अपने गांव में पट्टीदारों की लड़ाई की चपेट में आ गया था। चारपाई के पैंताने बैठा उसका अधेड़ आयु का बाप डाक्टरों के बड़े पेट और खुले मुंह की बात कर रहा था।

"भाई ! तुम इसका पेट भरो, तो तुम्हारी बात सुनेगा। वैसे तो यह नजदीक भी नहीं फटकेगा। फटके भी कैसे? देखते नहीं हो, खा-खा कर सालों ने पेट कैसे बढ़ाये हुए हैं। यह सब हमारे सिर पर हैं। अरे पगले, ये तो जोंकें हैं, जोंकें, कतरा भर खून नहीं छोड़तीं आदमी के शरीर में !" और पागलों की तरह सिर धुनता वह फिर बोलने लगा, "मुसीबत साली बहुत बुरी होती है। यहां आना पड़ता है, आओ तो आदमी से हाथ धोना पड़ता है।" और उसने सफेद हो रही मूंछों पर हाथ फेरते हुए एक लंबी आह भरी, "कुछ नहीं, जाट की जिंदगी बहुत बुरी है। एक यह नर्स-कंपाउंडर हैं। तौबा-तौबा . . .। पांच-दस के बगैर बात ही नहीं करते। लेने को तो, किसी से खोटा पैसा तक नहीं मिलता। जब भी रगड़ा लगता है तो कूकों के डोलू की तरह, मांजे हम लोग ही जाते हैं।" उसकी कड़ी और खरी बातें सुन कर परली चारपाई पर पड़ा, दुखती हुई टांग वाला मरीज ही-ही करके हंस पड़ा, परंतु बुजुर्ग उसी तरह गंभीर बना बैठा रहा।

और उस सताये हुए बुजुर्ग के कहने पर अजैब ने मौका देखकर कुछ नोट डाक्टर की जेब में डाल दिये और हाथ जोड़ते हुए, उदास-सा मुह बना कर कहा—

"डाक्टर साहब जी ! मेरे भाई को बचा लो। अगर गौर न किया गया, तो वह ज्यादा समय नहीं काट सकेगा।"

"चलो, चलो !" कहते हुए मुस्कराता हुआ डाक्टर हाथ से ऐनकें ठीक करता हुआ, उसके साथ चल पड़ा। डाक्टर ने केवल के शरीर का परीक्षण किया। टांग के अंदर की हड्डी टूट गयी थी और बांहें भी नाकारा हो गयी थीं। एक-दो चोटें सिर में भी थीं। उसकी टांग का आपरेशन किया गया। अब समस्या यह खड़ी हो गयी थी कि डाक्टर केस पुलिस में दर्ज कराना चाहता था, परंतु अजैब और उसके साथी पुलिस से डरते थे। हारकर फिर डाक्टर की जेब गरम की। उधर केवल बहुत तकलीफ में था। उसे यूं महसूस हो रहा था, जैसे उसकी छाती में सांस रुकी हुई हो। करवट लेते समय भी अंदर से चीरती हुई टीस उठती थी। दवा-दारू और पट्टी कराने के लिए कंपाउंडर नजदीक नहीं फटकता था। वह लिये-दिये बगैर बात तक नहीं करता था। अजैब उसके पीछे 'री-रीं' करता फिरता रहा। एक दिन तंग आकर अजैब ने कह ही दिया, "छोटे डाक्टर साहब जी ! क्यों बदले ले रहे हो जी!"

"तू सूखे-सूखे मेरी खाल उतारना चाहता है?" कंपाउंडर ने उसकी ओर ध्यान दिये बिना ही कहा। अजैब समझ गया। लेकिन उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करे। कंपाउंडर उसे चुप देखकर मुस्कराया और फिर अजैब के कंधे पर हाथ रख कर कहने लगा—

"देख भई, यहां मरीज कितने हैं . . .? है फुरसत कहीं? बारी नंबर से ही आयेगी। है कि नहीं? . . .क्या चाहता है?"

"तब तक हमारे मरीज का . . .।" अजैब की आवाज में एक नम्र अनुरोध था।

"तो फिर तू ऐसा कर . . .अगर कोई पांच दस का . . .। तो तेरी बारी पहले हो जायगी।"

अजैब की आंखों में खून उतर आया और उसके मुंह से एक तीखी सी बात निकल गयी, "पहले यार, उसका पेट भरा है . . .अब तू हर रोज . . ." वह कुछ और न कह सका, सोचा कहीं डाक्टर नाराज न हो जाय। "तू ही बता ! हम किधर जायें। अस्पताल के अंदर आने नहीं देते आदमी को, गिद्धों की तरह चिपक पहले जाते हो।"

"तो फिर उसी से पट्टी भी करा ले।"

"हद हो गयी यार . . .। ऐसा तो कहीं नहीं सुना है। यह तो कपड़े उतारने वाली बात है ! जिस किसी से भी बात करो। सीधे जेब में हाथ डालता है।"

कंपाउंडर ने उसे ठंडे स्वर में कहा, " बिच्छू की तरह ज्यादा न उछल, अगर तुझे काम करना है, तो सीधी बात कर !"

और उसे बेशरम सी हंसी हंसते हुए उंगली दिखाते हुए संकेत किया। जले-भुने अजैब ने जेब में से पांच का एक नोट निकाल कर उसके हाथ में रख दिया।

दिन गुजरते गये, लेकिन केवल के अंदर लगी चोटों को आराम नहीं पहुंचा। इर्द-गिर्द शोर-गुल और रोगियों का विलाप बना रहता। उसे खीझ होती, गुस्सा आता। मरीजों के वार्ड का हाल बेहद बुरा था। भंगी चौथे दिन आकर कूड़ा साफ करता था। चारों ओर

लिजलिजा-सा वातावरण था। केवल का जैसे दम घुटता था। हर समय के रोगी और सोगी माहौल में केवल के मुंह की रंगत काली तथा चमड़ी मटमैली हो गयी। उसका शरीर भी पहले के मुकाबले मुरझा गया था। गांव से हर रोज कोई न कोई खबर लेने आता। एक दिन नौहणा मैले कपड़ों में टांगें घसीटता आकर चुपचाप उसकी चारपाई पर बैठ गया। कितनी ही देर तक बैठा वह उसकी आंखें पोंछता रहा। केवल सूख-सड़ कर मुर्गी बने नौहणे की ओर निहारता रहा।

"नौहणे ! भाई, तू कोई बात कर !" बंतो ने नौहणे को कंधे से झंझोड़ कर कहा, "हमारी तरफ देख। हम कौन सुखी हैं। . . .और फिर हिम्मत हार कर कुछ बनता है भला ! सयाने कहते हैं, चोटें शूरवीरों को ही लगती हैं। डरपोक तो घर से बाहर नहीं निकलते हैं। हम रोयें क्यों? वाहेगुरु इस पर मेहर की नजर रखें। कोई बात नहीं, जख्म भरते देर नहीं लगती, हां ! और तू यह सोच। यह सब किस्मत का लिखा है, जो हम भोग रहे हैं !"

नौहणा सिर पर बांधी मैली पगड़ी के पल्ले से आंखें पोंछता रहा। उसके अंदर से सांसें आहें बन-बन कर उठती थी। केवल ने उसकी टांग पर हाथ रखते हुए, उसे चुप कराया। केवल को अपने हाथ देखकर बहुत ही हैरानी हुई। उसके हाथ कैसे हो गये थे, बिल्कुल पीले-जर्द ! थोड़ी देर तक नौहणा उसी तरह बैठा रहा, फिर किसी तरह धीमे से बोला, "बाई . . .अब तुझे आ . . . र . . .ा . . .म है?"

"आराम ही है . . .बाहर से तो कोई चोट, कोई जख्म नजर नहीं आता। मेरे सालों ने गुप्त मार से अंदर की हड्डियां तोड़ डाली हैं . . .कोई बात नहीं। मैं कोई मर तो नहीं जाऊंगा। गिन-गिन कर बदले लूंगा . . .साले मरे . . .!" नौहणे ने देखा, केवल के काले पड़ गये चेहरे और बुझी हुई आंखों में से खून टपक रहा था।

"तू हौसला रख केवला !"

"मैं ऐसे दिल नहीं छोटा करता, पर यहां मुझे अराम नहीं आयगा . . .यहां कोई बात तो पूछता नहीं . . .दवाई-दारू देना तो एक तरफ रहा।"

नौहणे के रहते केवल का मन खिला रहा। उसके जाने के बाद फिर वही 'सोगी भाव' उभर आये। अस्पताल से कवेल का जी ऊब गया था। वह घर जाने के लिये अधीर था। वह सोच रहा था कि वह घड़ी कब आयगी, जब वह बडूंदी पहुंचेगा।

बच्चों को देखने के लिए वह बहुत उत्कंठित था। डाक्टर ने छुट्टी देने में जरा भी आना-कानी न की। गांव आकर बच्चों को देखकर उसका अंदर-बाहर खिल उठा। मन बाग-बाग हो गया। उसने दोनों बच्चों को अपने पास बिठा लिया। उनके साथ 'छोटी-छोटी' बातें करता रहा। बच्चों के छोटे-छोटे हाथ और बांहें अपने कमजोर हाथों में लेकर देखता रहा। अंदर से न जाने क्या उठता, बच्चों की ओर टकटकी लगाकर देखता रहा। लड़का और लड़की उसे चारपाई पर पड़ा देखकर सहम गये थे। टुकर-टुकर उसकी तरफ ताक रहे थे। लोग खबर लेने आते रहे। केवल को लोगों पर खीझ चढ़ती, गुस्सा आता, जब वे घुमा-फिरा कर अजीब-अजीब सवाल पूछते। और फिर वे उसे और भी बुरे लगने लग जाते, जब वे अपने आपको सयाने और कई तो महासयाने भी दर्शाते। ऐसा जाहिर करते,

जैसे उन्होंने कभी कोई गलती ही नहीं की हो। कई तो अपनी डाक्टरी भी दिखाने लग जाते। उस वक्त केवल का जी करता कि उन सभी को गालियां देकर घर से बाहर निकाल दे, परंतु वह कुछ सोच कर खामोश हो जाता।

शाम को दिन ढले दीपो आ गयी। उसका चेहरा उतरा हुआ था। आंखों की पलकें भीगीं हुई थीं, जैसे रोती रही हो।

"तू अब स्वस्थ है?" पीढ़ा खींच कर चारपाई के बाजू पर हाथ रखकर, पास बैठते हुए उसने दुखी दिल से धीमी आवाज में पूछा। केवल की गयी-गुजरी हालत देखकर दीपो का मन रो पड़ा था।

"पहले से अच्छा हूं।" केवल के बोलों में बीमारों जैसा स्वर था।

"मुझे तो तभी से, न अंदर चैन है, न बाहर करार! . . .पागलों की तरह घूम रही हूं। वाहेगुरु ! यह क्या हो गया। तुझे क्या लेना था नकसलावादियों से। वे तो मुए खुद न जाने कहां जा छुपे, कहां खो गये, पर तेरी जान को मुसीबत डाल गये। कहते हैं, वे तो हैं ही लूट कर खाने वाले।"

"नहीं दीपो, ऐसे नहीं हैं वे ! सुखदेव भी उनके साथ है।"

"तभी तो तू फंसा है, अगर कामरेड न होता, तो फिर तुझ पर यह बिजली भला क्यों गिरती ! मारा तो तुझे कमबख्त रिश्तेदारी ने है। अब-उनसे कोई पूछे !" कहते हुए दीपो ने केवल की ओर टकटकी लगाकर देखा। उसके अंदर एक तूफान उठ खड़ा हुआ, और आंखों में खारा पानी भर गया।

"रो न दीपो! मैं इतनी जल्दी नहीं मरता।"

"हाय मैं मर जाऊं! तुझे परमात्मा का वास्ता है, ऐसी बात मुंह से न निकाल।" दीपो ने चुनरी के आंचल से आंखें पोंछते हुए कहा, "मैं तो तभी से परमात्मा के आगे दोनों वक्त हाथ जोड़ती हूं। ऐ सच्चे पातशाह हम गरीबों को मुसीबत में न डाल। इन नन्हें-नन्हें बच्चों पर ही रहम कर।" बच्चों और अमरो की ओर देखती हुई, सिर झुकाये दीपो कहती रही, "नहीं परमात्मा, नहीं ! ऐसा न करना। यह तो हम सभी का सहारा है। हाय मेरे भगवान!"

जाते समय दीपो ने अमरो को दिलासा दिया।

"कोई बात नहीं, मुसीबत बड़ों-बड़ों पर आती है। किस आदमी पर मुसीबत न आय वह तो फिर भगवान होगा। तू जी मजबूत कर। यूं हिम्मत हार कर क्या बनेगा? दुख-सुख बंदे के साथ ही होते हैं। हम तो चारों पहर सुख की कामना करते हैं फिर दुख कहां जायें? तू धीरज रख, हिम्मत कर, मैं जो कुछ करने लायक हूं, जरूर करूंगी। किसी चीज की जरूरत हो तो बिना संकोच बता।"

"नहीं सब टीक है।" अमरो बोली। उसकी आवाज भारी थी, "परमात्मा इसकी डोरी लंबी करे। और मैं कुछ नहीं मांगती।"

"तू 'उस' पर भरोसा रख। 'वही' करने वाला है सब कुछ। उसके हुक्म के बिना पत्ता भी नहीं हिलता। बंदा क्या है बेचारा।" और फिर दीपो ने केवल के पास जाते हुए उसे आहिस्ता से पूछा, 'पैसे-धेले की जरूरत है, तो मैं अभी दे जाती हूं।"

"अभी तो चल रहा है! किसी तरह चल जायगा। तू क्यों कष्ट करती है?" केवल ने बांखें पूरी खोल कर दीपो के मुरझाये हुए चेहरे की ओर देखा। पहले वाले मृग जैसे रूप-रंग का नाम निशान नहीं था। "रहने दे, कैलू नाराज होगा।"

"हो नाराज कैलू ! मुझे कौन-सा उससे मांगने हैं। अगर मैं आज तुझे सहारा न दूंगी, ता फिर किस समय दूंगी? पैसे कहीं साथ जायेंगे ! बंदा ही बंदे का दारू है।" धैर्य दिलाने वाली दो-चार और बातें करके दीपो अपने घर को चली गयी। उसके आने से केवल खुश-खुश दिखाई दे रहा था। उसे यह तसल्ली हो गयी थी कि वह इस दुनिया में अकेला नहीं है। उसके साथ 'दुख-सुख के भागी' और उसके 'अपने' तो हैं, जिनको देखकर उसके अंदर जान आ जाती थी। काला और गहरा स्याह अंधेरा भी अच्छा लगने लग जाता था। अब भी कई बार उसका दिल दहाड़ें मार-मार कर रो पड़ता था। सारी उमर ठोकरें खाते ही बीत गयी थी। कभी भी उसने इस विश्वास के साथ कदम नहीं उठाये थे कि उसके सामने सीधी-सपाट राह और रोशनी है। लेकिन वह इसलिए भी हैरान था कि इतने काले-स्याह अंधेरे में भी वह लड़खड़ाया नहीं था। हर पल, हर समय, उसका दिल अंधेरे को देखकर मचलता रहता था।

उस रात वह दीपो के बारे में ही सोचता रहा। उसे इस बात ही हैरानी भी होती रही कि वह औरत है या कोई देवी जिसने कभी कोई कमजोर बात नहीं की थी। विवाह के बाद उसका दीपो के साथ पहले जैसा गहरा संबंध नहीं रहा था।

दूसरे दिन दीपो ने मुंह-अंधेरे ही आकर पांच सौ रुपये अमरो को पकड़ा दिये और चुनरी के नीचे ढंका, देसी घी का डिब्बा निकाल कर देते हुए कहा—

"जब यह ठीक हो जायगा, तो मैं सब कुछ अपने मुंह से मांग कर ले जाऊंगी। तू इसे घी दे, इसके अंदर शक्ति आये. . .मैं और ले आऊंगी . . .घी बहुत है, कोई चिंता नहीं। . . . "

"दीपो, तू क्यों कष्ट करती है?" केवल का स्वर मोह में भीगा हुआ था।

"कष्ट काहे का !" कहते हुए दीपो ने उसके चेहरे के दिन-प्रतिदिन मंद पड़ रहे प्रकाश को देखा। उसका दिल जैसे डूबने लगा।

हर रोज सुबह-शाम दीपो केवल की खबर लेने आती। हौसला देने वाली छोटी-छोटी बातें करती रहती। केवल दिनों-दिन स्वस्थ होने लगा। चोटें चाहे, अंदर वैसे ही टीसें मारती थीं। लेकिन वह दांतों तले जीभ दबा कर उन्हें सहन करने का प्रयत्न करता था। पहले से दूध के दो घूंट ज्यादा पी लेता था। थोड़ा-बहुत खाना भी खाने लगा था। दीपो और अमरो देसी घी से उसकी टांगों और बांहों की मालिश करतीं। एक रोज केवल जैसे-तैसे कोशिश करके उठ कर बैठ गया। दर्द से उसका दिल व्याकुल हो रहा था। अंदर जब कुछ 'खटखट' सी होती, तो आंखों में अस्त होते सूरज की सी सुर्खी उतर आती और मुट्ठियां जैसे भिंच जाती।

एक शाम आकाश पर गहरे काले बादल देखकर केवल ने अमरो को अपनी चारपाई बरामदे के सिरे पर करने कें कहा। अमरो ने बंतो को बुला कर चारपाई उठाकर आंगन

के पास लाकर रख दी।

"तू चारपाई अंदर कर ले। यहां ठंड पड़ेगी।" बंतों ने उसके निकट आकर कहा।

"नहीं, मुझे बादल अच्छे लगते हैं।"

उसके चेहरे की मुस्कराहट देखकर अमरो और बंतो अंदर से खिल उठीं। बादल और गहरे होते गये। वे हल्के हल्के गरज रहे थे। चारों ओर घोर अंधकार और गर्द-गुबार फैल गया था। पुरवाई चल रही थी, जो ठंडी लग रही थी। चारों तरफ काली रात जैसा शोक देखकर, केवल के दिल पर छायी उदासी बढ़ती गयी। चोटों की पीड़ा जाग उठी। आंखों से आंसू टपकने लगे। उसने आंसू पोंछ लिये। अंधेरा और गहरा और काला होता देखकर, उसका दिल कांप उठा। अमरो ईंधन, गोबर और अन्य छोटी-मोटी चीजें संभालने में लगी थी। घोर काले अंधकार को देखकर केवल के अंदर टीसें उठने लगीं, हाथ-पांव झनझनाने लगे।

सहसा उसके मुंह से निकल गया, "सालो! मैं तो मर गया ! कोई बात नहीं। बदला लेकर ही छोडूंगा।" केवल ने दांत पीसे तो अमरो ने उसकी ओर देखा। उसके तने हुए चेहरे को देखकर वह डर गयी। पल भर के लिए देखती रही। ऐन उसी समय बादल जोर से गरजे। और जरा दूर, दीने जुलाहे के घर के ऊपर नीली तार सी बिजली उठी। बिजली के प्रकाश में केवल को शीशम का वृक्ष हवा में हिलता हुआ दिखायी दिया। वर्षा की बूंदें और जोर से पड़ने लगीं। अमरो ने भागकर केवल को खेस दिया और बारिश को देखने लगी। मिनटों में ही, सेहन में इतना पानी इकट्ठा हो गया, जैसे किसी ने नहर का बांध तोड़ दिया हो।

केवल का शरीर मालिश और खुराक से भरा-भरा सा लगने लगा था। सुर्खी की बजाय चेहरे का रंग गहरा सा हो गया था। दिल में कई बार उसे दर्द का दौरा-सा आता और वह दांत पीसता। जब अकेला होता, घर उसे काटने को आता। ऊंची-ऊंची दीवारें उसके अंदर उदासी भर देतीं। रात के समय कोठे पर पहले की तरह बिल्लियां रोतीं। अमरो उन्हें गालियां देती, उन पर डंडे चलाती। गली में कुत्ते रोते या फिर गांव के बाहर 'हड्डांरोड़ी'[1] में मुंह ऊपर उठा-उठा कर चीखते-चिल्लाते लंबी आवाज में लगातार 'हऊ-ऊहऊ-ऊ'करते। अमरो चोट खाई हुई नागिन की तरह बल खाती। लेकिन उसका वश न चलता। वह अपने आपको असहाय पाती। दीने के मुर्गे सूर्यास्त होते ही, देखा-देखी बांग देने लग जाते, तो अमरो उन्हें खूब गालियां देती। मन ही मन कुढ़ती और जुलाही से कहती, "तुमने यह क्या कूड़ा बना रखा है? देखो तो सारा सेहन बीठों से भरा पड़ा है।" जुलाही कोई जवाब न देती। दिल में कहती, 'अब मुर्गे-मुर्गियों, कुत्ते-बिल्लियों का रोना रोकती फिरती है। तब क्यों न खसम को समझाया कि गुंडों-बदमाशों वाले काम न करे।' लेकिन इसके बांवजूद केवल की तबीयत ज्यादा ठीक नहीं थी। गांव का वैद्य तीसरे दिन आ कर दवाई-दारू दे जाता। वैसे केवल मंडी वाले सरकारी डाक्टर से लायी गयी दवाई भी खाता था।

---

1. मरने के बाद मवेशियों के शव रखने का स्थान

दिन गुजरते गये। सीलन के समान सोग सभी को घेरे हुए था। ऐसे ही, एक दोपहर केवल ने अमरो को बंतो से, शीशम के वृक्ष के नीचे बुलाकर बातें करते सुना। केवल को उनके चेहरे हैरान-परेशान दिखायी दिये। उनकी आवाजों में उनकी चढ़ी हुई सांसें सुनायी दीं। दूर से कुछ स्त्रियों के रोने की आवाजें भी आ रही थीं, जैसे कोई मर गया हो, तभी अमरो तेजी से आयी और अंदर से चादर बदल कर, "अभी आती हूं।" कहती हुई और केवल की ओर एक बार देखकर बंतो के साथ चली गयी। बच्चे बाहर खेलने गये हुए थे। तभी केवल को जैसे कुछ होने लगा। उसे संदेह भी हुआ कि क्या बात हो गयी? उसका दिल घबराने लगा। 'कौन मर गया' उसने सोचा। मृत्यु के नाम से केवल को कंपकंपी छूट जाती थी।

घंटा-डेढ़ घंटा बाद अमरो वापस आयी। केवल को उसकी आंखें और ही तरह की लगीं। और चेहरा भी रोया-रोया सा लगा।

"क्या बात है, कौन मर गया?" केवल ने पूछा।

अमरो ने केवल की आवाज सुनी तो वह कांप गयी। उसे केवल का चेहरा उतरा हुआ लगा।

"कोई तो नहीं।" अमरो उसकी ओर देख रही थी, "काम से गयी थी।"

"काम ! ये औरतें किसके घर रो रही हैं?"

अमरो चुप लगा गयी।

"तू बताती क्यों नहीं?" जब केवल ने जरा गिले से पूछा तो उसके जख्म अंदर से टीस-टीस उटे। शरीर को ज्वर सा आ गया।

"अगर मेरे चोटें लगी हैं तो क्या गांव की खबरें भी मुझसे छुपा कर रखनी हैं?"

अमरो ने फिर केवल की ओर देखा। केवल का चेहरा लाल हो रहा था। उसे गरज कर बोलते देखकर अमरो को कुछ हौसला भी हुआ। अमरो काफी देर तक खामोश खड़ी रही। केवल अभी भी कुछ कह रहा था। मगर उसके कानों में सायं सायं हो रही थी। उसका सिर चकरा रहा था। उसके मुंह से अनायास ही निकल गया।

"जुगेड़ियों से . . .बुरी खबर आयी है।"

"हैं। . . ." केवल एकदम तेजी से बोल उठा। इसके अलावा उसके मुंह से कुछ भी न निकला। उसके गले और आंखों में जैसे भार बहुत बढ़ गया हो। अमरो नजरें नीचे किये चुपचाप खड़ी रही। केवल में आगे पूछने की हिम्मत ही नहीं रही। 'टुकर-टुकर' कच्ची दीवार को घूरता रहा। तभी अमरो की भर्रायी हुई आवाज उसके कानों में पड़ी। "कहते हैं कि पुलिस से लड़ता हुआ मारा गया। कल अंतिम संस्कार किया है।"

केवल की आंखों से अश्रु-धारा बह निकली। और घुटनों में सिर देते हुए, उसके मुंह से एक जोरदार कराह निकली। उसकी आंखों से कितनी ही देर तक टप-टप आंसू गिरते रहे।

रात को उसका रोटी खाने को दिल नहीं किया। दूध के दो घूंट दीपो जबरदस्ती पिला गयी। दीपो उसे सांत्वना देती रही, ढांढ़स बंधाती रही, परंतु उसने उसकी हालत देखकर

जवाब में कुछ न कहा। काली स्याह रात से उसे डर लगता रहा। उसने रात को, एक दो बार अमरो को जगाया भी।

"क्या बात है?" अमरो ने केवल के पास बैठते हुए पूछा, "दर्द हो रहा है कहीं?

"नहीं, तू मेरे पास बैठी रह।"

रात के स्याह काले अंधेरे में, शीशम का वृक्ष उसे राक्षस जैसा लगा और वह कांप उठा, जैसे वह किसी अंधेरी खाई में गिर रहा हो। एक बार फिर वह सहसा ही रो पड़ा। अमरो औरतों वाले दिलासे देती रही।

"तू अपनी देह की ओर देख, इस तरह तो . . .।"

"मैं क्या करूं . . .अमरो? . . .मुझे हर तरफ अंधकार ही अंधकार दिखाई देता है!" केवल के अंदर, न जाने कितनी आहें, कितनी सिसकियां दबी पड़ी थीं।

दो-चार दिन और बीत गये। बीच-बीच में अमरो उधर जाती। मातम पर बैठने दूसरी स्त्रियां आती थीं। पीछे अकेला केवल अजीब-अजीब ख्यालों में खोया पड़ा रहता। कभी रो पड़ता, कभी सोच में पड़ जाता। पहले तो उसका जी टहक पड़ता था, लेकिन अब तो, उस दिन से ही उदासी गहरी और और गहरी होती जा रही थी। 'जुगेड़ी' मातम भी कर आये।

केवल का शरीर देखने वाले को स्वस्थ लगता। चेहरे का रंग भी पहले से लाल लगता था। दीपो आती और देर रात तक हौसले वाली बातें करती रहती। उस दिन बंतो और दीपो दोनों ही गहरा अंधेरा होने तक बैठी रहीं। केवल उस रात थोड़ी खुशगवार बातें करने लगा था, लेकिन आधी रात को उसने अमरो को जगाया। वह चारपाई पर तड़प रहा था।

"मे . . .र . . .ी . . .जान . . .नि . . .क . . .ल . . .र . . .ही . . .है। अजैब को बुला।जल्दी ही मुझे मंडी ले चले।" केवल को ऐसा महसूस हो रहा था, जैसे उसके अंदर तेल की तरह कुछ खौल रहा है।

"तुझे घी डाल कर दूध दूं।" अमरो के जैसे होश उड़ गये।

"नहीं, तू जैब को बुला?"

अजैब को आवाज दे कर, अमरो ने दूध गरम करके जबरदस्ती दो-चार घूंट उसे पिला दिये। अजैब उसी वक्त उसे रेहड़ी में डाल कर ले गया। अमरो भी साथ चल दी। फासला चाहे थोड़ा ही था, लेकिन चरचराती-हचकाती रेहड़ी ने दो-अढ़ाई घंटे लगा दिये। हिचकोलों से केवल का बुरा हाल हो रहा था। अमरो पल-पल बाद उसके शरीर को हाथ लगा कर देखती, शरीर पोला-पोला सा लग रहा था।

जैसे वे रेहड़ी ले कर गये थे, उसी तरह तीसरे दिन वापस आ गये। घर में विलाप शुरू हो गया। लेकिन अमरो पत्थर की तरह चुप थी। जब उन्होंने केवल को नीचे उतार कर चारपाई पर डाला, तब लाश दुर्गंध मार रही थी। डाक्टर ने भी बताया था कि उसके अंदर मवाद पड़ गयी थी। सभी बर्फ की तरह सफेद हुए पड़े थे और चुपचाप थे। अमरो सारे रास्ते रोयी नहीं थी। लेकिन जब दोनों बच्चों को उसने गोदी में लिया, तो अमरो की चीखें निकल गयीं। उसने इतनी ऊची-ऊंची दहाड़ें मारीं कि गांव की दीवारें तक हिल गयीं।

दो-तीन महीने तो लोगों को इस बात की आशंका रही कि अमरो कब घर-बार बेच कर अपनी राह लेती है। उसका सुर्ख-सुर्ख रंग भी गांव की गलियों, मोड़ों पर,चौपालों में चर्चा का विषय बना हुआ था। हर नये दिन लोगों की दृष्टि केवल के घर की ओर जाती। आते-जाते लोग घर में झांक कर देखते कि अंदर कौन बोल रहा है। पर उन्हें केवल के घर पर कभी एक कौआ तक दिखाई नहीं दिया। लोग इस प्रतीक्षा में थे कि शीशम के वृक्ष वाले घर में से, कब गहरा काला धुआं बगूला बन कर उठता है। कई बार अमरो के बारे में तरह-तरह की दंतकथाएं छिड़ीं।लेकिन इसमें से भी कुछ न मिला तो लोग अपना-सा मुंह लेकर रह गये थे। इसी तरह छह-सात महीने बीत गये। अमरो बच्चों को संभालती रही। घर-बाहर का काम वह मर्दों की तरह करने लगी थी। बैल-गाड़ी जोत कर खेत को जाती तो उंगलियां उठाने वाले उसकी जूती को भी याद न रहते। उसे यह ख्याल न जाने क्यों आया, पर वह बना-बनाया 'जुगाड़' उसी तरह बनाये रखना चाहती थी। फिर भी इस अंधी-अंधेरी में मीके बदमाश का नाम एक चिंगारी की तरह चमकने लगा था। गांव के छोकरे मजाक में उससे पूछते तो उत्तर में मीका अपनी काजल लगी आंखें मटकाता हुआ और तीखी काटवाली मूंछो पर हाथ फेरता हुआ रहस्यमय हंसी हंसता। लोगों को सच लगता, जैसे मीके के मनकी इच्छाएं शीशम के नये निकले पत्तों से छेड़छाड़ कर रही हों। जहां कहीं भी चार आदमी जुड़ बैठते, इसी बात का जिक्र छिड़ जाता। कुछ तपिश मीके की रहस्यमय हंसी ने बढ़ा दी थी। बहुतों ने मीके को शीशम के वृक्ष वाले घर के चक्कर काटते भी देखा। लेकिन एक रात खा-पी कर लोग अभी लेटने ही लगे थे कि शीशम वाले घर में से अमरो की तेज-तीखी आवाज गरजती-दहाड़ती सुनाई दी।

" . . .अब भाग क्यों रहा है? जरा रुकता तो सही . . . अगर मेरे हाथ देखने थे अगर लड़की का रिश्ता करने आया था . . .। तो रुपया हाथ पर रख कर जाता।. . . मेरे बाप के साले . . .! मेरे सामने तो आ जरा, चीर कर दो टुकड़े न कर दिये तो. . . यह न सोचना कि केवल मर गया . . .। ये बेटे-बेटियां केवल के ही हैं। गिन-गिन कर सारे बदले लेंगे। कंजरो . . .कमबख्तों . . .कंजरो . . . । तुम्हारे ख्याल में, केवल को मार कर उसका 'अंश' खत्म कर दिया गया है ! . . . उसके पुत्र-भतीजे सब केवल ही हैं। बहुतेरे जमाई बन जायेंगे . . .। तुम्हारे नये खसम ।"

और फिर शोर-शराबे की छोटी-छोटी, हल्की-हल्की आवाजें सुनायी दीं, जैसे बंतो उसे शांत कर रही हो। लेकिन अमरो का बोल चढ़ते हुए सूरज की लाली की तरह दहक रहा था।

मुद्रित : मॉडर्न प्रिन्टर्स, के-30 नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032